नाथूराम प्रेमी मंत्री
माणिकचन्द दि० जैनग्रन्थमालासमिति,
हीराबाग, गिरगांव-बम्बई।



मुद्रक—
चिंतामणि सखाराम देवळे,
बम्बईवैभव प्रेस सैन्डहर्स्ट रोड,
बम्बई।

ग्रन्थकर्तॄणां परिचय ।

मूलसंघ अर्थात् दिगम्बरसम्प्रदायकी चार शाखायें हैं—नन्दि, सिंह, सेन और देव। इन शाखाओंकी भी प्रतिशाखायें हैं, जो गणगच्छादि नामोंसे प्रसिद्ध हैं। नन्दिसंघमें जो कई गणगच्छादि हैं उनमेंसे एक देशीय गण भी है। त्रिलोकसारके कर्ता महामना नेमिचन्द्र इसी देशीय गणमें हुए हैं। यह गण कर्नाटकमें बहुत ही प्रसिद्ध हुआ है और इसमें बहुत बड़े बड़े विद्वान् हुए हैं। इस गणके बीसों विद्वान् 'सिद्धान्तचक्रवर्ती' की पदवीसे विभूषित हुए हैं। आचार्य नेमिचन्द्रको भी यह महती पदवी प्राप्त थी। इनकी गुरुपरम्पराका पता आचार्य गुणनन्दिसे लगता है। गुणनन्दिके शिष्य विबुधगुणनन्दि, विबुधगुणनन्दिके अभयनन्दि और उनके वीरनन्दि। यथा—

बभूव भव्याम्बुजपद्मबन्धुः पतिर्मुनीनां गणभृत्समानः ।
सदग्रणीर्देशिगणाग्रगण्यो गुणाकरः श्रीगुणनन्दिनामा ॥

गुणग्रामाम्भोधेः सुकृतवसतेर्मित्रमहसा-
मसाध्यं यस्यासीन्न किमपि महीशासितुरिव ।
स तच्छिष्यो ज्येष्ठः शिशिरकरसौम्यः समभवत्
प्रविख्यातो नाम्ना विबुधगुणनन्दीति भुवने ॥ २ ॥

मुनिजननुतपादः प्रास्तमिथ्याप्रवादः
सकलगुणसमृद्धस्तस्य शिष्यः प्रसिद्धः ।
अभवदभयनन्दी जैनधर्माभिनन्दी
स्वमहिमजितसिन्धुर्भव्यलोकैकबन्धुः ॥ ३ ॥

भव्याम्भोजविबोधनोद्यतमतेर्भास्वत्समानत्विषः
शिष्यस्तस्य गुणाकरस्य सुधियः श्रीवीरनन्दीत्यभूत् ।
स्वाधीनाखिलवाङ्मयस्य भुवनप्रख्यातकीर्तेः सतां
संसत्सु व्यजयन्त यस्य जयिनो वाचः कुतर्काङ्कुशाः ॥

—चन्द्रप्रभचरित

[illegible]

इदि णेमिचंदमुणिणा अप्पसुदेणभयणंदिवच्छेण ।
रइयो तिलोयसारो खमंतु तं बहुसुदाइरिया ॥

[illegible]

जस्स य पायपसायेणणंतसंसारजलहिमुत्तिण्णो ।
वीरिंदणंदिवच्छो णमामि तं अभयणंदिगुरुं ॥ ४३६ ॥

इससे स्पष्ट है कि [illegible] उन अभयनन्दि गुरुको नमस्कार था। इससे सिद्ध हुआ कि अभयनन्दि [illegible] की पुष्टि होती है, जिसका कि उल्लेख किया गया है।

इन्द्रनन्दि और वीरनन्दि बहुत बड़े विद्वान थे। यद्यपि अभयनन्दिके शिष्य होनेसे वे नेमिचन्द्रके गुरुभाई थे, तो भी उन्हें नेमिचन्द्रने अपने गुरुके समान भक्तिभावसे स्मरण किया है —

णमिऊण अभयणंदिं सुदसागरपारगिंदणंदिगुरुं ।
वरवीरणंदिणाहं पयडीणं पच्चयं वोच्छं ॥ ७८५ ॥

—कर्मकाण्ड अध्याय ६।

णमह गुणरयणभूसणसिद्धंतामियमहद्धिभवभावं ।
वरवीरणंदिचंदं णिम्मलगुणमिंदणंदिगुरुं ॥ ८९६ ॥

—कर्मकाण्ड अध्याय ८

वीरिंदणंदिवच्छेणप्पसुदेणभयणंदिसिस्सेण ।
दंसणचरित्तलद्धी सुसूयिया णेमिचंदेण ॥ ६४८ ॥

—लब्धिसार ।

कर्मकाण्डकी ३९६ वीं गाथामें नेमिचन्द्र स्वामी एक कनकनन्दि नामक आचार्यका भी उल्लेख करते हैं —

वर इंदणंदिगुरुणो पासे सोऊण सयलसिद्धंतं ।
सिरिकणयणंदिगुरुणा सत्तट्ठाणं समुद्दिट्ठं ॥

अर्थात्–श्रीकनकनन्दि गुरुने इन्द्रनन्दि गुरुके पास सारे सिद्धान्तोंको सुनकर सत्त्वस्थानका कथन किया ।

इन सब गाथाओंसे यह भी मालूम होता है कि अभयनन्दि, इन्द्रनन्दि, वीरनन्दि, कनकनन्दि और नेमिचन्द्र ये सब प्रायः एक ही समयमें हुए हैं। अब हमें यह देखना चाहिए कि इनका समय क्या है।

सुप्रसिद्ध एकीभाव स्तोत्रके कर्ता महाकवि वादिराजने अपना 'पार्श्वनाथ काव्य' शक संवत् ९४७ में सम्पूर्ण किया है* । इसके प्रारंभमें उन्होंने अपनेसे पूर्वके अनेक ग्रन्थकर्ताओंका स्तवन करते हुए लिखा है —

चन्द्रप्रभाभिसम्बद्धा रसपुष्टा मनःप्रियम् ।
कुमुद्वतीव नो धत्ते भारती वीरनन्दिनः ॥ ३० ॥

इस श्लोकमें महाकवि वीरनन्दिके चन्द्रप्रभचरितका स्पष्ट उल्लेख है। इससे मालूम होता है कि चन्द्रप्रभकाव्य शक संवत् ९४७ से पहले बन चुका था और इस लिए वीरनन्दि और नेमिचन्द्र आदिका समय भी शक संवत् ९४७ से पहले मानना होगा।

शाकाब्दे नगवार्धिरन्ध्रगणने संवत्सरे क्रोधने
मासे कार्तिकनाम्नि बुद्धिमहिते शुद्धे तृतीयादिने ।
सिंहे पाति जयादिके वसुमतीं जैनी कथेयं मया
निष्पत्तिं गमिता सती भवतु वः कल्याणनिष्पत्तये ॥

[illegible]

" श्री [illegible]
[illegible]
[illegible] सिंहनन्दिमुनीन्द्राभिनन्दितगंगवंशललाम [illegible] श्रीमद्राचमल्लदेव-
महीवल्लभमहामात्यपदविराजमान—रणरंगमल्लासहायपराक्रम-
गुणरत्नभूषण-सम्यक्त्वरत्ननिलयादिविविधगुणनामसमासादित-
कीर्तिकान्त श्रीमच्चामुण्डरायप्रश्नावतीर्ण—ग्रन्थानुसार [illegible]—'। इससे मालूम होता है कि [illegible] और [illegible] सार ग्रन्थ चामुण्डरायके प्रतिबोधके लिए अथवा उनके प्रश्नके उत्तर रूपमें लिखे गये थे। गोम्मटसार कर्मकाण्डके अन्तमें एक गाथा दी हुई है—

गोम्मटसुत्तल्लिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी।
सो राओ चिरकालं णामेण य वीरमत्तंडी॥

अर्थात् गोम्मटसूत्रके लिखनेके समय जिसने उसकी देशी (कर्नाटकी) वृत्ति बनाई, वह गोम्मटराय या चामुण्डराय चिरकाल तक जयवन्त हो। इससे मालूम होता है कि गोम्मटसारकी वह 'कर्नाटकी वृत्ति'—जिसके कि आधारसे केशववर्णीने संस्कृतटीका बनाई है—* नेमिचन्द्र स्वामीके ही समयमें बन चुकी थी। इन बातोंसे अच्छी तरह सिद्ध है कि नेमिचन्द्र और चामुण्डराय समकालीन व्यक्ति थे।

---

* नेमिचन्द्रं जिनं नत्वा सिद्धं श्रीज्ञानभूषणम्।
वृत्तिं गोम्मटसारस्य कुर्वे कर्णाटवृत्तितः॥

ये ' चामुण्डराय ' गंगवंशीय राजा राचमल्लके प्रधानमंत्री और सेनापति थे। राचमल्लके भाई रक्कस गंगराजने शक संवत् ९०६ से ९२१ तक राज्य किया है और उसके बाद राचमल्लका समय प्रारंभ होता है। अर्थात् चामुण्डराय शककी १० वीं शताब्दिके प्रारंभमें मौजूद थे। यह समय कनड़ीभाषाके 'चामुण्डरायपुराण' या 'त्रिषष्ठिलक्षणमहापुरुषचरित' नामक ग्रन्थसे और भी अच्छी तरह निश्चित हो जाता है। यह ग्रन्थ स्वयं चामुण्डरायका बनाया हुआ है और शक संवत् ९०० में–ईश्वरनामक संवत्सरमें–यह समाप्त हुआ है। * इसके सिवाय 'रन्न' नामक प्रसिद्ध कविने अपना 'पुराणतिलक' नामक कनड़ी ग्रन्थ–जो शक संवत् ९१५ में बनकर पूर्ण हुआ है–अपने ऊपर चामुण्डरायकी विशेष कृपा होनेका उल्लेख किया है +। इन सब प्रमाणोंसे अच्छी तरह सिद्ध हो जाता है कि शककी दसवीं शताब्दिके प्रारंभमें नेमिचन्द्र स्वामी हो गये हैं और इससे शक संवत् ९४७ में वादिराजसूरि द्वारा वीरनन्दिका उल्लेख होना भी संगत तथा निर्भ्रान्त सिद्ध हो जाता है।

नेमिचन्द्रस्वामीके इस समयके विषयमें कई सज्जनोंको सन्देह है। सन्देहका एक कारण यह है कि 'प्रमेयकमलमार्तण्ड' में गोम्मटसारकी 'विग्गहगदिमावण्णा' आदि गाथा उद्धृत हुई है और इस ग्रन्थके कर्ता प्रभाचन्द्र शकसंवत् ७०० के लगभग हुए हैं। अत एव गोम्मटसारके कर्त्ता शक संवत् ९०० के लगभग नहीं किन्तु ७०० से पहले होने चाहिये। पर यह सन्देह व्यर्थ है। प्रमेयकमलमार्तण्डमें जो गाथा उद्धृत हुई है, वह गोम्मटसारकी नहीं, किन्तु गोम्मटसार जिस सिद्धान्तग्रन्थसे संग्रहीत किया गया है, उसकी है। गोम्मटसार 'जयधवल सिद्धान्त'

---

* इसके लिए देखो मि॰ राइसकी 'इंस्क्रिप्शन्स एट श्रवणबेल्गोल' नामक अंगरेजी ग्रन्थकी भूमिका।

\+ देखो 'कर्नाटककविचरित' में रन्नका वृत्तान्त।

परोंसे सारभूत संग्रह किया हुआ ग्रन्थ है और इसी लिए इस स्वयं ग्रन्थ-कर्ताने ग्रन्थान्तमें 'गोम्मटसंगहसुत्त' कहा है। गोम्मटसारकी ऐसी और भी कई गाथायें उनसे बहुत पुराने ग्रन्थोंमें * (जैसे कि राजवार्तिक और भगवती आराधनामें) मिलती हैं, परन्तु इससे गोम्मटसार भगवती आराधना आदिसे पहले सिद्ध नहीं हो सकता। इससे केवल यही मालूम होता है कि गोम्मटसारमें प्राचीन ग्रन्थोंसे बहुतसी गाथायें संग्रह की गई हैं। ऐसी दशामें नेमिचन्द्रका समय प्रभाचन्द्रसे § पहले नहीं ठहर सकता।

सन्देहका दूसरा कारण यह है कि 'बाहुबलिचरित' नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखा है कि कल्कि संवत् ६०० में चामुण्डराय मंत्रीने गोम्मट देवकी प्रतिष्ठा कराई थी + और कुछ पण्डित महाशयोंने बिना

---

* देखो जैनहितैषी भाग १२ पृष्ठ ४५२–५३।

§ प्रमेयकमलमार्तण्डकी प्रशस्तिमें लिखा है कि इस ग्रन्थको धारानिवासी प्रभाचन्द्र पण्डितने भोजदेवके राज्यमें बनाया। इस पर हमारे कुछ पण्डित महाशयोंने प्रभाचन्द्रको विक्रमकी ग्यारहवीं शताब्दिका विद्वान् समझ लिया है। क्योंकि सुप्रसिद्ध राजा भोजका निश्चय किया हुआ समय यही है। परन्तु उन्हें यह मालूम नहीं है कि धारामें कविकल्पवृक्ष भोजके पहले शककी आठवीं शताब्दिके प्रारंभमें एक और भोजदेव नामका राजा हो गया है। उसीके समयमें प्रभाचन्द्रका प्रमेयकमलमार्तण्ड लिखा गया है। हरिवंशपुराण शक संवत् ७०५ में समाप्त हुआ है और आदिपुराण भी लगभग इसी समयका ग्रन्थ है। पर इन दोनों ही ग्रन्थोंमें प्रभाचन्द्रका स्मरण किया गया है और इस लिए प्रभाचन्द्र दूसरे भोजके समयके नहीं किन्तु प्रथम भोजके समयके शक संवत् ७०० के लगभगके विद्वान् हैं और इस कारण नेमिचन्द्रको उनसे २०० वर्ष बाद मानना चाहिए।

\+ कल्क्यब्दे षट्शताख्ये विनुतविभवसंवत्सरे मासि चैत्रे
पंचम्यां शुक्लपक्षे दिनमणिदिवसे कुम्भलग्ने सुयोगे।
सौभाग्ये मस्तनाम्नि प्रकटितभगणे सुप्रशस्तां चकार
श्रीमच्चामुण्डराजो बेल्गुलनगरे गोमटेशप्रतिष्ठाम्॥

समझ बैठे कल्कि संवत् और शक संवत्को एक ही मान लिया है। परन्तु वास्तवमें कल्कि संवत् दूसरा है और शक संवत् दूसरा है। हरिवंशपुराणादि ग्रन्थोंके मतानुसार शक राजाके ३९४ वर्ष ७ महीने बाद कल्कि राजा हुआ है। अतएव कल्कि संवत् ६०० को शक संवत् ९९४ समझना चाहिए और इसी समयमें गोम्मटदेवकी प्रतिष्ठा हुई, ऐसा मानना चाहिए। परन्तु इससे चामुण्डरायका समय लगभग १०० वर्ष पीछे हट जायगा, जो इतिहाससे बहुत विरुद्ध जाता है। ऐसी दशामें या तो प्रो० शरच्चन्द्र घोषाल एम ए की कल्पनानुसार यह मान लेना चाहिए कि बाहुबलिचरितके 'कल्क्यब्दे षट्शताख्ये' का अर्थ कल्किकी छठी शताब्दि है, ६०० संवत् नहीं, या कल्कि संवत् ६०० को कल्किका 'मृत्यु संवत्' मान लेना चाहिए जो कि उसके जन्मसे ७२ वर्ष पीछे शुरू होता है। हरिवंशपुराणमें उसकी आयु ७२ वर्षकी बतलाई गई है। मृत्युसंवत् माननेसे गोम्मटदेवकी प्रतिष्ठाका समय शक संवत् ९२२ के लगभग आ जायगा जो कि संभव है।

इस तरह ये दोनों ही सन्देह दूर हो जाते हैं और नेमिचन्द्र तथा चामुण्डरायका समय शककी दसवीं शताब्दिका प्रारंभ निश्चित हो जाता है।

जैनशास्त्रियोंमें चामुण्डरायकी बहुत बड़ी प्रसिद्धि है। ये ब्रह्मक्षत्रिय वैश्य कुलमें उत्पन्न हुए थे। जैसा कि पूर्वमें कहा जा चुका है, ये गंग वंशीय महाराज राचमल्लके प्रधान मंत्री और सेनापति थे। श्रवणबेलगुलकी जगत्प्रसिद्ध बाहुबलि या गोम्मटस्वामीकी प्रतिमा इन्होंने प्रतिष्ठित कराई थी। नेमिनाथ भगवानकी इन्द्रनील मणिकी प्रतिमा—जो एक हाथ ऊँची कही जाती है—इन्होंकी बनवाई हुई है। गोम्मटसारमें इस प्रतिमाका उल्लेख है। ये बड़े ही उदार थे। इनकी उदारतासे प्रसन्न होकर राचमल्लने इन्हें रायकी पदवी दी थी। इनका एक नाम

"द्रव्यसंग्रह" नामक ग्रन्थ भी आचार्य नेमिचन्द्रका बनाया हुआ माना जाता है, परन्तु जैसा कि बाबू जुगलकिशोरजीने प्रकट किया है जान पड़ता है कि द्रव्यसंग्रहके कर्ता इनसे भिन्न कोई दूसरे ही आचार्य थे। क्योंकि द्रव्यसंग्रहके कर्ताने भावास्रवके भेदोंमें प्रमादको भी गिन लिया है और अविरतके पांच तथा कषायके चार भेद ग्रहण किये हैं * परन्तु गोम्मटसारके कर्ताने प्रमादको भावास्रवके भेदोंमें नहीं माना और अविरतके दूसरे ही प्रकारके बारह तथा कषायके पच्चीस भेद स्वीकार किये हैं × यदि दोनोंके कर्ता एक होते, तो उनके कथनमें यह विभिन्नता न होती।

त्रिलोकसार-व्याख्याके कर्ता श्रीमाधवचन्द्र त्रैविद्यदेव हैं जैसा कि टीकाकी उपान्त्य गाथासे मालूम होता है। आचार्य नेमिचन्द्रके ये प्रधान शिष्य मालूम होते हैं। मूल ग्रन्थमें भी इनकी बनाई हुई कई गाथायें सम्मिलित हैं और वे मूलकर्ताकी आज्ञानुसार शामिल की गई हैं। गोम्मटसारमें भी इनकी कई गाथायें संग्रह की गई हैं, जो संस्कृत टीकाकी उत्थानिकासे मालूम होती हैं। संस्कृत गद्यरूप क्षपणासार भी—जो कि लब्धिसारमें शामिल है—इन्हीं माधवचन्द्रका बनाया हुआ है। त्रैविद्यदेव इनकी पदवी थी। इससे मालूम होता है, कि ये भी अच्छे विद्वान् थे। इनके बनाये हुए और किसी ग्रन्थका हमें परिचय नहीं है।

चन्दावाडी बम्बई।
वैशाख शुक्ल १३
सं० १९७५ वि०। } नाथूराम प्रेमी।

---

* मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओ थ विण्णेया।
पण पण पणदह तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥ ३० ॥
—द्रव्यसंग्रह।

× मिच्छत्तमविरमणं कसायजोगा य आसवा होंति।
पणबारस पणवीसं पण्णरसा होंति तब्भेया ॥ ७८६ ॥
—कर्मकाण्ड।

ॐ



श्रीनेमिचंद्राय नमः ।

श्रीमन्नेमिचन्द्राचार्यविरचित

त्रिलोकसारः ।

(टीकासहित)



श्रीमन्माधवचन्द्राचार्यविरचिता संस्कृतटीका ।

त्रिभुवनचन्द्रं जिनेन्द्रं भक्त्यानत्य त्रिलोकसारस्य ।
वृत्तिरियं किंचित् सम्प्रबोधनाय प्रकाश्यते विधिना ॥ १ ॥
जीयादकलङ्ककायस्सूरिगुणभूरितुल्यरूपधारी ।
अनवरतविनतजिनमताधिरोधिवादिवरो जगति ॥ २ ॥
यस्मादखिलबुधानां विस्मयकृदभूत् प्रवृत्तिरिह यस्य ।
तच्छासनमपनुदतादनघ घनकुमततिमिरनिवहमत ॥ ३ ॥

श्रीमदप्रतिहताप्रतिमनिष्प्रतिपक्षनिष्करण-निष्क्रमकेवलज्ञानतृतीयलोचनावलोकितसकलपदार्थेन संरक्षितामरेन्द्रनरेन्द्रमुनीन्द्रादिसार्थेन तीर्थकरपुण्यमहिमावष्टम्भसंभूतसमवसरणप्रातिहार्यातिशयादिबहिरङ्गलक्ष्मीविशेषेण निर्मूलीकृताष्टादशदोषेण सर्वाङ्गसमालिङ्गितानन्तचतुष्टयादिगुणगणात्मकान्तरङ्गलक्ष्मीप्रकाशितपरमात्मप्रभावेण श्रीवर्धमानतीर्थकरपरमदेवेन सर्वभाषास्वभावदिव्यभाषाभाषितार्थ सप्तर्धिसमृद्धगौतमस्वामिना त्रिसं वेद्यापरमेश्वरेण

श्रुतकेवलिना विरचितशब्दरचनाविशेषं तद्‌व्याख्यानविज्ञानगम्भीरमर्मं गुम्फनक्रमेण युक्तिभाजनया प्रवर्तमानमविनष्टमूलार्थत्वेन केवलज्ञानसमानं करणानुयोगनामानं परमागमं कण्ठानुरोधेन संक्षिप्य निरूपयितुकामो भगवान्नेमिचन्द्रसैद्धान्तदेवश्चतुरनुयोगचतुरुदधिपारगश्चामुण्डरायप्रतिबोधनव्याजेन पद्विनेयजनप्रतिबोधनार्थं त्रिलोकसारनामानं ग्रन्थमारभमाणः तदादौ निर्विघ्नशास्त्रपरिसमाप्त्यादिकं फलमुद्दिश्यस्य विशिष्टेष्टदेवतानामभिष्टौति,—

बलगोविंदसिहामणिकिरणकलावरुणचरणणहकिरणं
विमलयरणेमिचंदं तिहुवणचंदं णमंसामि ॥ १ ॥

बलगोविन्दशिखामणिकिरणकलापारुणचरणनखकिरणम् ।
विमलतरनेमिचन्द्रं त्रिभुवनचन्द्रं नमस्यामि ॥ १ ॥

अस्यार्थः कथ्यते । णमंसामि नमस्यामि नमस्करोमि । कं । विमलयरणेमिचंदं विमलतरनेमिचन्द्रं, विगतं मलं द्रव्यभावात्मकं अत्मगुणघातिकर्म देहधातवो वा यस्मादसौ विमलः स्वयं विशुद्धेरुदयस्य परमकाष्ठामधिष्ठितः सन्नन्येषामप्यात्माश्रितानां कर्ममलक्षालनहेतुत्वादतिशयेन विमलो विमलतरः । अनेनापायापायातिशयः प्रकाशितः । नेमिचन्द्रो द्वाविंशतीर्थंकरपरमदेवः विमलतरनेमिचन्द्रस्तं । कथंभूतं । 'त्रिभुवनचन्द्रं' त्रिभुवनानां चन्द्र इव चन्द्रः प्रकाशकस्तं त्रिलोकानां स्वरूपोपदेशक तत्स्वरूपपरिच्छेदक वेत्यर्थः । एतेन वागतिशयः प्राप्त्यतिशयो वा प्रतिपादितः । अवसरोचितं चैतद्विशेषणं । त्रयाणां भुवनानां स्वरूपनिरूपणे बद्धप्रयत्नसायस्याचार्यस्य शब्दज्योतिषा ज्ञानज्योतिषा च तत्स्वरूपप्रकाशकस्यैव नमस्कारकरणं समुचितमेवेति । पुनरपि कथंभूतं । 'बलगोविंदशिखामणिकिरणकलापारुणचरणनखकिरणं' निजपादपद्मावनतपद्मनाभचूडामसृणपद्मरागमणिमरीचिजालबालातपमञ्जरीपिञ्जरितपदकजनखमरीचिपुञ्जमित्यर्थः । अनेन भगवतः पूजातिशयः शेषातिशयाविनाभावी निवेदितः । अतो

उपयोगी श्लोकः । "अपायप्रातिहार्यपूजा विशेषाख्यायिका ननु—न प्रभुत्व इति ख्याता जिनस्यातिशया इमे ॥" । अथवा नमस्यामि नमामि । कं । विमलतरनेमिचंद्रं, नेमिश्चक्रधारा नेमिरिव नेमिः धर्मरथप्रवर्तकत्वात् । चंद्रयत्याह्लादयति भव्यजननयनमनांसीति चंद्रः इन्द्रादसमविरूपातिशयसंपन्नत्वात् । नेमिश्चासौ चंद्रश्च नेमिचंद्रः विमलतरश्चासौ नेमिचंद्रश्च विमलतरनेमिचंद्रः । अथवा यथावस्थितमर्थं नयति परिच्छिनत्तीति नेमिर्बोध विगतं मलमज्ञानं यस्मादसौ विमलः अतिशयेन विमलो विमलतरः विमलतरश्चासौ नेमिश्च विमलतरनेमिः सकलविमलकेवलज्ञानमिति यावत् तेनोपलक्षितश्चंद्रो विमलतरनेमिचंद्रः । अथवा विमलतराः रत्नत्रयपवित्रात्मानस्तेषव नमयो नक्षत्राणि तेषां चंद्र इव चंद्रः स्वामी तं विमलतरनेमिचंद्रमंतिमतीर्थकरस्वामिनं चतुर्विंशतितीर्थकरसमुदायं वेत्यर्थः । किं विशिष्टं । त्रिभुवनचंद्रं । त्रिभुवनशब्देनात्र त्रिभुवनस्था विनेया ग्राह्याः तेषां चंद्र इव चंद्रः अज्ञानतमोविनाशकत्वात्तं । भूयः किंभूतं । 'बल-किरणं' बलं जंबूद्वीपपरावर्तनलक्षणं सत्त्वमतींद्रादिकं देवसैन्यं अतिमनोहरं रूपं वा विद्यते अस्येति बलः । अत्रोपयोगी श्लोकः । "बलं शक्तिर्बलं सैन्यं बलं स्थौल्यं बलो बलः । बलं रूपं बलो दैत्यो बलः काको बली बलः ॥" । गां स्वर्गं विदृति पालयतीति गोविंदो देवेंद्रः बलश्चासौ गोविंदश्च बलगोविंदः तस्य शिखेत्यादि शब्दार्थः सुबोधः । भक्तिभरविनतशतमखप्रमुखनिखिलदेवशिरोमणिमयूखमालाकल्मीकृतचरणनखकिरणमिति तात्पर्यार्थः । अथवा । णमसामि । कं । 'विमलवरणेमिचंद्रं' पंचविंशतिमलरहितसम्यक्त्वसमन्वितसम्यग्दृष्टिशुद्धज्ञानसमृद्धत्वात् निरतिचारचारुचारित्रपवित्रीभूतत्वाद्वा विमलतरः स चासौ नेमिचंद्राचार्यश्च विमलतरनेमिचंद्रस्तं नमस्यामीति चामुंडराय स्वगुरुनमस्कारपूर्वकं शास्त्रमिदं प्रारभते । कथंभूतं तं । त्रिभुवनचंद्र चंद्र इव चंद्रो धर्मामृतस्यंदित्वात् । अथवा चंद्रं कांचनं सर्वजनैरादेयत्वात् । त्रिभुवनानां चंद्रस्त्रिभुवनचंद्रस्तं । पुनरपि कथंभूतं । बल   किरण बल द्रासप्रतिनियोगव्रतनल गण इत्यादिकं वा अस्येति बलश्चामुंडराय गां पृथ्वीं

विंदति पालयन्तीति गोविंदा गजमन्दन्त वल्लभ गोविंदाय इत्गोविंदो तथा दिशे यादि पूर्ववत् ॥ १ ॥

अथ प्रथमद्वितीयगाथाद्वयकृतचैत्यालयनमस्कारकरणेन नवदेवता-नमस्कारं कुर्वन् ग्रन्थस्य पञ्चाधिकारं सूचयन्नाह,—

भवणव्विंतरजोइसविमाणणरतिरियलोयजिणभवणे ।
सव्वामरिंदणरवइसपूजियवंदिए वंदे ॥ २ ॥

भवनव्यंतरज्योतिर्विमाननरतिर्यग्लोकजिनभवनानि ।
सर्वामरेंद्रनरपतिसंपूजितवंदितानि वंदे ॥ २ ॥

भवण । भवनव्यंतरज्योतिर्विमाननरतिर्यग्लोकजिनभवनानि सर्वामरेंद्र-नरपतिसंपूजितवंदितानि वंदे ॥ २ ॥

अथ तानि जिनभवनानि कुत्रेत्याशङ्कायामाह,—

सव्वागासमणंतं तस्स य बहुमज्झदेसभागम्हि ।
लोगोसंखपदेसो जगसेढिघणप्पमाणो हु ॥ ३ ॥

सर्वाकाशमनन्तं तस्य च बहुमध्यदेशभागे ।
लोकोऽसंख्यप्रदेशो जगच्छ्रेणिघनप्रमाणो हि ॥ ३ ॥

सव्व । सर्वाकाशमनंतं तस्य च बहुमध्यदेशभागे, बहव अतिशयिता रचना कृता असंख्याता वाकाशस्य मध्यदेशा यस्य स बहुमध्यदेशः स चासौ भागश्च सद्वा तस्मिन् बहुमध्यदेशभागे । अथवा बहव अष्टौ गोस्तनाकारा आकाशस्य मध्यदेशा मध्यदेशो यस्य स तथोक्तस्तस्मिन् । लोकोऽसंख्यातस्य प्रदेशः स च जगच्छ्रेणीघनप्रमाणः खलु ॥ ३ ॥

अथ लोकविप्रतिपत्तिनिरासार्थमाह,—

लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो ।
जीवाजीवेहिं फुडो सव्वागासवयवो णिच्चो ॥ ४ ॥

लोकः अकृत्रिमः खलु अनादिनिधनः स्वभावनिर्वृत्तः ।
जीवाजीवैः स्फुटः सर्वाकाशावयवः नित्यः ॥ ४ ॥

लोगो । अधिकारागतस्य लोकपदस्य पुनरुपादानं लोकमनूद्य दूषणार्थं । लोकोऽस्तीति । अनेन विशेषणेन शून्यवादनिराकृतिः कृता । अकृत्रिमः खलु, अनेनेश्वरकर्तृकत्वं निराकृतम् । अनादिनिधनः । अनेन सृष्टिसंहारनिराकरणं । स्वभावनिर्वृत्तः । अनेन परमाण्वारब्धत्वनिराकृतिः । जीवाजीवैः स्फुटः अनेन मायावादिनिराकरणं । सर्वाकाशावयवः । अनेन अलोकाभाववादापहारः । नित्यः । अनेन क्षणिकमतनिरासः । एतावता कथनेन लोक्यत इति लोकः इति षड्द्रव्यसमवायस्य लोकत्वमुक्तम् ॥ ४ ॥

इदानीं तदाधारस्याकाशस्य लोकत्वमुच्यते,—

धम्माधम्मागासा गदिरागदि जीवपोग्गलाण च ।
जावत्तावल्लोगो आयासमदो परमणंत ॥ ५ ॥

धर्माधर्माकाशा गतिरागतिः जीवपुद्गलयोः च ।
यावत्तावल्लोकः आकाशः अतः परमनन्तम् ॥ ५ ॥

धम्मा । धर्माधर्मकाला गतिरागतिर्जीवपुद्गलयोः चकारात् कालाणवश्च यावदाकाशमभिव्याप्य वर्तते तावदाकाशं लोकः, अतः परमाकाशमनंतं न संख्यातादि ॥ ५ ॥

अथ परपरिकल्पितलोकसंस्थाननिराकरणार्थमाह,—

उब्भियदलेक्कमुरवद्धयसंचयसण्णिहो हवे लोगो ।
अद्धुदयो मुरवसमो चोद्दसरज्जूदओ सव्वो ॥ ६ ॥

उद्भूतदलैकमुरजध्वजसंचयसन्निभो भवेत् लोकः ।
अर्धोदयः मुरजसमः चतुर्दशरज्जूदयः सर्वः ॥ ६ ॥

उब्भिय । ऊर्ध्वीभूतदलमुरजैकमुरजसंनिभः । अत्र शून्यतानिराकरणार्थं ध्वजसंचयसन्निभो भवेल्लोकः । अर्धमुरजोदयः एकमुरजोदयसमः मिलित्वा सर्वलोकश्चतुर्दशरज्जूदयः ॥ ६ ॥

अथ [illegible]

जगसेढिसत्तभागो रज्जू सेढीवि पल्लछेदाणं ।
होदि असंखेज्जदिमप्पमाणविंदंगुलाण हदी ॥ ७ ॥

जगच्छ्रेणिसप्तमभागो रज्जुः श्रेणिरपि पल्यच्छेदानाम् ।
भवति असंख्येयभागवृन्दाङ्गुलानां हतिः ॥ ७ ॥

जग । जगच्छ्रेणिसप्तमभागो रज्जुः [illegible] । १८-४२-[illegible] । [illegible] । पल्य १६ छेद ४ असंख्येय भाग २ [illegible] परस्परहतिः भवति ॥ ७ ॥

अथ सूच्यङ्गुलादित्रयमाह,—

पल्लछिदिमेत्तपल्लाणण्णोण्णहदीए अंगुलं सूई ।
तव्वग्गघणा कमसो पदरघणंगुल समक्खादो ॥ ८ ॥

पल्यच्छेदमात्रपल्यानामन्योन्यहत्या अङ्गुलं सूची ।
तद्वर्गघनौ क्रमशः प्रतरघनाङ्गुले समाख्याते ॥ ८ ॥

पल्ल । पल्य १६ छेद ४ मात्रपल्यानां अन्योन्याभ्यस्ते सूच्यङ्गुलं ६५ तद्वर्गघनौ प्रतर ४२ घनाङ्गुले ४२×६५ क्रमशः समाख्याते ॥ ८ ॥

अथ मानप्रतीत्यर्थं प्रक्रियामाह,—

माण दुविहं लोगिग लोगुत्तरमेत्थ लोगिगं छद्धा ।
माणुम्माणोमाणं गणिपडितप्पडिपमाणमिदि ॥ ९ ॥

मानं द्विविधं लौकिकं लोकोत्तरमत्र लौकिकं षोढा ।
मानोन्मानावमानं गणिप्रतितत्प्रतिप्रमाणमिति ॥ ९ ॥

माण । मानं द्विविधं लौकिकं लोकोत्तरमिति । अत्र लौकिकं षोढा मानोन्मानावमानगणिमानप्रतिमानतत्प्रतिमानमिति ॥ ९ ॥

एतानि चत्वारि यथासंख्यं दृष्टान्तमुखेनोपदर्शयति —

पत्थतुलचुलयएगप्पहुदी गुंजातुरगमोल्लादी ।
दव्व खित्त कालो भावो लोगुत्तर चदुधा ॥ १० ॥

प्रस्थतुलाचुल्लकैकप्रभृति गुंजातुरगमूल्यादि ।
द्रव्य क्षेत्र कालो भावो लोकोत्तरं चतुर्धा ॥ १० ॥

पत्थ । प्रस्थप्रभृति तुलाप्रभृति चुल्लकप्रभृति एकप्रभृति गुंजादि तुरंगमूल्यादीनि । इतो लोकोत्तरमानभेद उच्यते । द्रव्य क्षेत्र कालो भाव इति लोकोत्तरं चतुर्धा ॥ १० ॥

अथ तेषां चतुर्णां यथासंख्येन जघन्योत्कृष्टवतीत्यर्थं गाथाद्वयमाह —

परमाणु सयलदव्व एगपदेसो य सव्वमागास ।
इगिसमय सव्वकालो सुहुमणिगोदेसु पुण्णेसु ॥ ११ ॥

परमाणु सकलद्रव्य एकप्रदेश च सर्वमाकाशम् ।
एकसमय सर्वकाल सूक्ष्मनिगोदेषु अपूर्णेषु ॥ ११ ॥

परमाणु । परमाणु सकलद्रव्य एकप्रदेश सर्वमाकाशं एकसमय सर्व काल सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकेषु ॥ ११ ॥

णाण णिणेसु य कमा अवर वर मज्झिम अणेयविह ।
दव्व दुविह सखा उवमपमा उवम अट्ठविह ॥ १२ ॥

ज्ञान जिनेषु च क्रमात् अवर वर मध्यम अनेकविधम् ।
द्रव्य द्विविध संख्या उपमाप्रमा उपममष्टविधम् ॥ १२ ॥

णाण । जिनेषु च ज्ञान क्रमाज्जघन्यमुत्कृष्ट मध्यमं अनेकविधं । तथापि द्रव्य द्विविध संख्याप्रमाणमुपमाप्रमाणमिति । तत्रोपमाप्रमाणमष्टविधं । अन्यत्तत्वमाद्या वक्ष्यामीति न्यायेन यथोद्देशेन निर्देश मुक्त्वा उपमाभेद उच्यते उपमा अष्टविधेति । १२ ॥

संख्यातादिभेदान् कथयन्ति तेषां स्वरूपमाह,—

तं उवरि मणिम्मामो संखेज्जमसंखमणंतमिदि तिविहं ।
मज्झंतिमदु तिविहं परित्तजुत्तंति दुगवारं ॥ १३ ॥

तदुपरि मणिस्थानं संख्येयं असंख्यमनन्तमिति त्रिविधम् ।
मध्यमं अन्तिमं द्वि त्रिविधं परीतं युक्तं इति द्विवारम् ॥ १३ ॥

तं उवरि । तदुपरि मणिस्थानं इति । अनन्तमेव तत्त्वं—संख्येयं असंख्येयं अनन्तमिति त्रिविधं । मध्यं अन्तिमं द्वि त्रिविधं—परीतं युक्तं इति द्विवारमिति ॥ १३ ॥

ते अवर मज्झ जेट्ठ तिविहा संखेज्जजाणणणिमित्तं ।
अणवत्थ सलागा पडिमहासला चारि कुंडाणि ॥ १४ ॥

तानि अवर मध्य ज्येष्ठ त्रिविधानि संख्येयज्ञाननिमित्तम् ।
अनवस्था शलाका प्रतिमहाशलाका चत्वारि कुण्डानि ॥ १४ ॥

ते अवर । तानि अवराणि स्थानानि जघन्य मध्यम उत्कृष्टानि त्रिविधानि । संख्येयज्ञाननिमित्तं अनवस्था शलाका प्रतिशलाका महाशलाका इति च चत्वारि कुण्डानि कल्पनीयानि ॥ १४ ॥

अथ चतुर्णां कुंडानां व्यासादिनिर्देशः,—

जोयणलक्खं वासो सहस्समुस्सेहमेत्थ सव्वेसिं ।
दुप्पहुदिसरिसवेहिं अणवत्था पूरयेदव्वा ॥ १५ ॥

योजनलक्षं व्यासः सहस्रमुत्सेधः अत्र सर्वेषाम् ।
द्विप्रभृतिसर्षपैः अनवस्था पूरयितव्या ॥ १५ ॥

जोयण । योजनलक्षं व्यासः सहस्रमुत्सेधः । अत्र सर्वेषां कुंडानां द्विप्रभृतिसर्षपैरनवस्था पूरयितव्या ॥ १५ ॥

द्विप्रभृतिभिरिति किमित्याशंकायामनुद्वदन्नाह,—

एयादीया गणणा बीयादीया हवंति संखेज्जा ।
तीयादीणं णियमा कदित्ति सण्णा मुणेदव्वा ॥१६॥

एकादिका गणना द्व्यादिका भवंति सम्ख्याता ।
त्र्यादीनां नियमात् कृतिरिति संज्ञा मन्तव्या ॥ १६ ॥

एया । एकादिका गणना द्व्यादिका संख्याता भवंति त्र्यादीनां नियमात् कृतिरिति संज्ञा ज्ञातव्या । यस्य कृतौ मूलमपनीय शेषे वर्गिते वर्धिते सा कृतिरिति । एकस्य द्वयोश्च कृतिर्लक्षणाभावात् एकस्य नो कृतित्वं द्वयोर वक्तव्यमिति कृतित्व त्र्यादीनामेव तल्लक्षणयुक्तत्वात् कृतित्व मुक्तम् ॥१६॥

अथोक्तयोजनलक्षव्यासवृत्तस्य समस्तक्षेत्रफलज्ञापनार्थमाह,—

वासो तिगुणो परिही वासचउत्थाहदो दु खेत्तफलं ।
खेत्तफलं वेहगुणं खादफलं होइ सव्वत्थ ॥ १७ ॥

व्यासस्त्रिगुणः परिधिः व्यासचतुर्थाहतस्तु क्षेत्रफलम् ।
क्षेत्रफलं वेधगुणं खातफलं भवति सर्वत्र ॥ १७ ॥

वासो । व्यासस्त्रिगुणः परिधिः, व्यासचतुर्भागाहतस्तु क्षेत्रफलं, क्षेत्रफलं वेधगुणितं खातफलं भवति सर्वत्र कुंडेषु ॥ १ ल व्यास ×३=३ परिधि । $\frac{३}{४}$ ल ×१ ल क्षेत्रफल । ३×$\frac{१}{४}$×१००० वे=खातफल ॥ अथ व्यासस्त्रिगुण इत्यस्य वासना कथ्यते । योजनलक्षव्यासवृत्तं अर्धीकृत्य तदर्द्धं पुनरप्यर्द्धीकृत्य मध्यमतदर्द्धद्वयमेलने अर्द्धं स्यात् । पुनः परिधेः षष्ठांशं गत्वार्धीकृत्य एतदर्द्धद्वयं प्रत्येकमर्धीकृत्य मध्यमतदर्द्धद्वयमेलने अपरैकार्धं स्यात् । पुनरपि तथा षष्ठांशं गत्वा तथाकृते षडर्धानि भवति । तेषां षण्णां मेलने $\frac{६}{२}$ ल अथ इते व्यासस्त्रिगुण इत्यस्य वासना भवति ॥ इदानीं व्यासचतुर्थाहत इत्यस्य वासना निरूप्यते । चतुर्भागजाततद्व्यासकद १ ल उद्धारेच मध्य

पर्यंत छित्वा त्रिलम्ब्यायतत्रिकोण सस्थाप्य पुनरपि मुखभूमिसमासार्धं मध्यफलमिति मध्यफल साधयित्वा ३/२ त तत्पर्यंतमूर्ध्वादध छित्वा खंडद्वये चायतचतुरस्र यथाभवति तथा क्रमहीनपार्श्वद्वये स्थापिते क्षेत्रस्य व्यासचतुर्थाहतत्व भवति ॥ १७ ॥

स्थूलक्षेत्रफलप्रमाणयोजनस्य व्यवहारयोजनादिकं कुर्वन्नाह,—

थूलफल ववहार जोयणमवि सरिसव च कादव्व ।
चउरस्ससरिसवा ते णवसोडस भाजिदा वट्ट ॥ १८॥

स्थूलफल व्यवहार योजनमपि सर्षपश्च कर्तव्य ।
चतुरस्रसर्षपास्ते नवषोडश भाजिता वृत्तम् ॥ १८ ॥

थूलफल । स्थूलफल ३×३/२×१००० एतत् । एकप्रमाणयोजनस्य पचशत व्यवहारयोजनानि इयता प्रमाणयोजनानां किमिति त्रैराशिकविधिना व्यवहारयोजन कर्तव्य । अपिशब्दात् पुनरपि त्रैराशिकविधिनैव योजन प्र १ क्रोश ४ । क्रोश १ दड २००० । दंड १ हस्त ४ । हस्त १ अंगुल २४ परस्परगुणनेन कृतैकयोजनाङ्गुलानि ७६८००० यवश्च ८ कर्तव्यानि सर्षपश्च ८ कर्तव्य । धनराशेर्गुणकारभागहारौ धनरूपेण भवत इति न्यायेन एते सर्वे गुणकारा घनरूपेण भवति । एते सर्वे चतुरस्रसर्षपा भवति । त एव नव षोडश ९/१६ भक्ता वृत्तसर्षपा भवंति । “ हारस्य हारो गुणकोंऽश राशे ” इति षोडशापि गुणकारो भवति । तत्रैकाष्टक द्विकरूपेण त्रिलम्ब्य २।२।२ पंचशतानि गुणयित्वा तत्र राशौ स्थितानि सर्वाणि शून्यानि एकत्रिंश संख्याकानि पृथक् कर्तव्यानि । पुनरप्येकाष्टक तथा विरलय्य तैरष्टाभिर्क ८।८।८ गुणयित्वा १६।१६।१६ प्राक्तनषोडशसहितचतुःषोडशानां परस्परगुणने पणट्ठि ६५५३६ अगुलांकं त्रिभिर्भंदयित्वा बेसद्दछप्पण्णदुयगुणन ल्पमट्ठिजाता पण्णट्ठिषोदयागुणने बादाल्मभूत् । परस्परगुणितविरद्दय ९ अत छिन्नच्छेदेन भागहारचतुर्भि सर्व चतुर्भिरपवर्तितेन

२ गुणयेत्। उपरितनद्वय संगुण्य ९ भागहारेण नवभिः समममपवर्तयेत् राशिर्भवति १४२=१२५६११८१२१०॥ १८॥

अथ नवषोडशभाजिता बहुमित्यस्य वासनारूपनिष्पन्नभेत्रफलसूत्रमुच्चारयति,—

वासद्धघणं दलियं णवगुणियं गोलयस्स घणगणियं।
सव्वेसिंपि घणाणं फलत्तिभागप्पिया सूई ॥ १९ ॥

व्यासार्द्धघनं दलितं नवगुणितं गोलकस्य घनगुणितम्।
सर्वेषामपि घनानां फलत्रिभागात्मिका सूची ॥ १९ ॥

वासद्ध। व्यासार्धघनो दलितः नवगुणितो गोलकस्य घनगुणितं सर्वेषां घनानां फलत्रिभागात्मकं सूचीफलं भवति॥ नवषोडशभाजिता बहुमित्यस्य वासना निरूप्यते। एकव्यासकरसातगोलकमर्धीकृत्यार्द्धमपहाय अत्र शिष्टार्द्धं पुनरपि खंडत्रयं कृत्वा तत्राप्येकखंडं गृहीत्वा तदग्रपूर्वार्द्धमधश्छित्वा चतुरस्रं यथा तथा संस्थाप्य तत्र गोलकस्य बहुमध्यदेशे विवक्षितवेधसद्भावोस्ति। पार्श्वेषु समहानिसद्भावस्समीकरणार्थं हीनस्थाने एतावद्दूरं निक्षिप्य समस्थले सति तदपि पुनस्तिर्यग्मध्ये छित्वा उपरि संस्थाप्य समच्छेदेन क्षणमपनीय " भुजकोटी " इत्यादिना खातफलमानीय एकखंडस्यैतावति घनफले खंडानां किं फलमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते गोलकस्य घनगुणितमेव नव षोडशभाजितेत्यस्य वासना जाता। त्रिभुजचतुर्भुजवृत्तक्षेत्राणां फलं " भुजभूमि जोग " इत्यादिना " भुजकोडी " इत्यादिना " वासो तिगुण " इत्यादिना यथाक्रममानीय त्रिभिर्भक्ते तत्तत्सूचीफलं भवति॥ १९॥

अथ स्थूलफलप्ररूपणमुच्चारयति,—

धादाल सोलसकदिसगुणिद दुगुणणवसमवमत्थं।
इगितीससुण्णसहिय सरिसवमाणं हवे पढमं॥२०॥

वादाल षोडशकृतिसगुणित द्विगुणनवसमभ्यस्तम् ।
एकत्रिंशत्शून्यसहित सर्षपमान भवेत् प्रथमे ॥ २० ॥

बादाल । बादाल ४२ षोडशकृति २५६ सगुणित द्विगुणनव १८ समभ्यस्त एकत्रिंशत्शून्यसहित सर्षपमान भवेत् प्रथमे कुंडे ॥ २० ॥

अथैतद्गुणितफलमुच्चारयति,—

विधुणिधिणगणवरविणमणि-
धिणयण-वलद्धिणिधिसराहत्थी ।
इगितीससुण्णसहिया जम्बूए लद्धसिद्धत्था॥२१॥

विधुनिधिनगनवरविनभोनिधिनयनबलद्धिनिधिस्वरहस्तिन ।
एकत्रिंशच्छून्यसहिता जंबौ लब्धसिद्धार्था ॥ २१ ॥

विधु । एकनवसप्तनवद्वादशशून्यनवद्विनवनवनवषट्कौ एकत्रिंशच्छून्यसहिता जम्बूद्वीपे लब्धसर्षपा १९७९१२०९२९९९६८०००००००
०००००००००००००००००००००००००००००००० ॥ २१ ॥

सर्वेषां कुण्डानां सिद्धशिखाफलमुच्चारयति,—

परिणाहेक्कारसम भाग परिणाहछट्ठभागस्स ।
वग्गेण गुणं णियमा सिहाफल सव्वकुंडाण ॥२२॥

परिणाहैकादश भाग परिणाहषष्ठभागस्य ।
वर्गेण गुणं नियमात् शिखाफलं सर्वकुंडानाम् ॥ २२ ॥

परिणा । परिधे (२ ८) रेकादशमो भाग (११ ल) परिधेः षष्ठभागस्य वर्गेण (११) गुणितो नियमात् शिखाफलं सर्वकुंडानां भवति ॥ अथ शिखाफलस्य वासना कथ्यते । व्यास त्रिगुण परिधि (१ ८) ... (३४) ... परिधेरेकादशभाग

वेदेन गुणिते कृते " कल्पितमन्त्रिय " इति आगतेन भाज्यराशिवेदेन सद्भ्रान्तिनिमित्ते त्रिकमवस्थ ग्रासाचतुर्दशास्य हारचतुर्भक्त शिखावि स्थाप्यैकमान्याद्यन्तदेवस्य त्रिभिर्गुणितं दृष्टा परिणाहसमेत्याद्युक्तं । एवमन्यदपि पृथक् पृथग् भाज्यहारयोरनादिकं कर्तव्यं ॥ २२ ॥

अथ वेधं हर्त्तं कथं कल्पितवादृशाभ्यामित्याह;—

तिलसरिसवपहुदि-धणपतसिकुलत्थरायमासादि ।
परिणाहेक्कारसमो वेहो जदि गयणगो रासी ॥ २३ ॥

तिलसर्षपवल्लचणकमसूरकुलत्थराजमाषादौ ।
परिवेषैकादशांशो वेधो यदि गगनगो राशिः ॥ २३ ॥

तिल । तिलसर्षपवल्लचणकमसूरकुलत्थराजमाषादौ परिधेरेकादशांशो वधो यदि गगनराशिः भवेत् ॥ २३ ॥

अथ गुणितराशिमुच्चारयति,—

बेरूवतदियवग्गमवहिद अट्ठारसेहिं संगुणिय ।
तद्दिसगुणणजुद हरभजिद जंबुदीवसिहा ॥ २४ ॥

द्विरूपतृतीयवर्गमवहृतं अष्टादशभिः संगुणितं ।
त्र्यधिकद्विशून्ययुतं हरभक्तं जम्बूद्वीपशिखा ॥ २४ ॥

बेरूव । द्विरूपवर्गधारातृतीयवर्गमवहृतं अष्टादशभिः संगुणितं त्र्यधिकद्विशून्ययुतं हर (एकादश) भक्तं चेत् जम्बूद्वीपशिखायां भवति ॥ २४ ॥

अथ शिखाकमुच्चारयति,—

इगिसगपणणवदुगणभणभडचउपणचउक्कपणसोल ।
सोलसछत्तीसजुद हरहिदचउरो य पढमसिहा ॥२५॥

एकसप्तपञ्चनवद्विकनभोनभोऽष्टचतुःपञ्चचतुष्कपञ्चषोडश ।
षोडशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचत्वारश्च प्रथमशिखा ॥ २५ ॥

इगि । एकसप्तनवनवद्विकशून्यशून्याष्टचतुःपञ्चचतुष्कपञ्चषोडशषो डशपट्त्रिंशद्युत एकादशभक्तचतुष्कं प्रथमकुण्डशिखाफलं भवति ॥ १७९९ २००८४५४५१६२६३६२६२६२६२६२६२६२६२६३६२६२६१६ २६२६$\frac{४}{११}$ ॥ २५ ॥

अथ कुण्डशिखयोः फलं मेलयित्वोच्चारयति;—

वासद्धकदी तिगुणा वेहगुणेक्कारसाहिदवासगुणा ।
एयारस पविभत्ता इच्छिदकुंडाणमुभयफलं ॥ २६ ॥

व्यासार्धकृतिः त्रिगुणा वेधगुणैकादशसहितव्यासगुणा ।
एकादशप्रविभक्ता इच्छितकुण्डानामुभयफलम् ॥ २६ ॥

वासद्ध । व्यासार्धवर्गस्त्रिगुणो वेधगुणितैकादशसहितैकलक्षव्यास गुण एकादशप्रविभक्त इच्छितकुण्डानामुभयफलं भवति । तद्यथा । "वासो तिगुणो परिही" इत्यादिना कुंडफलमानीतं । "वासो" इत्यादि परिणाहेक्कारसम वधेन गुणितं फलं तिभागभजियं' इति सूचीफलमानीतं । पश्चात् कुंडफलशिखाफलयोर्द्वयोः परिधि "वासद्धकदी" इति गाथोक्तानि फलयदर्शनार्थं त्रिभिः समेत ताविकमुभयत्र गुणकाररूपेण संस्थाप्य पुनः शेषयतरत्रं समच्छेदेनोक्तयोः टकारस्य टकारं दर्शयित्वा अधिकलभे स्तोक (११०००) मेलने उभयफलं स्यात् । इदं दृष्ट्वा वासद्धकदीत्यादि उक्तं । एवमुत्तरत्र व्यवहारयोजनादिकं कर्तव्यम् ॥ २६ ॥

अथ गद्यकमुच्चारयति,—

बाहाठमट्ठवण इगिहीण सहस्साहद णगारहिद ।
इगितीस गुणणमहिय जधुद्दीवुभयफलसिद्धत्था ॥ २७ ॥

द्वाषष्टयुत्तरैकहीनसहस्र हत एकादशहृतम् ।
एकत्रिंशद्गुणम् हत अधिकं शम्बुद्वीपा ॥ २७ ॥

धारा० । धाराऽ अष्टघन ५१२ एकहीनसप्ताम्यां ९९९ आहत एकादशशतं एकत्रिंशच्छून्यसहितं चतुर्दशघनमितकुण्डाशीलास्फलयो सिद्धार्थः ॥ २७ ॥

अथ परसद्गुणितोकमुच्चारयति,–

इगि णव णव सगिगिगिदुगणवतिण्णट्ठचउपणेक्क-
तिगिछक्क ।

पण्णरछत्तीसतुद हरहिदचउरो य पढमुभय ॥२८॥

एक नव नव सप्तैकैकद्विनवत्रिअष्टचतु पञ्चैकत्र्येकषट्कम् ।

पञ्चदशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचतुष्कं च प्रथमोभयम् ॥ २८ ॥

इगिणव । एक नव नव सप्तैकैकद्विनवत्रिअष्टचतुःपञ्चैकत्र्येकषट्कम् पञ्चदशषट्त्रिंशद्युतं हरहितचतुष्कं प्रथमानवस्थोभयफलं स्यात् ॥ ११९७१ १२९३८४५१३१६३६३६^१६३६३६३६३६३६३६३६३६३६३६ ३६$\frac{1}{11}$ ॥ २८ ॥

अथ कुण्डादिस्थितैर्गि अनवस्था पूर्वेयस्था इत्युक्त्वा तत्प्रसङ्गानुप्रसक्त्या तदनन्तलक्षं निरूप्येदानी प्रकृतमनुसन्धाति,—

पुण्णा सद्दमणवत्था इदि एग सिव सलागकुंडम्हि ।

तं मज्झिमसिद्धत्थे मदिए देवो व धित्तूण ॥ २९ ॥

पूर्णा सदनवस्था इत्येकां शिप शलाकाकुण्डे ।

तन्मध्यसिद्धार्थान् मत्या देवो वा गृहीत्वा ॥ २९ ॥

पुण्णा सद्द । पूर्णा सदनवस्था इत्येकां शिप शलाकाकुण्डे तन्मध्य सर्षपान् मत्या देवो वा गृहीत्वा ॥ २९ ॥

किं कृतवानित्याशङ्कायामाह —

दीवसमुद्दे दिण्णे एक्केक्के परिसमप्पदे जत्थ ।

ता हिट्ठिमदीउवही कयगत्तो तहिं भरिदव्वो ॥३०॥

द्वीपसमुद्रे दत्ते एकैकस्मिन् परिसमाप्यते यत्र ।
तत अधस्तनद्वीपोदधिषु कृतगर्तस्तै भर्तव्य ॥ ३० ॥

दीव । द्वीपे समुद्रे च दत्ते एकैकस्मिन् सर्षपे परिसमाप्यते यत्र तत आरभ्य अधस्तनसर्वद्वीपोदधिषु प्राक्तनवेधप्रमाणेन कृतगर्तं पुनस्तैः सर्षपैर्भर्तव्य ॥ ३० ॥

अथ तस्य द्वितीयकुडस्य क्षेत्रफलानयनोपायभूतगच्छमाह,—

बिदिये पढम कुंड गच्छो तदिए दु पढमबिदियदुग ।
इदि सव्वपुव्वगच्छा तहिं तहिं सरिसवा सज्झा ॥ ३१ ॥

द्वितीये प्रथम कुंड गच्छ तृतीये तु प्रथमद्वितीयाद्विकम् ।
इति सर्वपूर्वगच्छा तै तै सर्षपा साध्या ॥ ३१ ॥

बिदिये । द्वितीयकुंडसर्षपानयने प्रथमकुंडसर्षपप्रमाणं गच्छ , तृतीयकुंडसर्षपानयने तु प्रथमद्वितीयकुंडसर्षपमानं गच्छ इति सर्वपूर्वपूर्वगच्छास्तैस्तैः सर्षपाः साध्या त त गच्छं गृहीत्वा " रूऊणाहियपद " इत्यादिना सूचीव्यासमानीय पश्चात् " वासो तिगुणो परिही " इत्यादि तत्र तत्र कुंडे सर्षपाः साध्या इत्यर्थ ॥ ३१ ॥

अथ तत्कृतगर्ते भृते सति किं जातमित्याह,—

बिदिए वारे पुण्णे अणवट्ठिदमिदि सलागकुंडम्हि ।
पुणरवि णिक्खिविदव्वा अवरेगा सरिसवाण सला ३२

द्वितीय वारे पूर्णे अनवस्थितमिति शलाकाकुंडे ।
पुनरपि निक्षेप्तव्या अपरैका सर्षपाणां शलाका ॥ ३२ ॥

बिदिए । द्वितीय वारे पूर्णे अनवस्थितकुंडमिति शलाकागर्ते पुनरपि निक्षेप्तव्या अपरैका सर्षपाणां शलाका ॥ ३२ ॥

अथैवं कृतेपि किमित्यत्राह,—

एव सलागभरणे रूव णिक्खिवदु पडिसलागम्हि ।
रित्तीकदेवि भरिदे अवरेग पडिसलागम्हि ॥ ३३ ॥

एवं शलाकाभरणे रूपं निक्षिपतु प्रतिशलाकायाम् ।
रिक्तीकृतेपि भृते अपरैकं प्रतिशलाकायाम् ॥ ३३ ॥

एवं । एवमेव शलाकाभरणे रूपं (एकं) निक्षिपतु प्रतिशलाकाकुंडे रिक्तीकृतेपि भृते सति अपरैकं निक्षिपतु प्रतिशलाकाकुंडे ॥ ३३ ॥

अथैवं सत्यपि किमित्यत्राह,—

एवं सावि य पुण्णा एवं णिक्खिव महासलागम्हि ।
एसावि कमा भरिदा चत्तारि भरंति तक्काले ॥ ३४ ॥

एवं सापि च पूर्णा एकं निक्षिप महाशलाकायाम् ।
एषापि क्रमाद्भृता चत्वारि भ्रियंते तत्काले ॥ ३४ ॥

एवं सा । एवमेव सापि च पूर्णेति एकं निक्षिपतु महाशलाकाकुंडे, एषापि क्रमाद्भृता तस्मिन्नेव काले चत्वारि कुंडानि भ्रियंते ॥ ३४ ॥

अथैतावता भरणेन किमित्यत्राह,—

चरिमण्णवट्ठिदकुंडे सिद्धत्था जेत्तिया पमाणा तं ।
अवरपरीतमसंखं रूऊणे जेट्ठ संखेज्जं ॥ ३५ ॥

चरमानवस्थितकुंडे सिद्धार्था यावंति प्रमाणं तत् ।
अवरपरीतमसंख्यं रूपोने ज्येष्ठं संख्येयम् ॥ ३५ ॥

चरिम । चरमानवस्थितकुंडे सिद्धार्था यावंति प्रमाणानि तदवरपरीतासंख्यं । तत्र रूपे ऊने ज्येष्ठं संख्येयम् ॥ ३५ ॥

अथैतदेव पुनः संख्यातानंतासंख्यातभेदप्रभेदं षोडशगाथयाह;—

अवरपरित्तस्सुवरिं एगादीवड्ढिदे हवे मज्झं ।
अवरपरित्तं विरलिय तमेव दाऊण संगुणिदे ॥ ३६ ॥

अवरपरीतस्योपरि एकादिवर्द्धिते भवेन्मध्यम ।
अवरपरीत विरलय्य तदेव दत्वा सगुणिते ॥ २६ ॥

अवर । अवरपरीतस्योपरि एकादिके वृद्धे सति भवे मध्य जघन्यपरी तमेकैकरूपेण विरलय्य तदेव जघन्यपरिमित रूप प्रति दत्त्वा सगुणिते ॥ २६ ॥

अवर जुत्तमसंख आवलिमरिस तमेव रूऊण ।
परिमिदवरमावलिकिदि दुगवारवर विरूव जुत्तवर ।२७।

अवर युक्तमसंख आवलिसदृश तदेव रूपोनम ।
परिमितवर आवलिकृतिर्द्विकवारावर विरूप युक्तवरम् ॥ २७ ॥

अवर । जघन्ययुक्तासंख्य स्यात् । एतदेवावलिसदृश । तदेव रूपोन परिमितासंख्यातवर आवलिकृति द्विकवारासंख्यातजघन्य तदेव विगतरूप चेत् युक्तासंख्यातोत्कृष्ट स्यात् ॥ २७ ॥

अवरे सलागविरलणदिज्जे विदिय तु विरलिदूण तहिं ।
दिज्ज दाऊण हदे सलागदो रूवमणिज्ज ॥ २८ ॥

अवरे शलाकाविरलनदेये द्वितीय तु विरलय्य तस्मिन् ।
देय दत्त्वा हते शलाकात रूपमपनेतव्यम् ॥ २८ ॥

अवरे । द्विकवारासंख्यातजघन्ये शलाकाविरलनदेयमानरूपेण त्रिधा कृते तत्र द्वितीय विरलय्य तस्मिन् विरलिते देय दत्त्वा अन्योन्यहतमिति शलाकाराशित रूपमपनेतव्यम् ॥ २८ ॥

तत्थुप्पण्ण विरलिय तमेव दाऊण सगुण किच्चा ।
अवणय पुणरवि रूव पुव्विल्लसलागरासीदो ॥ २९॥

तत्रोत्पन्न विरलय्य तदेव दत्वा सगुण कृत्वा ।
अपनयेत् पुनरपि रूप पूर्वतनशलाकाराशित ॥ २९ ॥

संपूर्णं । तदन्योन्याभ्यस्तराशिं विरलय्य तदेव दत्त्वा संगुणं कृत्वा अन्यतरेण पुनरपि एवं पूर्ववच्छलाकाराशिरिति ॥ ३९ ॥

एवं सलागरासिं णिट्ठाविय तत्थतणमहारासिं ।
किच्चा तिप्पडि विरलणदिज्जादी कुणदि पुव्व वा ॥ ४० ॥

एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्रतनमहाराशिम् ।
कृत्वा त्रिप्रति विरलनदेयादि करोति पूर्वं वा ॥ ४० ॥

एवं सला । एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्रतनान्योन्याभ्यस्तमहाराशिं कृत्वा त्रिःप्रति विरलनदेयादि पूर्वमिव शलाकात्रयनिष्ठापनं कुर्यात् ॥ ४० ॥

एवं बिदियसलागं तदियसलागं च णिट्ठिदे तत्थ ।
जं मज्झासंखेज्जं तहिमदे पक्खिवदव्वा ॥ ४१ ॥

एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठितायां तत्र ।
यत् मध्यासंख्यातं तस्मिन् एते प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४१ ॥

एवं । एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठापितायां सत्यां तत्र यन्मध्यमासंख्यातं जातं तस्मिन् एते अग्रे वक्ष्यमाणा राशयः प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४१ ॥

धम्माधम्मिगिजीवगलोगागासप्पदेसपत्तेया ।
तत्तो असंखगुणिदा पदिट्ठिदा छप्पि रासीओ ॥ ४२ ॥

धर्माधर्मैकजीवलोकाकाशप्रदेशप्रत्येकाः ।
ततः असंख्यगुणिताः प्रतिष्ठिताः षडपि राशयः ॥ ४२ ॥

धम्मा । धर्माधर्मैकजीवलोकाकाशप्रदेशा अप्रतिष्ठितप्रत्येकाः ततो लोकाकाशप्रदेशादसंख्यातगुणिताः । ततोऽपि प्रतिष्ठितप्रत्येका असंख्यातलोकगुणिताः । एवं षडपि राशयः प्रक्षेप्तव्याः ॥ ४२ ॥

अवरपरीतस्योपरि एकादिवर्द्धिते मध्यमयम् ।
अवरपरीतं विरल्य्य तदेव दत्वा संगुणिते ॥ २६ ॥

अवर । अवरपरीतस्योपरि एकादिके वृद्धे सति मध्यमध्यं जघन्यपरी
तमेकैकरूपेण विरलय्य तदेव जघन्यपरिमितं रूपं प्रति दत्त्वा संगुणिते ॥२६

अवर जुत्तमसंख आवलिसरिसं तमेव रूऊणं ।
परिमिदवरमावलिकिदि दुगवारवरं विरूव जुत्तवरं ।२७

अवरं युक्तमसंख्य आवलिसदृशं तदेव रूपोनम् ।
परिमितवरं आवलिकृतिर्द्विकवारावरं विरूपं युक्तवरम् ॥ २७ ॥

अवरं । जघन्ययुक्तासंख्यं स्यात् । तदेवावलिसदृशं । तदेव रूपोन
परिमितासंख्यातवरं आवलिकृति द्विकवारासंख्यातजघन्यं तदेव विगतरूप
यत् युक्तासंख्यातोत्कृष्टं स्यात् ॥ २७ ॥

अवरे सलागविरलणदिज्जे विदियं तु विरलिदूण तहिं ।
दिज्जं दाऊण हदे सलागदो रूवमणिज्ज ॥ २८ ॥

अवरे शलाकाविरलनदेये द्वितीयं तु विरलय्य तस्मिन् ।
देयं दत्वा हते शलाकातः रूपमपनेतव्यम् ॥ २८ ॥

अवर । द्विकवारासंख्यातजघन्ये शलाकाविरलनदीयमानरूपेण त्रिधा
कृते तत्र द्वितीयं विरलय्य तस्मिन् विरलिते देयं दत्वा अन्योन्यहतमिति
शलाकाराशितः रूपमपनेतव्यम् ॥ २८ ॥

तदुप्पण्णं विरलिय तमेव दाऊण संगुणं किच्चा ।
अवणय पुणरवि रूवं पुव्विल्लसलागरासीदो ॥ २९॥

तदुत्पन्नं विरलय्य तदेव दत्वा संगुणं कृत्वा ।
अपनयेत् पुनरपि रूपं पूर्वतनशलाकाराशितः ॥ २९ ॥

सप्पुण्णं । शलाकोद्धरणानन्तरं शिरस्य तत्रैव दत्त्वा संपूर्ण कृत्वा पुनरपि एवं पूर्वानवस्थाकारादि ॥ ३९ ॥

एवं सलागरासिं णिट्ठाविय तप्पतणमहारासिं ।
किया तिप्पाटि विरलणदिज्जादी कुणदि पुव्वं वा॥४०॥

एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्पन्नमहाराशिम् ।
कृत्वा त्रि प्रति विरलनदेयादि करोति पूर्वं वा ॥ ४० ॥

एवं सला । एवं शलाकाराशिं निष्ठाप्य तत्पन्नान्योन्याभ्यस्तमहाराशि कृत्वा त्रिप्रतिविरलनदेयादि पूर्ववत् शलाकानवस्थापनं कुर्यात् ॥ ४० ॥

एव बिदियसलाग तदियसलाग च णिट्ठिदे तत्थ ।
ज मज्झासंखेज्ज तहिमद पक्खिसयदव्या ॥ ४१ ॥

एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठितायां तत्र ।
यत् मध्यासंख्यातं तस्मिन् एते प्रक्षेप्याः ॥ ४१ ॥

एव । एवं द्वितीयशलाकायां तृतीयशलाकायां च निष्ठापितायां सत्यां तत्र मध्यमासंख्यातं जातं तस्मिन् एते अग्रे वक्ष्यमाणा राशयः प्रक्षेप्याः ॥ ४१ ॥

धम्माधम्मिगिजीवगलोगागासप्पदेसपत्तेया ।
तत्तो असखगुणिदा पदिट्ठिदा छप्पि रासीओ ॥ ४२ ॥

धर्माधर्मैकजीवलोकाकाशप्रदेशप्रत्येकाः ।
ततः असंख्यगुणिताः प्रतिष्ठिताः षडपि राशयः ॥ ४२ ॥

धम्मा । धर्माधर्मैकजीवलोकाकाशप्रदेशाः अप्रतिष्ठितप्रत्येकाः ततो लोकाकाशप्रदेशादसंख्यातगुणिताः । ततोपि प्रतिष्ठितप्रत्येकाः अप्रत्येका असंख्यातलोकगुणिताः एवं षडपि राशयः प्रक्षेप्याः ॥ ४२ ॥

त कयतिप्पाडिरासिं विरलादि कारिय पढमबिदियसल।
तदिय च परिसमाणिय पुव्व वा तत्थ दायव्वा ॥ ४३ ॥

त कृतत्रि प्रतिराशिं विरलादिं कृत्वा प्रथमद्वितीयशलाम् ।
तृतीया च परिसमाप्य पूर्वं वा तत्र दातव्या ॥ ४३ ॥

त कय । तं कृतत्रि प्रतिराशिं विरलादि कृत्वा प्रथमशलाकां द्वितीय शलाका तृतीयशलाका च परिसमाप्य पूर्वमिव एते तत्र दातव्या ॥ ४३ ॥

कप्पठिदिबधपच्चयरसबधज्झवसिदा असखगुणा ।
जोगुक्कस्सविभागप्पडिच्छिदा बिदियपक्खेवा ॥४४॥

कल्पस्थितिबधप्रत्ययरसबधाध्यवसिता असख्यगुणा ।
योगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदा द्वितीयप्रक्षेपा ॥ ४४ ॥

कप्पठिदि । कल्प सख्यातपल्यमान, तत स्थितिबधप्रत्यया असख्यातलोकगुणिता, तत रसबधाध्यवसिता असख्यातलोकगुणा, ततो योगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदा असख्यातलोकगुणा । एते द्वितीयप्रक्षेपा ॥४४॥

त रासि पुव्व वा तिप्पाडि विरलादिकरणमेत्थ किदे ।
अवरपरित्तमणत रूऊणमसखसखवर ॥ ४५ ॥

त राशिं पूर्वं वा त्रि प्रति विरलादिकरण अत्र कृते ।
अवरपरीतमनत रूपोनमसख्यासख्यवरम् ॥ ४५ ॥

तरासि । त राशिं पूर्वमिव त्रि प्रति कृत्वा विरलनादिकरण च विधाय अस्मिन् कृते अवरपरीतानत तत् रूपोन चेत् असख्यातासख्यातवरम्॥४५॥

अवरपरिंच विरलिय दाऊणेद परोपर गुणिदे ।
अवर जुत्तमणत अभव्वसममेत्थ रूऊणे ॥ ४६ ॥

जेट्ठपरित्तासंखं रूऊणे जहण्णजुत्ताणंतं ।
अवरमणंताणंतं रूऊणे जुत्तणंतवरं ॥ ४७ ॥

अवरपरीतं विरलयित्वा दत्त्वा इदं परस्परं गुणितं ।
अवरं युक्तानन्तं अवरमपरं अत्र रूपोने ॥ ४६ ॥
ज्येष्ठपरीतानन्तं वर्गे गृहीते जघन्ययुक्तस्य ।
अवरं अनन्तानन्तं रूपोने युक्तानन्तवरम् ॥ ४७ ॥

अवरं परीतं । जघन्यपरीतानन्तं विरलयित्वा तत्रैव दत्त्वा तस्मिन्
रूपं प्रति गुणिते अवरं युक्तानन्तं भवति । अत्र रूपोने सति उत्कृष्ट
परीतानन्तं भवति । जघन्ययुक्तानन्तस्य वर्गे गृहीते अवरमनन्तानन्तं स्यात् ।
अत्र रूपोने कृते युक्तानन्तस्य वरं स्यात् ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अवराणंताणंतं तिप्पडि रासिं करित्तु विरलादिं ।
तिसलाग च समाणिय छद्दव्वं पक्खिवेदव्वा ॥ ४८ ॥

अवरानन्तानन्तं त्रि प्रतिराशिं कृत्वा विरलनादि ।
त्रिशलाकां च समाप्य द्रव्ये एते प्रक्षेप्तव्या ॥ ४८ ॥

अवरं । अवरानन्तानन्तं राशिं त्रिःप्रतिकं कृत्वा विरलनादिकं त्रिशलाकां
च समाप्य अत्र द्रव्ये एते प्रक्षेप्तव्या ॥ ४८ ॥

सिद्धा णिगोदसाहियवणप्फदिपोग्गलपमा अणंतगुणा ।
काल अलोगागासं छच्चेदेणंतपक्खेवा ॥ ४९ ॥

सिद्धा निगोदसहितवनस्पतिपुद्गलप्रमा अनन्तगुणा ।
काल अलोकाकाशं षडेते अनन्तप्रक्षेपा ॥ ४९ ॥

सिद्धा निगोद । जीवराशेरनन्तैकभाग ततोनन्तगुण पृथिव्या
दिचतुष्टय प्रत्येकवनस्पतित्रसराशिभिन्नानन्तसंसारि [illegible] निगोद

राशि , निगोदराशे सकाशात् वनस्पतिराशि प्रत्येकेन साधिक १३०। ततो जीवराशेरनतगुण पुद्गलराशि १६ स, ततोनतगुण कालराशि १६ स स, ततोप्यनतगुण अलोकाकाशराशि १६ स स स। एतेते अनतरूपप्रक्षेपा ॥ ४९ ॥

त तिण्णिवारवग्गिदसवग्ग करिय तत्थ दायव्वा ।
धम्माधम्मागुरुलघुगुणाविभागप्पाडिच्छेदा ॥ ५० ॥

त त्रिवारवर्गितसवर्ग कृत्वा तत्र दातव्या ।
धर्माधर्मागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदा ॥ ५० ॥

त तिण्णि । त राशिं त्रिवारवर्गितसवर्ग कृत्वा त्रिःप्रति विरलनादिक त्रिशलाका च समाप्येयथ । तत्र राशौ दातव्या धर्माधर्मद्रव्यागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदा । स स ॥ ५० ॥

लद्धं तिवार वग्गिदसवग्ग करिय केवले णाणे ।
अवणिय त पुण खित्ते तमणताणतमुक्कस्स ॥ ५१ ॥

लब्ध त्रिवार वर्गितसवर्ग कृत्वा केवलज्ञाने ।
अपनीय तं पुन क्षिप्ते तमनतानतमुत्कृष्टम् ॥ ५१ ॥

लद्धं तिवार । लब्ध त्रिवारवर्गितसवर्ग कृत्वा पूर्वमिव त्रि प्रति विरलनादि त्रिशलाका च समाप्येयथं । एतदेव केवलज्ञान अपनीय तदेव तस्मिन् पुनर्निक्षिप्ते यो राशिरुत्पद्यते त अनतानतस्योत्कृष्ट जानीहि ॥ ५१ ॥

अथ श्रुतज्ञानादीना विषयस्थान निरूपयति,—

जावदियं पच्चक्ख जुगव सुदओहिकेवलाण हवे ।
तावदियं सखेज्जमसखमणतं कमा जाणे ॥ ५२ ॥

यावत् प्रत्यक्ष युगपत् श्रुतावधिकेवलाना भवेत् ।
तावत् सख्यातमसख्यातमनन्त क्रमात् जानीहि ॥ ५२ ॥

जायदिर्य। यावन्मात्रं मत्यक्षं युगपत् श्रुतावधिकेवलज्ञानानां भवेत् तावन्मात्रं सख्यातमसंख्यातमनंतं क्रमाज्जानीहि ॥ ५२ ॥

अथ चतुर्दशधाराणां नामानि निवेदयति,–

धारेत्थ सव्वसमकदिघणमाउगइदरवेकदीविंद।
तस्स घणाघणमादी अंत ठाण च सव्वत्थ ॥ ५३ ॥

धारा अत्र सर्वसमकृतिघनमातृकेतरद्विकृतिवृन्दम्।
तस्य घनाघनमादि अंतं स्थानं च सर्वत्र ॥ ५३ ॥

धारेत्थ। धारा अत्र शास्त्रे निरूप्यते। सर्वधारा, समधारा, कृतिधारा, घनधारा, कृतिमातृकधारा, घनमातृकधारा, समादिभ्य इतरा विषमधारा, अकृतिधारा, अघनधारा, अकृतिमातृकधारा, अघनमातृकधारा इति, द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्विरूपघनाघनधारा। आसामाद्यंतस्थानानि च सर्वत्र धारासु कथ्यन्ते ॥ ५३ ॥

अथ सर्वधारास्वरूपं निरूपयति,—

उत्तेथ सव्वधारा पुव्व एगादिगा हवेज्ज जदि।
सेसा समादिधारा तत्थुप्पण्णेति जाणाहि ॥ ५४ ॥

उक्तैव सर्वधारा पूर्व एकादिका भवेत् यदि।
शेषा समादिधारा तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ ५४ ॥

उत्तेथ। उक्तैव सर्वधारा स्यात्। पूर्वमेकादिका भवेद्यदि, शेषा समादिधारा सर्वास्तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ अंकसंदृष्टौ च ज्ञातव्या "१,२, ३,४,५,६,७,८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५, के १६" ॥ ५४ ॥

अथ समधारामाह,—

बेयादि बिउत्तरिया केवलपज्जतया समा धारा।
सव्वत्थ अवरमवर रूऊणुक्कस्समुक्कस्स ॥ ५५ ॥

राशि, निगोदराशेः सकाशात् वनस्पतिराशि मन्येकेन साधिक १३०। ततो जीवराशेरनंतगुण पुद्गलराशि १६ ख, ततोनंतगुण कालराशि १६ ख ख, ताभ्यनंतगुण अलोकाकाशराशि १६ ख ख ख। पदेरे अनंतस्थानप्रक्षेपा ॥ ४९ ॥

तं तिण्णिवारवग्गिदसवग्ग करिय तत्थ उप्पण्णा ।
धम्माधम्मागुरुलघुगुणाविभागप्पडिच्छेदा ॥ ५० ॥

तं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा तत्र उत्पन्नाः ।
धर्माधर्मागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ५० ॥

तं तिण्णि । तं राशिं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा त्रिप्रति विरलनादिक विरलनादिकं समाप्तेऽर्थः । तत्र राशौ उत्पन्नाः धर्माधर्मद्रव्यागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः । ख ख ॥ ५० ॥

तम्हं तिवार वग्गिदसंवग्गं करिय केवले णाणे ।
अवणिय तं पुण मिलिदे तमणंताणंतमुक्कस्सं ॥ ५१ ॥

तस्मिन् त्रिवारं वर्गितसंवर्गं कृत्वा केवलज्ञाने ।
अपनीय तं पुनः मिलिते तदनन्तानन्तमुत्कृष्टम् ॥ ५१ ॥

तम्हं तिवार । तस्मिन् त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा पूर्ववत् त्रिप्रति [illegible] [illegible] समाप्ते [illegible] । [illegible] केवलज्ञाने अपनीय तद्राशि [illegible] [illegible] । तदनंतानंतमुत्कृष्टं भवति ॥ ५१ ॥

[illegible]

जावदियं पच्चक्खं जुगवं सुदओहिकेवलाण हवे ।
तावदियं संखेज्जमसंखमणंतं कमा जाण ॥ ५२ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ५२ ॥

आयदिय। यावन्मात्रं प्रत्यक्षं युगपत् श्रुतावधिकेवलज्ञानानां भवत् तावन्मात्रं संख्यातमसंख्यातमनन्तं क्रमाज्जानीहि ॥ ५२ ॥

अथ चतुर्दशधाराणां नामानि निवेदयति,—

धारेत्थ सव्वसमकदिघणमाउगइदरवेकदीविंद।
तस्स घणाघणमादी अंतं ठाणं च सव्वत्थ ॥ ५३ ॥

धारा अत्र सर्वसमकृतिघनमातृकेतरद्विरूपवृन्द।
तस्य घनाघनमादि अंतं स्थानं च सर्वत्र ॥ ५३ ॥

धारेत्थ। धारा अत्र शास्त्रे निरूप्यंते। सर्वधारा, समधारा, कृतिधारा, घनधारा, कृतिमातृकधारा, घनमातृकधारा, समादिभ्य इतरा विषमधारा, अकृतिधारा, अघनधारा, अकृतिमातृकधारा, अघनमातृकधारा इति, द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्विरूपघनाघनधारा। आसामाद्यंतस्थानानि च सर्वत्र धारासु कथ्यते ॥ ५३ ॥

अथ सर्वधारास्वरूपं निरूपयति,—

उत्तेव सव्वधारा पुव्वं एगादिगा हवेज्ज जदि।
सेसा समादिधारा तत्थुप्पण्णेति जाणाहि ॥ ५४ ॥

उक्तैव सर्वधारा पूर्वं एकादिका भवेत् यदि।
शेषा समादिधारा तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ ५४ ॥

उत्तेव। उक्तैव सर्वधारा स्यात्। पूर्वमेकादिका भवेद्यदि, शेषा समादिधारा सर्वास्तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ अंकसंदृष्टौ च ज्ञातव्या "१,२, ३,४,५,६,७ ८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५, के १६" ॥ ५४ ॥

अथ समधारामाह,—

बेयादि बिउत्तरिया केवलपज्जतया समा धारा।
सव्वत्थ अवरमवरं रूऊणुक्कस्समुक्कस्सं ॥ ५५ ॥

राशि, निगोदराशेः सकाशात् वनस्पतिराशिः प्रत्येकेन साधिक १३०। ततो जीवराशेरनंतगुण पुद्गलराशि १६ ख, ततोऽनंतगुण कालराशि १६ ख ख, ततोऽप्यनंतगुण अलोकाकाशराशि १६ ख ख ख। एते अनंतरूपप्रक्षेपा ॥ ४९ ॥

तं तिण्णिवारवग्गिदसंवग्गं करिय तत्थ दायव्वा।
धम्माधम्मागुरुलहुगुणाविभागप्पडिच्छेदा ॥ ५० ॥

तं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा तत्र दातव्या ।
धर्माधर्मागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ५० ॥

तं तिण्णि । तं राशिं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा त्रि प्रति विरलनादि शलाका च समाप्येत्यर्थः । तत्र राशौ दातव्याः धर्माधर्मद्रव्यागुरुलघुगुणाविभागप्रतिच्छेदाः । ख ख ॥ ५० ॥

लद्धं तिवारं वग्गिदसंवग्गं करिय केवले णाणे ।
अवणिय तं पुण खित्ते तमणंताणंतमुक्कस्सं ॥ ५१ ॥

लब्धं त्रिवारं वर्गितसंवर्गं कृत्वा केवलज्ञाने ।
अपनीय तं पुनः क्षिप्ते तमनंतानंतमुत्कृष्टम् ॥ ५१ ॥

लद्धं तिवारं । लब्धं त्रिवारवर्गितसंवर्गं कृत्वा पूर्ववत् त्रि प्रति विरलनादि शलाका च समाप्य इत्यर्थः । एतदेव केवलज्ञाने अपनीय तदेव तस्मिन् पुनर्निक्षिप्ते [illegible] तं अनंतानंतमुत्कृष्टं जानीहि ॥ ५१ ॥

अथ [illegible] निरूपयति,—

जावदियं पच्चक्खं जुगवं सुदओहिकेवलाण हवे ।
तावदियं [illegible] कमा णाणा ॥ ५२ ॥

यावत् प्रत्यक्षं युगपत् श्रुतावधिकेवलानां भवेत् ।
तावत् [illegible] क्रमात् जानीहि ॥ ५२ ॥

आयदियं। यावन्मात्र मत्यर्थं युगपत् श्रुतावधिकेवरज्ञानानां भवेत् तावन्मात्रं संख्यातमसंख्यातमनंत क्रमा जानीहि ॥ ५२ ॥

अथ चतुर्दशधाराणां नामानि निवेदयति;—

धारेत्थ सव्वसमकादिघणमाउगइदरवेकदीविंद ।
तस्स घणाघणमादी अंत ठाण च सव्वत्थ ॥ ५३ ॥

धारा अत्र सर्वसमकृतिघनमातृकेतरद्विरूपवृन्दम् ।
तस्य घनाघनमादि अंतं स्थानं च सर्वत्र ॥ ५३ ॥

धारेत्थ। धारा अत्र शास्त्रे निरूप्यते। सर्वधारा, समधारा, कृतिधारा, घनधारा, कृतिमातृकधारा, घनमातृकधारा, समादिभ्य इतरा विषमधारा, अकृतिधारा, अघनधारा, अकृतिमातृकधारा, अघनमातृकधारा इति, द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्विरूपघनाघनधारा। आसामाद्यंतस्थानानि च सर्वत्र धारासु कथ्यते ॥ ५३ ॥

अथ सर्वधारास्वरूप निरूपयति,—

उत्तेव सव्वधारा पुव्व एगादिगा हवेज्ज जदि ।
सेसा समादिधारा तत्थुप्पण्णेति जाणाहि ॥ ५४ ॥

उक्तैव सर्वधारा पूर्वं एकादिका भवेत् यदि ।
शेषा समादिधारा तत्रोत्पन्ना इति जानाहि ॥ ५४ ॥

उत्तव। उक्तैव सर्वधारा स्यात्। पूर्वमेकादिका भवेद्यदि, शेषा समादिधारा सर्वास्तत्रोत्पन्ना इति जानीहि ॥ अंकसदृष्टो च ज्ञातव्या " १,२,३,४,५,६,७ ८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५, के १६ " ॥ ५४ ॥

अथ समधारामाह,—

बयादि बिउत्तरिया केवलपज्जतया समा धारा ।
सव्वत्थ अवरमवर रूऊणुक्कस्समुक्कस्सं ॥ ५५ ॥

द्व्यादि द्व्युत्तरिका केवलपर्यन्ता समा धारा ।
सर्वत्र अवरमवरं रूपोनोत्कृष्टं उत्कृष्टम् ॥ ५५ ॥

बयादि । द्व्यादिका द्व्युत्तरा केवलज्ञानपर्यन्ता समधारा प्रोक्ता सर्वत्र सङ्ख्यातादिषु समधारास्थितजघन्यमेवात्र जघन्यं । सर्वत्रागतरूपन्यूनोत्कृष्टमत्रोत्कृष्टं स्यात् । अङ्कसंदृष्टौ २, ४, ६, ८, १०, १२, १४, के १६ ॥५५॥

एगादि बिउत्तरिया विसमा रूऊणकेवलवसाणा ।
रूवजुदमवरमवरं वरं वरं होदि सव्वत्थ ॥ ५६ ॥

एकादि द्व्युत्तरा विषमा रूपोनकेवलावसाना ।
रूपयुतमवरमवरं वरं वरं भवति सर्वत्र ॥ ५६ ॥

एगा । एकादिका द्व्युत्तरा विषमधारा रूपन्यूनकेवलावसाना । सर्वत्रागतसंख्यातादीनां जघन्यं रूपयुतं चेत् विषमधारायामवरं स्यात् तत्रोत्कृष्टमत्र सर्वत्रोत्कृष्टं स्यात् । अङ्कसंदृष्टौ १, ३, ५, ७, ९, ११, १३, के १५ ॥ ५६ ॥

अथ समविषमधारयोः स्थानं तद्वद्वानयनं चाह,—

केवलणाणस्सद्धं ठाणं समविसमधारयाण हवे ।
आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे इगिजुदे ठाणा ॥ ५७ ॥

केवलज्ञानस्यार्धं स्थानं समविषमधारयोर्भवेत् ।
आदौ अन्ते शुद्धे वृद्धिहृते एकयुते स्थानानि ॥ ५७ ॥

केवल । केवलज्ञानस्यार्धं स्थानं समविषमधारयोर्भवेत् । आदौ २ अन्ते १६ शुद्धे सति १४ वृद्धि २ हृते ७ एकयुते च सति ८ स्थानानि भवन्ति । एवं चयोत्तरे सर्वत्र द्रष्टव्यम् ॥ ५७ ॥

अथ कृतिधारामाह,—

इगिचादि केवलंत कदी पदं तप्पदं कदी अवरं ।
इगिहीणं तप्पदकदी हेट्ठिमउक्कस्स सव्वत्थ ॥ ५८ ॥

एवं वरवर्गादि केवलांता कृति पदं तत्पदं कृति भवेत् ।
एकद्वीनतत्पदकृतिः जघन्यमुत्कृष्टं सर्वत्र ॥ ५८ ॥

इगि वग्गादि । एवं वर्गादि केवलज्ञानांता कृतिधारा स्यात् । पदं कृतिधारास्थानं तत्पदं केवलज्ञानस्य प्रथममूलमात्रं संख्यातादीनां जघन्यं कृत्यात्मकमेव एकद्वीनतत्पदसंख्यातादीनां प्रथममूलस्य कृतिरेव सर्वजघन्यानां-घन्यनोत्कृष्टप्रमाणं भवति । अंकसंदृष्टी १, ४, ९, के १६ ॥ ५८ ॥

अथाकृतिधारोच्यते,—

दुप्पहुदिरूववज्जिदकेवलणाणावसाणमकदीए ।
सेसविही विसम वा सपदूण केवल ठाण ॥ ५९ ॥

द्विप्रभृति रूपवर्जितकेवलज्ञानावसानमकृतौ ।
शेषविधि विषमा वा स्वपदोनं केवलं स्थानम् ॥ ५९ ॥

दुप्पहु । द्विप्रभृति रूपवर्जितकेवलज्ञानावसाने अकृतिधारायां शेष विधि संख्यातादीनां जघन्यमुत्कृष्टं च विषमधारावत् ' रूपयुक्तमवरमवरं वर हादि सव्वत्थ " इति ज्ञातव्यमित्यर्थः । कृतिस्थानरहितत्वात् स्वप्रथम मूलोनं केवलज्ञाने स्थानं स्यात् । अंकसंदृष्टी २,३,५,६,७,८,१०,११, १२,१३,१४, के १५ ॥ ५९ ॥

अथ घनधारा कथ्यते,—

इगिअट्टपहुदि केवलदलमलस्सुवरि घडिदठाणजुदे ।
तग्घणमत्त चिंदि ठाण आसण्णघणमूलम् ॥ ६० ॥

एकाष्टप्रभृति केवलार्धमूलस्योपरि घटितस्थानयुते ।
तद्घनमत्र वदे स्थान आसन्नघनमूलम् ॥ ६०

इगि । अट्टसम्मो प्ररूप्यते । एकाष्टप्रभृति १ ८ २७, एवमनंतानि घनस्थानानि गत्वा केवल —ज्ञानस्य घनरूपस्य २७६८ घ मल तस्मि

३२ तस्यापि घनमूलस्यापि पञ्चमवर्गस्थानानां उत्पत्तिस्थानघनमूलस्थानं २३, २४, २५, २६, ३७, ३८, ३९, ४०, श्रीस्थाने गृहीते सति तस्य ४० घनो जीवराशिः = ४००० । तस्य कथम् ? द्वात्रिंशद्घनमूलस्य ४० द्रुताधिकस्य घनमूलस्य ४१ घन गृहीते ६८९२१ केवलज्ञान वर्गितसम राशिस्थानं तयोरन्तर्योः ४० घन ६४००० घनधारायाम् भवति । स एवाग्रमघन इत्युच्यते, तत्प्रतिबद्ध घनमूलमिति कथ्यते । एवं केवलज्ञानस्यासन्नघनमूलप्रमाणं स्यात् ॥ ६० ॥

अथ केवलज्ञानस्य घनात्मकत्व उत्पत्ति पूर्वोक्त दर्शयन्नघनधारामाह,—

समकदिसल थिरूदीण दलिदे घणमेत्थ विसमगे तुरिए ।
अघणस्स दु सव्व वा विघणपदं केवलं ठाणं ॥ ६१ ॥

समकृतिशलाके द्विगुणे दलिते घन अत्र विषमके तुरिये ।
अघनस्य तु सर्वं वा विघनपदं केवलं स्थानम् ॥ ६१ ॥

समक । द्विरूपवर्गधारायां समकृतिशलाके वर्गराशौ दलित घनो जायते । यथा षोडशकादिके १६।६५=।१८=। अत्रैव धारायां विषमकृतिशलाके वर्गराशौ चतुर्भागे गृहीते घनो जायते । यथा चतुष्कादिके ४।२५६।४२=। एवमुक्तन्यायेन केवलज्ञानस्य वर्गशलाकानां समत्वादस्मिन् केवलज्ञाने दलिते घनो भवतीति सिद्धम् । तत्समत्व कथं ज्ञायत इति चेदिदमुच्यते । केवलज्ञानस्य वर्गशलाकाराशेर्द्विरूपवर्गधारायामेवोत्पन्नत्वात् । एतदपि कुत इति चेत् "अवरा खाइयलद्धीवग्गसलागा तदो समद्धठिदी " इति पुरस्ताद् वक्ष्यमाणत्वात् । अघनधाराया सर्वधारावत् प्रक्रिया । अत्र तु विशेष, विघनपदं घनस्थानरहितसर्वधारावदिति ग्राह्य । अस्या स्थानप्रमाण " काकाक्षिगोलकन्यायेन " विघनपदं केवलं घनस्थानन्यूनकेवलज्ञानमात्रं स्यात् । अङ्कसदृष्टौ २ ३, ४, ५, ६, ७ ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६ ॥ ६१ ॥

अथ वर्गमातृकधारामाह,—

इह वग्गमाउआए सव्वगधारव्व चरिमरासीदु ।
पढम केवलमूलं तट्ठाणं चावि तच्चेव ॥ ६२ ॥

इह वर्गमातृकायां सर्वकधारा इव चरमराशिस्तु ।
प्रथमं केवलमूलं तत्स्थानं चापि तदेव ॥ ६२ ॥

इह व । इह वर्गमातृकधारायां सर्वधारावत् चरमराशिस्तु केवलज्ञानस्य प्रथममूलं तस्याः स्थानमपि तावदेव । अङ्कसदृष्टौ । १, २, ३, के ४ ॥ ६२ ॥

अथावर्गमातृकधारोच्यते;—

अकदीमाउअ आदी केवलमूलं सरूवमंतं तु ।
केवलमणेय मज्झं मूलूणं केवलं ठाणं ॥ ६३ ॥

अकृतिमातृकाया आदिः केवलमूलं स्वरूपमन्तं तु ।
केवलमनेकं मध्यं मूलोनं केवलं स्थानम् ॥ ६३ ॥

अकदी । अकृतिमातृकधाराया आदिः केवलज्ञानस्य प्रथममूलं रूपसहितं अन्तस्तु केवलज्ञानं मध्यमनेकविधं तस्याः स्थानं स्वमूलोनकेवलज्ञानमात्रं । अङ्कसदृष्टौ ५,६,७,८,९,१०,११,१२,१३,१४,१५,१६ ॥ ६३ ॥

अथ घनमातृकधारामाह,—

घणमाउगस्स सव्वगधार वा सव्वपच्छिमो रासी ।
आसण्णविंदमूलं तमेव ठाणं विजाणाहि ॥ ६४ ॥

घनमातृकायां सर्वकधारा इव सर्वपश्चिमो राशिः ।
आसन्नवृन्दमूलं तदेव स्थानं विजानीहि ॥ ६४ ॥

घणमाउ । घनमातृकाया सर्वमागवत् प्रक्रिया, अट्ठमट्ठो प्रदर्श्यते-१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, आदि ४० । अय तु विशेष सर्वत्रिम राशि । क इति चेत, केवलज्ञानस्य ६५=आसन्नघन ६४००० प्रदर्द ४० तदेव तस्या घनमातृकाया स्थानमिति जानीहि ॥ ६४ ॥

अथाघनमातृकधारोच्यते,—

त रूवसहिदमादी केवलमवसाणमघणमाउस्स ।
आसण्णघणपदूण केवलणाण हवे ठाण ॥ ६५ ॥

तत् रूपसहित आदि केवलमवसानमघनमातृकाया ।
आसन्नघनपदोन केवलज्ञान भवेत् स्थानम् ॥ ६५ ॥

त रूव । अट्ठमट्ठो घनमातृकाया अन्त ४० स रूपसहितत्वेन ४१ अघनमातृकाया आदि अस्या अवसान केवलज्ञानमेव ६५= अस्या स्थान पुन केवलज्ञानस्य ६५= आसन्नघन ६४००० मूलो(४०)न केवलज्ञानमेव ६५४१६ भवेत् ॥ ६५ ॥

अथ द्विरूपवर्गधारा गाथाष्टकेनाह,—

बेरूववग्गधारा चउ सोलसवेसदछप्पण्ण ।
पण्णट्ठी बादाल एकट्ठ पुव्वपुव्वकदी ॥ ६६ ॥

द्विरूपवर्गधारा चत्वार षोडश द्विशतसहितषट्पञ्चाशत् ।
पण्णट्ठी द्वाचत्वारिंशत् एकाटी पूर्वपूर्वकृति ॥ ६६ ॥

बेरूव । द्विरूपवर्गधारा कथ्यते । चत्वारि ४ षोडश द्विशतसहितषट् पञ्चाशत् २५६ पण्णट्ठीसमयपरिभाषा ६५५३६ "बादाल पउण्णट्ठी छण्णउदि विहत्तरिमउण्णउदी" ४२९४९६७२९६ "एकट्ठ च चउ छस्सतय च च य सुण्णसत्ततियसत्ता । सुण्ण णव पण पच य एक्कं छक्केक्कग य छक्क च ।" १८४४६७४४०७३७०९५५१६१६ ॥ एवमुत्तरोत्तर-गुणि पुव्वपुव्वस्स कृति ॥ ६७ ॥

तो संखठाणगमणे वग्गसलागद्धछेदपढमपद।
अवरपरित्तासस्स आवलि पदरावली य हवे ॥ ६७ ॥

ततः संख्यस्थानगमने वर्गशलाकार्धच्छेदप्रथमपदम्।
अवरपरीतासंख्य आवलि प्रतरावली च भवेत् ॥ ६७ ॥

तो संखठाण। ततः संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाराशिरुत्पद्यते। ततः संख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदराशिरुत्पद्यते। ततः संख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलमुत्पद्यते। तस्मिन्नेकवारं वर्गिते जघन्यपरीतासंख्यातराशिरुत्पद्यते। ततः "उप्पज्जदि जो रासी विरलिदइगिविरलणेण" इत्यादिना वर्गशलाकादेर्निषिद्धत्वात् संख्यातस्थानानि गत्वा आवलिरुत्पद्यते। तत्संख्यातस्थानज्ञानं कथमितिचेत्। देयराशेरुपरि विरलितराश्यर्धच्छेदमात्राणि वर्गस्थानानि गत्वा विरलितराशिरुत्पद्यते इति ज्ञातव्यं। तस्यामावल्यामेकवारं वर्गितायां प्रतरावलिर्भवेत् ॥ ६७ ॥

गमिय असंखं ठाणं वग्गसलद्धछिदी य पढमपदं।
पल्लं च सूइअंगुल पदरं जगसेढिघणमूलं ॥ ६८ ॥

गत्वा असंख्यं स्थानं वर्गशलाकार्धच्छिदी च प्रथमपदं।
पल्यं च सूच्यंगुलं प्रतरं जगच्छ्रेणिघनमूलं ॥ ६८ ॥

गमिय। ततः असंख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाराशिः ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदः। ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते अद्धापल्यमुत्पद्यते। ततः विरलितराश्यर्धच्छेदमात्राणि वर्गस्थानानि गत्वोत्पन्नत्वात्तदर्धच्छेदस्यासंख्यातरूपत्वादसंख्यातस्थानानि गत्वा सूच्यंगुलमुत्पद्यते। अत्र वर्गशलाकादीनामनुत्पत्तिः कथमिति चेत्। विरलनदेयक्रमेणोत्पन्नस्य राशेः उप्पज्जदि जो रासी इत्यादिना धारात्रये वर्गशलाकादीनां निषिद्धत्वात् अस्यापि सूच्यंगुलस्य पञ्चाङ्गुलिदिमे

[illegible] । [illegible] । [illegible] ॥ ६८ ॥

तिविह महण्णालंते [illegible] मणाटिदई।
जीवो पोग्गल काला सेढीआगास तप्पदुग्गं ॥६९॥

त्रिविधं [illegible] ।
[illegible] ॥ ६९ ॥

तिविह । [illegible] । [illegible] । तत्र [illegible] । [illegible] तत्रोऽनन्तस्थानानि गत्वा [illegible], ततोऽनन्तस्थानानि गत्वा [illegible] तस्मिन्नेकवार वर्गिते जीवराशिरुत्पद्यते । अत्र [illegible] ते [illegible], ततोऽनन्तस्थानानि गत्वा पुद्गलराशिरुत्पद्यते, ततोऽनन्तस्थानानि गत्वा [illegible], ततोऽनन्तस्थानानि गत्वा श्रेण्याकाशमुत्पद्यते, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते प्रतराकाशमुत्पद्यते ॥ ६९ ॥

धम्माधम्मागुरुलहु इगिजीवागुरुलहुस्स होंति तदो।
सुहमणिअपुण्णणाणे अवरे अविभागपडिछेदा॥७०॥

धर्माधर्मागुरुलघोरेकजीवागुरुलघोः भवन्ति ततः ।
सूक्ष्मनिगोदापूर्णज्ञाने अवरे अविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ७० ॥

घनाघनम । ततोनेकस्थानानि गत्वा घनाघनाङ्गुलघनाङ्गुलविभागमतिच्छेदा ततोनेकस्थानानि गत्वा एकजीवागुलघनाङ्गुलविभागमतिच्छेदा भवति ततोनेकस्थानानि गत्वा सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकजघन्यज्ञानाविभागप्रतिच्छेदा उत्पद्यते ॥ ७० ॥

अवरा खाइयलद्धी वग्गसलागा तदो सगद्धछिदी ।
अडसगछप्पणचउरिय तदिय बिदियादि मूल च ॥७१

अवरा क्षायिकलब्धिः वर्गशलाका तत स्वकार्धच्छेदाः ।
अष्टसप्तषट्पञ्चचतुर्थ तृतीय द्वितीयादिमूलं च ॥ ७१ ॥

अवरा । ततोनेकस्थानानि गत्वा तिर्यगपर्याप्तसम्यग्दृष्टेः जघन्यक्षायिकसम्यक्त्वलब्ध्यविभागप्रतिच्छेदा ततोनेकस्थानानि गत्वा वर्गशलाका, ततोनेकस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदा ततोनेकस्थानानि गत्वा अष्टम मूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सप्तममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते षष्ठमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते पञ्चममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते चतुर्थमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते तृतीयमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते द्वितीयमूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते प्रथममूलं चोत्पद्यते ॥ ७१ ॥

सइमादिमूलवग्गे केवलमत पमाणजेट्ठमिणं ।
वरखइयलद्धिणाम सगवग्गसला हवे ठाणं ॥७२॥

सकृदादिमूलवर्गे केवलमतं प्रमाणज्येष्ठमिदम् ।
वरक्षायिकलब्धिनाम स्वकवर्गशलाका भवेत् स्थानम् ॥ ७२ ॥

सइ । सकृदेकवारं तस्यादिमूलस्य वर्गे गृहीते केवलज्ञानस्याविभागप्रतिच्छेदा । एतावदेव द्विरूपवर्गधारायामन्तं इदमेव प्रमाणज्येष्ठं एतदेवोत्कृष्टं क्षायिकलब्धिनाम । अस्या द्विरूपवर्गधारायाः स्थानं तस्य केवलज्ञानस्य वर्गशलाकाप्रमाणं भवति ॥ ७२ ॥

अथ धारात्रये सर्वत्राविशेषेण वर्गशलाकादिप्राप्तौ तन्नियममाह;—

उप्पज्जदि जो रासी विरलणदिज्जक्कमेण तस्सेत्थ।
वग्गसलद्धच्छेदा धारातिदए ण जायते ॥ ७३ ॥

उत्पद्यते य राशि विरलनदेयक्रमेण तस्यात्र।
वर्गशलाधच्छेदा धारात्रितये न जायते ॥ ७३ ॥

उपज्जदि । यत्र धाराया विरलनदेयक्रमेणोत्पन्नो यो राशिस्तयनें तस्य राशेर्वर्गशलाका अर्धच्छेदाश्च तत्रैव धारायां न जायते । इयं व्याप्ति द्विरूपवर्गादिधारात्रये । अङ्कसदृष्टौ विरलनराशि १६ देयराशि १६ उत्पन्नराशी १८—तस्यार्धच्छेदा ६४ तस्य वर्गशलाका ६ द्विरूपवर्गधारायां न जायते ॥ ७३ ॥

अथ धारात्रये उपर्युपरि राशावर्धच्छेदप्रमाणमाह,—

वग्गादुवरिमवग्गे दुगुणा दुगुणा हवंति अद्धछिदी।
धारातय सट्ठाणे तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे ॥ ७४ ॥

वर्गादुपरिमवर्गे द्विगुणा द्विगुणा भवति अर्धच्छेदाः ।
धारात्रये स्वस्थाने त्रिगुणा त्रिगुणा परस्थाने ॥ ७४ ॥

वग्गा । वर्गादुपरिमवर्गे द्विगुणा द्विगुणा अर्द्धच्छेदा भवति धारात्रये स्वस्थाने, त्रिगुणा त्रिगुणा परस्थाने । इयं व्याप्तिर्द्विरूपवर्गादिधारात्रयेपि । द्विरूपवर्गधारायामङ्कसदृष्टि स्वबुद्धितोऽवसेया ॥ ७४ ॥

अथ वर्गशलाकादीनामाधिक्यादिभवनप्रकारमाह;—

वग्गसला रूवहिया सपदे परसम सवग्गसलमेत्त ।
दुगमाहदमद्धछिदी तम्मेत्तदुगे गुणे रासी ॥ ७५ ॥

वर्गशला रूपाधिकाः स्वपदे परस्मिन् समा स्ववर्गशलामात्रम् ।
द्विकमाहतमर्धच्छेदाः तन्मात्रद्विके गुणे राशि ॥ ७५ ॥

दत्त । वर्गशलाका रूपाधिका स्वस्थाने स्वकीयधारायां परस्मिन् स्थाने परधारायां स्वसमाना स्वस्ववर्गशलाकामात्रं द्विकं परस्पराहतं चेत् राशेरर्धच्छेदा भवंति । इयं व्याप्तिर्द्विरूपवर्गधारायामेव न द्विरूपघनाद्विरूप-घनाघनधारयो तदर्धच्छेदमात्रे द्विके परस्परगुणिते सति राशिर्भवति । इयं व्याप्तिधारात्रयेपि ॥ ७५ ॥

अथ वर्गशलाकार्धच्छेदयो स्वरूपमाह,—

वग्गिदवारा वग्गसलागा रासिस्स अद्धछेदस्स ।
अद्धिदवारा वा खलु दलवारा होंति अद्धछिदी ७६

वर्गितवारा वर्गशलाका राशेः अर्धच्छेदस्य ।
अर्धितवारा वा खलु दलवारा भवंति अर्धच्छेदाः ॥ ७६ ॥

वग्गिद । राशेर्वर्गितवारा वर्गशलाका, इय व्याप्तिरपि धारात्रये । अर्धच्छेदस्य अर्धितवारा वर्गशलाका, इयं व्याप्ति द्विरूपवर्गधारायामेव । राशेर्दलवारा अर्धच्छेदा भवंति, इयं व्याप्तिरपि धारात्रये ॥ ७६ ॥

अथ गाथाद्वयेन द्विरूपघनधारामाह,—

बेरूवर्धिदधारा अट्ठ चउसट्ठी पहुदि सगपदे ।
आवलिघनमावलिया कदिविंद घापि जायेज्ज ॥७७

द्विरूपवृन्दधारा अष्ट चतुःषष्टि वर्गिता स्वकपदानि ।
आवलिघन आवल्या कृतिवृन्द घापि जायेत ॥ ७७ ॥

बेरूव । द्विरूपवृन्दधारायाः राशीनां ये घनास्तथा धारा अष्ट चतुःषष्टि । एवं पूर्वपूर्ववर्गरूपेण ४०९६ सख्यातस्थानानि गत्वा जघन्यपरीतासंख्यात घन तत्र विरलितदा यदर्धच्छेदमात्रगत्योत्पन्नत्वात । एवं सख्यातस्थानानि गत्वा आवलि घन ८ उत्पद्यते । तस्मिन्नेकवारं वर्गित आव घा कृतिघनआव ज यत ३ ॥

२

पल्लघण विंदगुलजगसेढीलोयपदरजीवघण ।
तत्तो पढम मूल सव्वागास च जाणेज्जो ॥ ७८ ॥

पल्यघन वृंदागुलमजगच्छ्रेणीलोकप्रतरजीवघनम् ।
तत प्रथम मूलं सर्वाकाश च जानीहि ॥ ७८ ॥

पल्ल । ततोऽसख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाका, ततोसख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदा, ततोसख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूल तस्मिन्नेकवार वर्गिते पल्यघनमुत्पद्यते । ततोसख्यातस्थानानि गत्वा घनागुलमुत्पद्यते अत्र उप्पज्जदि जो रासीत्यादिना निषिद्धत्वात् वर्गशलाकादीनामभाव । ततोऽसख्यातस्थानानि गत्वा जगच्छ्रेणिरुत्पद्यते, अत्रापि उप्पज्जदीति निषिद्धत्वाव वर्गशलाकादीनामभाव । तस्यामेकवार वर्गितायां जगत्प्रतर उत्पद्यते । ततोनतस्थानानि गत्वा वर्गशलाका, ततोनतस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदा, ततोनतस्थानानि गत्वा प्रथममूल, तस्मिन्नेकवार वर्गिते जीवराशेर्घन उत्पद्यते । उप्पज्जदीति निषिद्धत्वादत्र वर्गशलाकादीना सद्भाव । ततोनतस्थानानि गत्वा प्रथममूल तस्मिन्नेकवार वर्गिते सर्वाकाश च जानीहि ॥ ७८ ॥

सखमसखमणत वग्गट्ठाण कमेण गतूण ।
सखासखाणताणुप्पत्ती होदि सव्वत्थ ॥ ७९ ॥

सख्यमसंख्यमनत वर्गस्थान क्रमेण गत्वा ।
सख्यासख्यानतानामुत्पत्ति भवति सर्वत्र ॥ ७९ ॥

संखम—द्विकवारासख्यातप्रथम्यपर्यंत संख्यातवर्गस्थानानि गत्वा तदुपरि द्विकवारानतप्रथ यपर्यंतमसख्यातवर्गस्थानानि गत्वा तदुपरि केवलज्ञानपर्यंतमनतवर्गस्थानानि गत्वा तत्र तत्र वर्गधारायां यथासंख्यं सख्यातासंख्यातानंतानां राशीनामुत्पत्तिर्भवति सर्वत्र ॥ ७९ ॥

जत्थुद्देसे जायदि जो जो रासी विरूवधाराए ।
घणरूवे तद्देसे उपज्जदि तस्स तस्स घणो ॥ ८० ॥

यत्रोद्देशे जायते यो यो राशि द्विरूपधारायां ।
घनरूपे तद्देशे उत्पद्यते तस्य तस्य घन ॥ ८० ॥

जत्थुद्देसे । यत्रोद्देशे द्विरूपवर्गधारायां यो यो राशिर्जायते द्विरूपघन धारायां तद्देशे तस्य तस्य राशेर्घन उत्पद्यते ॥ ८० ॥

एवमणंत ठाणं णिरंतरं गमिय केवलस्सेव ।
विदियपदघणमणंतं विदियादिममूलगुणिदसमं ॥८१॥

एवमनंत स्थानं निरंतर गत्वा केवलस्यैव ।
द्वितीयपदघनमनंतो द्वितीयादिममूलगुणितसम ॥ ८१ ॥

एवमणंत । एवं सर्वाकाशप्रदेशपर्यन्तस्थानं निरंतरं गत्वा केवलज्ञानस्य द्वितीयमूलघन उत्पद्यते स एव द्विरूपघनधारायामंत । तत् द्विय द्विगुणे द्वितीयादिममूलयो परस्परगुणितराशिसम ॥ ८१ ॥

एतदेवांतस्थानं कथमित्याशंकायामाह,—

चरिमस्स दुचरिमस्स य णेव घणो केवलस्स दिक्कमदो ।
तम्हा विरूवहीणा सगवग्गसला हवे ठाणं ॥ ८२ ॥

चरमस्य द्विचरमस्य च नैव घन केवलव्यतिक्रमत ।
तस्मात् द्विरूपहीना स्वकवर्गशलाका भवेत् स्थानम् ॥ ८२ ॥

चरिम । चरमराशेर्द्विचरमराशेश्च घना नैवोत्पद्यन्ते । कुत ? केवलज्ञानव्यतिक्रमो यस्मात् । तस्मात्स्थानं पुनर्द्विरूपहीनस्वकीयवर्गशलाकामात्रं भवेत् । अंकसंदृष्टिरप्युक्ता ॥ ८२ ॥

इदानीं द्विरूपघनाघनधारां गाथाषट्केनाह —

ते जाव विरलणरासी पमाणपत्तं अणंतिदुणाणं ।
छागा गुणगारसला वग्गसला ___ ठाणविदी ॥ ८३ ॥

ते यावत् विरलनराशिं प्रमाण ___ ।
अतो गुणकारशला ___ स्थितम् ॥ ८३ ॥

ते यावत् । विरलनराशिर्यावत् ___ तावत् ___ प्रमाणप्रमितं कर्म आनीते ? । कथं ___ । आदिप्रमाण ___ राशी अनन्तगं ११ १९ ४ ४ राशी असंख्यातगुणात ___ उत्पन्न । अत्र ___ तदा ___ तस्यानानि ___ गुणकारशलाकाराशिस्तावत् । ___ विरलयित्वा ___ तदा ___ गुणयित्वा ___ गुणितेऽपि ___ विशलाकागम्यतो रूपमपनयेत् । अत्र गुणकारशलाका ___ मात्रा भवंति । तं पुनरप्यस्य तल्लोकमात्रं अन्योन्यगुणितराशिमेव विरलयित्वा तमेव दत्त्वा अन्योन्यं गुणितमिति शलाकाराशौ ___ रूपमपनयेत्, तत्र च गुणकारशलाका ___ असंख्यातलोकमात्रा भवंति । एवं यावदुत्पन्न ___ राशिसमाप्तिस्तावद्गुणकारशलाका भवंति । एवं सन्देकवारशलाकानिष्ठापने स्यात् । एवमाहृत्यवार शलाकानिष्ठापने कृते यावत्या गुणकारशलाकाभ्य ___ योग गुणकारशलाका इत्युच्यते । ततो मत्स्यातस्थानानि गत्वा वर्गशला ___ कास्ततो संख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततो संख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवार वर्गिते— ॥ ८३ ॥

तेउक्काइयजीवा वग्गसलागत्तय च कायठिदी ।
वग्गसलादितिदय ओहिणिबद्ध उर खेत्त ॥ ८४ ॥

तनस्कायिकजीवा वर्गशलाकात्रय च कायस्थिति ।
वर्गशलादित्रितय अवधिनिबद्ध वर क्षेत्रम् ॥ ८४ ॥

तउ । तेजस्कायिकजीवराशेः सख्या उत्पद्यते । सा पुनरङ्कुवारशला कानिष्ठापने यो राशिरुत्पद्यते तत्प्रमाणमित्यवसेय । अथ वर्गशलाकाया अधो गुणकारशलाका तिष्ठतीति । कथमिति चेत्, अंकसंदृष्ट्या प्रदर्श्यते । चतुर्णां अन्योन्यं गुणिते एकट्ठमुत्पद्यते १८=अस्य गुणकारशलाका एका वर्गशलाका पुनः षट् ततस्तेजस्कायिकवर्गशलाकाया अधो गुणकारश लाका तिष्ठतीत्यवसेय । ततः संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततः सं ख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते कायस्थितिप्रमाणमुत्पद्यते । तत्कीदृगिति चेत् । अन्यकायादागत्य तेजस्कायिकेषूत्पन्नजीवस्योत्कृष्टेन तेजस्कायिकस्यावस्था अवस्थान काल इति प्ररूपयाम । ततो संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गश लाकास्ततोऽसंख्यातस्थानानि अर्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं, तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सर्वावधिनिबद्धमुत्कृष्टक्षेत्रमुत्पद्यते । क्षेत्रस्य लोकमात्रत्वेऽपि अन्यगुणोत्पन्नत्वात् घटते ॥ ८४ ॥

वग्गसलागविदिय तत्तो ठिदिबंधपच्चयट्ठाणा ।
वग्गसलादीरसबंधज्झवसाणाण ठाणाणि ॥ ८५ ॥

वर्गशलाकाद्वितय तत स्थितिबंधप्रत्ययस्थानानि ।
वर्गशलादिरसबन्धाध्यवसानानां स्थानानि ॥ ८५ ॥

वग्गसला । ततो संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततो संख्यात स्थानानि अर्धच्छेदास्ततो संख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन् एकवारं वर्गिते ज्ञानावरणादिकर्मणां स्थितिबंधकारणकषायपरिणामस्थान [illegible]

[illegible] मुत्पद्यते । तत्परिणामस्य [illegible] ततो संख्यातस्थानानि [illegible]

[illegible] स्थानानि गत्वा अर्ध [illegible]

गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते [illegible]

[illegible]

वग्गसलागप्पहुदी णिगोदजीवाण कायसंखेज्जा ।
उप्पमठाणादिदयं णिगोदकायट्ठिदी होदि ॥ ८६ ॥

वर्गशलाकाप्रभृति निगोदजीवानां कायसंख्या ।
वर्गस्थानादिद्वयं निगोदकायस्थितिर्भवति ॥ ८६ ॥

वग्ग । ततो संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकाराशेरुत्पन्नत्वे संख्यातस्थानानि गत्वार्धच्छेदराशिस्ततो संख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते निगोदजीवानां सर्वजीवराशेरनन्तगुणसंख्यात्वात् । निगोदानामनन्तसंख्याप्रतिनियतानां जीवानां क्षेत्रं ददाति इति निगोदं कर्म तद्युक्ता जीवा निगोदजीवा इत्युच्यन्ते । ततो संख्यातस्थानानि गत्वा वर्गशलाकास्ततो संख्यातस्थानानि गत्वा अर्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातस्थानानि गत्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते निगोदकायस्थितिर्भवति । सा कीदृशीति चेत् । अत्र निगोदकायस्थितिरित्युक्ते तावदेकजीवस्य निगोदत्वेनावस्थानकालो न गृह्यते तस्यार्धतृतीयपुद्गलपरिवर्तत्वात् । तर्हि किं गृह्यते ? निगोदशरीररूपेण परिणतपुद्गलानां तदाकारमत्यजन्तेन रूपेणावस्थानकालो गृह्यते ॥ ८६ ॥

तत्तो असंखलोगं कदिठाणं चडिय वग्गसलतिदयं ।
दिस्सति सव्वजेट्ठा जोगस्सविभागपडिछेद्दा ॥ ८७ ॥

ततो असंख्यलोक कृतिस्थान चटित्वा वर्गशलाकात्रयम् ।
दृश्यते सर्वज्येष्ठा योगस्याविभागप्रतिच्छेदाः ॥ ८७ ॥

तत्तो । तत उपर्यसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि चटित्वा वर्गशलाकास्ततोऽसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि गत्वार्धच्छेदास्ततोऽसंख्यातलोकमात्रकृतिस्थानानि चटित्वा प्रथममूलं तस्मिन्नेकवारं वर्गिते सर्वज्येष्ठयोगोत्कृष्टाविभागप्रतिच्छेदा दृश्यन्ते । कर्माकर्षणशक्तिर्योगस्तस्याविभागप्रतिच्छेदाः कर्माकर्षणशक्त्यविभागांशा इत्यर्थः ॥ ८७ ॥

जो जो रासी दिस्सदि विरूववग्गे सगिट्ठठाणम्हि ।
तट्ठाणे तस्सरिसा घणाघण णवणवुद्दिट्ठा ॥ ८८ ॥

यो यो राशि दृश्यते द्विरूपवर्गे स्वेष्टस्थाने ।
तत्स्थाने तत्सदृशा घनाघने नव नव उद्दिष्टा ॥ ८८ ॥

जो । द्विरूपवर्गधारायां स्वकीयेष्टस्थाने विवक्षितस्थाने यो यो राशि दृश्यते तत्स्थाने घनाघनधारायां तत्सदृशा द्विरूपवर्गधारास्थानसदृश राशय द्विरूपवर्गधाराराशय एव नवनवबारं परस्परं गुणिता उद्दिष्टा ॥८८॥

चडिदूणेवमणंत ठाणं केवलचउत्थपदविंदं ।
सगवग्गगुण चरिम तुरियादिपदाहदेण सम ॥ ८९ ॥

चटित्वैवमनंत स्थान केवलचतुर्थपदवृंदम् ।
स्वकवर्गगुणमचरम तुरीयादिपदाहतेन सम ॥ ८९ ॥

चडि । ततो योगोक्तक्रमविभागमति-ठेदत उपर्यनंतस्थानानि चटित्वा केवलज्ञानस्य ६५=चतुर्थमूलघन ८ स्वकीयवर्ग १४ गुणितो ५१२ घनाघनधाराचरम । स च चतुर्थपदघनमूलयो परस्पराहत्या सम ॥ ८९ ॥

अन्येषां चरमकल्प कथं न संभवतीति चेत्,—

चरिमादिचउक्कस्स य घणाघणा एत्थ णेव संभवदि ।
हेदू भणिदुरे तम्हा ठाणं चउहीणवग्गसला ॥ ९० ॥

चरमादिचतुष्कस्य च घनाघना अत्र नैव संभवन्ति ।
हेतु भणित तस्मात् स्थान चतुर्हीनवर्गशलाक ॥ ९० ॥

चरिमा । केवलज्ञानादधश्चतुर्णां स्थानानां ६५=^५६ १६ ४
घनाघना अत्र द्विरूपघनाघनधारायां नैव संभवंति । कथं

[illegible] इति [illegible]
[illegible] । ९० ।

[illegible] —

[illegible] ॥ ९१ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ९१ ॥

[illegible] ॥ ९१ ॥
इति संख्याप्रमाणं समाप्तम् ।

अथ संख्याप्रमाणानंतरम्‌ उपमाप्रमाणं [illegible] तस्य भेदान् अष्टविधान्
[illegible] निरूपयति,—

पल्लो सायर सूई पदरो य घणंगुलो य जगसेढी ।
लोयपदरो य लोगो उवमपमा एवमट्ठविहा ॥ ९२ ॥

पल्य सागर सूची प्रतर च घनांगुल च जगच्छ्रेणी ।
लोकप्रतरश्च लोक उपमाप्रमा एवमष्टविधा ॥ ९२ ॥

पल्ल । पल्य सागर सूच्यंगुल प्रतरांगुल घनांगुल च जगच्छ्रेणि
जगत्प्रतरश्च घनलोक इत्येवमुपमाप्रमाणमष्टविधं स्यात्‌ ॥ ९२ ॥

अथ तेषां मध्ये पल्यभेदं स्वस्वविषयनिर्देशपूर्वकमाह,—

ववहारुद्धारद्धापल्ला तिण्णेव होंति णायव्वा ।
संखा दीवसमुद्दा कम्मट्ठिदि वण्णिदा जेहिं ॥ ९३ ॥

व्यवहारोद्धाराद्धापल्यानि त्रीण्येव भवंति ज्ञातव्यानि ।
संख्या द्वीपसमुद्राः कर्मस्थितयो वर्णिता यैः ॥ ९३ ॥

ववहारु । व्यवहारोद्धाराद्धापल्यानीति पल्यानि त्रीण्येव भवति इति ज्ञातव्यानि। ये पल्यत्रयेणयासरया द्वीपसमुद्रा कर्मस्थित्यादयश्च वर्णिता ९३

अथ पल्यज्ञापनायमाह,—

सत्तमजम्मावीणं सत्तदिणब्भतरम्हि गहिदेहिं ।
सण्णट्ठं सण्णिचिदं भरिदं वालग्गकोडीहिं ॥ ९४ ॥

सप्तमजन्मावीनां सप्तदिनाभ्यंतरे गृहीतैः ।
सनष्टं सनिचितं भरितं वालाग्रकोटिभिः ॥ ९४ ॥

सत्तम । सप्तमजन्मनामवीनां सप्तदिनाभ्यंतरे गृहीतैर्वालाग्रकोटिभिः सनष्टं सनिचितं भरितं ॥ ९४ ॥

तत्किमित्याह,—

जं जोयणवित्थिण्णं तत्तिउणं परिरयेण सविसेसं ।
तं जोयणमुव्विद्धं पल्लं पलिदोवमं णाम ॥ ९५ ॥

यत् योजनविस्तीर्णं त्रिगुणं परिधिना सविशेषम् ।
तत् योजनमुद्विद्धं पल्यं पल्योपमं नाम ॥ ९५ ॥

जं जो । यद्योजनविस्तीर्णं त्रिगुणं परिधिना सविशेषं सूक्ष्मफलत्वाद् योजनमुद्विद्धं तत् कुट्टलोमप्रमाणं पल्योपमं पलितोपमं वा इति संज्ञा॥९५॥

अथ परिधेः सविशेष इति विशेषणार्थं ज्ञापयन्नाह,—

विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरयो होदि ।
विक्खंभचउब्भागे परिरयगुणिदे हवे गणियं ॥ ९६ ॥

विष्कंभवर्गदशगुणकरणिः वृत्तस्य परिधिः भवति ।
विष्कंभचतुर्भागे परिधिगुणिते भवेत् गणितम् ॥ ९६ ॥

यव । व्यवहारैकरोमोऽसंख्येयवर्षसमये सम छिन्न चेत् तदा तानि रोमाणि उद्धारपल्यस्य भवति । तदपहरणकालश्च तावान् उद्धारपल्योऽन्य मान एव । प्रतिसमयमेकैकरोमोपहृियत इति भाव ॥ १०० ॥

अथोद्धारपल्य निदर्शयति,—

उद्धारेय रोम छिण्णमसंखेज्जवाससमयेहिं ।
अद्धारे ते रोमा तत्तियमेत्तो य तक्कालो ॥ १०१ ॥

उद्धारैक रोम छिन्नमसंख्येयवर्षसमये ।
अद्धारे तानि रोमाणि तावन्मात्रश्च तत्काल ॥ १०१ ॥

उद्धा । उद्धारैक रोमोऽसंख्यातवर्षसमये सम छिन्नचेत् तदा तानि रोमाणि अद्धारपल्यस्य भवति । तदपहरणकालश्च तावन्मात्र एव ॥१०१॥

अथ सागरोपमस्वरूप सूचयति,—

एदेसिं पल्लाण कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिदा ।
त सागरोवमस्स दु हवेज्ज एक्कस्स परिमाणम् ॥१०२

एतयो पल्ययो कोटीकोटी भवेत् दशगुणिता ।
तत् सागरोपमस्य तु भवेत् एकस्य परिमाणम् ॥ १०२ ॥

एदे । एतयोऽद्धाराद्धारपल्ययोर्दशगुणिता कोटीकोटी भवेद्यदि तदा तद्द्विवक्षितपल्य विवक्षितस्य एकसागरोपमस्य प्रमाण भवति ॥ १०२ ॥

अथ सागरोपमसज्ञाया अन्वर्थतादर्शनार्थमाह,—

लवणंबुहिसुहुमफले चउरस्से एकजोयणस्सेव ।
सुहुमफलेणवहरिदे वट्ट मूल सहस्सवेहगुण ॥१०३॥

लवणाम्बुधिसूक्ष्मफले चतुरस्रे एकयोजनस्यैव ।
सूक्ष्मफलेनापहृते वृत्त मूल सहस्रवेधगुणम् ॥ १०३ ॥

लवणं । "अंगाविसुयिगोगं छंदद्गुणिदु दुण्हदि किंचा तिगुणं वरकर णिगुणं बाहरसुण्णं फलं चरये" अनेनोक्तप्रकारेण लवणांबुधिसूक्ष्मफलं चतुरस्रं कथमिति चेदस्य वासना दर्श्यते । लवणांबुधिवलय ऊर्ध्वं छित्वा छेद (५ ल) प्रमाणेन विषमचतुर्भुजं कृत्वा ' त्रिकसंभवम् ' इत्या दिना मुखसूक्ष्मफलं । भूमिसूक्ष्मफलं चानीय मुखभूम्योस्संस्थाप्य मुख भूमिसमासार्धमिति मध्यफलमानीय ६, ६, ल १० मध्ये संस्थाप्य उपरितन मार्गे ऊर्ध्वं छित्वा चतुरस्रार्थं व्यत्यासेन संस्थाप्य समानछेदेन मेलनं कृत्वा अपवर्तिते एवं ६ ल ६ ल १० रुद्रार्धेन १ ल गुणिते सति "वर्गराशे र्गुणकारभागहारा वर्गात्मका एव भवति " इति न्यायेन गुणिते सति चतुरस्रं स्यात् । ६ ल्ल ६ ल्ल १० । एतावच्चतुरस्रसूक्ष्मफलस्य एकयोजनवृत्तकुंडे फ १ एतावच्चतुरस्रसूक्ष्मफलस्य ६ ल्ल ६ ल्ल १० किमिति त्रैराशिक क्रमेणागतमेकयोजनसूक्ष्मफलेनापवर्त्य एवं "हारस्य हारो गुणकोंश राशेः" इति गुणितेऽपीदं लब्धं २४ ल्ल २४ ल्ल वृत्तवर्गभूतकुंड फलशलाका स्यात् । मूलं २४ ल्ल एतावत् २४ ल्ल सहस्रेण १००० गुणितं कर्तव्यं । २४ ल्ल १००० ॥ १०३ ॥

अथ गुणकारांतरं दर्शयति,—

रोमहद छक्केसजलोस्सेगे पणुवीससमयात्ति ।
सपाद करिय हिदे केसेहिं सायरुप्पत्ती ॥ १०४ ॥

रोमहत षड्कृशजलोत्सेके पंचविंशतिसमया इति ।
सपातं कृत्वा हिते केशैः सागरोत्पत्तिः ॥ १०४ ॥

रोम । प्र कुंड १ फ रोम ४१=ड कुंड २४ ल्ल १००० इति त्रैराशिकनागतं रोमभिर्गुणितं २४ ल्ल १०००, ४१=षड्कृशजलोत्सेके पंचविंशतिसमयाश्चेत् २४ ल्ल १० ० ४१= एतावत् रोमजलोत्सेके कियंत समया इति त्रैराशिकं कृत्वा प्रमाणेन फलस्य अपवर्त्य २५, ४

छठ, १०००, ४१=एतावत्समयस्य एकस्मिन् पल्ये एतावत्समर्द्ध क्रिमिति २५,४ छठ १०००, ४१=, सपात्यापवर्तिते सागरोप त्पत्तिर्भवति ॥ १०४ ॥

अथ द्विरूपवर्गधारायां सागरोपमस्यानुत्पन्नत्वात्तस्यार्धच्छेदं शास्यमा ;

गुणयारद्धच्छेदा गुणिज्जमाणस्स अद्धछेदजुदा ।
लद्धस्सद्धच्छेदा अहियस्स छेदणा णत्थि ॥ १०५॥

गुणकारार्धच्छेदा गुण्यमानस्यार्धच्छेदयुता ।
लब्धस्यार्धच्छेदा अधिकस्य छेदना नास्ति ॥ १०५ ॥

गुण । गुणकारा दशकोटीकोट्यस्तासामर्धच्छेदाः सख्याताः, ते पुनर्गुण्यमानस्याद्धापल्यस्यार्धच्छेदयुताः लब्धस्य सागरोपमस्यार्धच्छेदा भवति यतः अधिकस्य छेदना नास्ति । ततः सागरोपमस्य वर्गशलाका नास्ति ॥ १०५ ॥

अथ गुण्यगुणकारयो छेदप्रदर्शने प्रसगाद्भाज्यभाजकयोरपि छेद प्रदर्शयति,—

भजस्सद्धच्छेदा हारद्धच्छेदणाहि परिहीणा ।
अद्धच्छेदसलागा लद्धस्स हवति सव्वत्थ ॥ १०६॥

भाज्यस्यार्धच्छेदा हारार्धच्छेदनाभि परिहीना ।
अर्धच्छेदशलाका लब्धस्य भवति सर्वत्र ॥ १०६ ॥

भज्ज । अकसंदृष्टौ भाज्यस्य ६४ अर्धच्छेदा ६ हारा (४) र्धच्छेदनाभि २ परिहीना ४ लब्धस्य १६ अर्धच्छेदशलाका भवंति सर्वत्र ॥ १०६ ॥

अथ सूच्यंगुलस्यार्धच्छेदं दर्शयन्नाह,—

विरलिज्जमाणरासिं दिण्णस्सद्धच्छिदीहिं संगुणिदे ।
अद्धच्छेदा होंति हु सव्वत्थुप्पण्णरासिस्स ॥१०७॥

विरल्यमानराशौ देयस्यार्धच्छिदिभिः संगुणिते ।
अर्धच्छेदा भवंति हि सर्वत्रोत्पन्नराशेः ॥ १०७ ॥

विर । विरल्यमानराशि पल्यच्छेदस्मिन् देयस्य पल्यस्यार्धच्छेदैः संगुणिते सत्युत्पन्नराशेः सूच्यंगुलस्यार्धच्छेदा भवंति खलु सर्वत्र ॥ १०७ ॥

अथ सूच्यंगुलस्य वर्गशलाकां दर्शयन्नाह,—

विरलिदरासिच्छेदा दिण्णद्धच्छेदछेदसमिलिदा ।
वग्गसलागपमाणं होंति समुप्पण्णरासिस्स ॥१०८॥

विरलितराशिच्छेदा देयार्धच्छेदछेदसमिलिता ।
वर्गशलाकाप्रमाणं भवति समुत्पन्नराशेः ॥ १०८ ॥

विरलिद । सूच्यंगुलार्धच्छेदस्यार्धितवारा व १ व १ युता व २ सूच्यंगुलस्य वर्गशलाका भवंति । "वग्गादुवरिमवग्गे दुगुणा दुगुणा हवंति अद्धछिदी" इति न्यायेन द्विगुणा सूच्यंगुलार्धच्छेदा । छे छे २ प्रतरांगुलार्धच्छेदा भवंति । 'वग्गसला रूवहिया" इतिन्यायेन रूपाधिकसूचीवर्गशलाका प्रतरांगुलवर्गशलाका भवंति । द्विरूपवर्गधारोत्पन्नस्य सूच्यंगुलस्य समानस्थाने द्विरूपघनधारायां घनांगुलस्योत्पन्नत्वात् । "तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे' इति न्यायेन त्रिगुणा सूच्यंगुलार्धच्छेदा घनांगुलार्धच्छेदा भवंति । "सपदे परसम" इति न्यायेन सूच्यंगुलवर्गशलाका एव घनांगुलस्य वर्गशलाका भवति । "विरलिज्जमाणरासिं दिण्णस्स" इत्यादिन्यायेन विरल्यमानपल्यच्छेदासंख्यातमागेषु घनांगुलच्छेदैर्गुणितेषु सत्सु जगच्छ्रेण्या छेदा भवंति ॥ १०८ ॥

अथ जगच्छ्रेण्या वर्गशलाका आह —

दुगुणपरित्तासंखेणवहिदद्धारपल्लवग्गसला ।
बिंदंगुलवग्गसलासहिया सेढिस्स वग्गसला ॥ १०८ ॥

द्विगुणपरीतासंख्येनावहिताद्धारपल्यवर्गशलाकाः ।
वृन्दांगुलवर्गशलाकासहिताः श्रेणेः वर्गशलाकाः ॥ १०८ ॥

दुगुण। द्विगुणपरिमितासंख्यातेन भक्ताद्धारपल्यवर्गशलाका वृन्दांगुलवर्गशलाकासहिता जगच्छ्रेण्या वर्गशलाका भवन्ति। द्विगुणपरिमितासंख्यातस्य जघन्यस्य उत्पत्तिक्रमः। अद्धापल्यार्धच्छेदराशिं विरलय्य द्विरूपं दत्त्वा अन्योन्याभ्यस्ते प्रथममूलस्यार्धच्छेदाः पल्यवर्गशलाकार्धं भवंति द्वितीयमूलस्यार्धच्छेदास्तदर्धं, तृतीयमूलस्यार्धच्छेदास्तदर्धम्। एवं प्रतिमूलमर्धच्छेदाः अर्धार्धक्रमेण तावद्गच्छन्ति यावत् द्विगुणासंख्यातमात्रवर्गमूलानि जघन्यपरिमितासंख्यातस्य रूपाधिकार्धच्छेदमात्राणि गत्वा यत्र यद्वर्गमूलं तस्यार्धच्छेदा द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्यभक्ताद्धारपल्यवर्गशलाकामात्रा जायते। यथा उपर्युपरिवर्गेषु अर्धच्छेदा द्विगुणा द्विगुणा जायन्ते तथाधोऽधोवर्गमूलेष्वर्धच्छेदा अर्धार्धमात्रा जायन्ते इति युक्त्या जघन्यपरिमितासंख्यातस्य रूपाधिकार्धच्छेदमात्रप्रथमवर्गमूलस्यार्धच्छेदा रूपाधिकार्धच्छेदमात्रद्विकसंवर्गेण द्विगुणपरिमितासंख्यातजघन्यप्रमाणेन विभक्ताद्धारपल्यवर्गशलाकामात्रा। "दिण्णद्धच्छेदछेदसम्मिलिदा" इत्यस्य घनांगुलस्य छेदच्छेदा वर्गशलाकास्तेषु सम्मिलिता। इदं समुत्पन्नराशेर्जगच्छ्रेण्या वर्गशलाकाप्रमाणं भवति। इदं सर्वं मनसि कृत्वा "दुगुणपरित्तासंखे" इत्याद्युक्तं। "वग्गादुवरिमवग्गे" इत्यादिन्यायेन द्विगुणश्रेणिच्छेदा जगत्प्रतरच्छेदा भवन्ति। "वग्गसला रूवहिया" इति न्यायेन रूपाधिकश्रेणिवर्गशलाका जगत्प्रतरवर्गशलाका भवन्ति। "तिगुणा तिगुणा परट्ठाणे"

इति न्यायेन त्रिगुणश्रेणिच्छेदा एव घनलोकच्छेदा भवति । " सवर्गे पर सम ' इति न्यायेन श्रेणिवर्गशलाका एव घनलोकवर्गशलाका भवति॥१०९॥

अथ तम्मेत्तदुगे गुण रासी इति न्यायेनार्धच्छेदमात्रद्विकानाम यो न्याहतौ राशिना भवितव्यमित्यत्र साधिकछेदानां कथमित्यत्राह,—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी गुणगारो लद्धरासिस्स ॥ ११० ॥

विरलितराशित पुन यावन्मात्राणि अधिकरूपाणि ।
तेषां अन्योन्यहति गुणकारो लब्धराशे ॥ ११० ॥

विर । विरलितराशित पुनर्यावन्मात्राण्यधिकरूपाणि तासां छेदा तावन्मात्रद्विकानामन्योन्यहति लब्धपल्यराशेर्गुणकारो भवति । अकसदृष्टी विरलितराशि पल्यछेद ४ तस्मादधिकरूपछेद ३ तन्मात्रद्विकान्योन्याहती ८ लब्ध पल्यराशा १६ गुणकारो भवति । तयो गुण्यगुणकारयोर्गुणने सागरोपम १२८ स्यात् ॥ ११० ॥

अथ प्रसगेन हीनछेदानां किमित्याकांक्षायामाह,—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी हारो उप्पण्णरासिस्स ॥१११॥

विरलितराशित पुन यावन्मात्राणि हीनरूपाणि ।
तेषामन्योन्यहति हार उत्पन्नराशे ॥ १११ ॥

विरलिद । अस्यार्थ छायामात्रमेव ॥ १११ ॥

अथोत्तरप्रकरणस्य पातनिकागाथामाह —

जगसेढीए घणो जगपदर हादि तग्घणो लोगा ।
इदि बाहियससाणस्सत्ता पगद परूवणो ॥ ११२ ॥

जगच्छ्रेण्या वर्गे जगत्प्रतरो भवति तद्घनो लोके ।
इति नोधिनसख्यानस्य इत प्रकृत प्ररूपयाम ॥ ११२ ॥

जग । जगच्छ्रेण्या वर्ग तत्प्रतरो भवति । तस्या श्रेण्या घनो लोक इत्यस्माभिर्नोधिनसख्यानस्य शिष्यस्य [illegible] पर प्रकृत प्ररूपयाम ॥११२॥ उपमाप्रकरण समाप्तम् ।

पूर्वगाथयैवोक्ता पातनिका,—

उदयदल आयाम वास पुव्वावरेण भूमिमुहे ।
सत्तेकपचएक्क य रज्जू मज्झम्हि हाणिचय ॥ ११३ ॥

उदयदल आयाम व्यास पूर्वापरेण भूमिमुखे ।
सप्तैक पचैक च रज्जु मध्ये हानिचयम् ॥ ११३ ॥

उदय । उदय १४ दल ७ आयाम दक्षिणोत्तरव्यास इत्यय । पूर्वापर हानिचयकथनात् चतुर्दशरज्जूत्सेधपर्यंतमायाम सर्वत्र सप्तरज्जुरवेति ज्ञातव्य । पूर्वापरेण व्यासस्तु भूमौ मुखे च यथासख्य सप्तरज्जव एका रज्जु पचरज्जव एका रज्जु तयोर्मुखभूम्योर्मध्ये हानिचयौ साध्यौ ॥ ११३ ॥

अथ तत्साधनप्रकार कथयन्नाह,—

मुहभूमीण विसेसे उदयहिदे भूमुहादु हाणिचय ।
जोगदले पदगुणिदे फल घणो वेधगुणिदफल ११४

मुखभूम्यो विशेषे उदयहिते भूमुखत हानिचय ।
योगदले पदगुणिते फल घनो वेधगुणितफलम् ॥ ११४ ॥

मुह । भूमौ ७ मुख १ हानि कृत्वा ६ सप्तरज्जूदयस्य षड्रज्जुहानौ एकरज्जूदयस्य कियती हानिरिति सपात्य तद्धानिं ६/७ समानछेदेन सप्त रज्ज्वायामे ४९/७ पनस्तद्धानिमेव तत्रावशिष्ट एकरज्जुपर्यंते स्फे-

येन्। तदा तत्तद्धानिरहिता तत्र तत्र आयातिभवेत्। उर्ध्वलोकार्धचयानयने मुख १ भूम्योर्विशेषे ५ सति ४ पदचतुष्टयस्य ‍ वसुभये ४ द्विती यार्धस्य ‍ विस्तारेति सपात्यापवत्य गुणितराशौ एकरज्जुस मानछेदेन मेदने कृते सत्यर्धद्वितीयस्य प्रथमचयस्तस्मिन्नये प्राकृतच यमेलने कृते उपरितनाधद्वितीयचयो भवति। अथचतुर्थस्य चतु- भये ४ दलस्य ‍ विमिति सपात्यापवर्त्य तत्राननचये मेलयेत् तदुपरितनचयः स्यात्। उपरितनोर्ध्वलोकहान्यानयन अर्धचतुष्टयस्य च तुर्हानौ दलोदयस्य विमिति सपात्यागतहानिं प्राक्तनदलचय स्फेट येन। एवं सति उपरितनदलहानिरहितफलं स्यात्। एवमुभयदलचतु ष्टयहान्यानयनेपि पूर्वपूर्वहानिफले च सममहानिस्फटने तत्तद्धानिर हितायतिभवति । । दलोदयस्य एतावद्धानौ एकोदयस्य किमिति सपात्य षट्दलहानिफले स्फेटने एकरज्जुफलं स्यात्। अधोलोकमेयफलानयने मुख १ भूमि ७ योग ८ दले ४ पद ७ गुणित २८ क्षेत्रफलं स्यात्। तदेव वेधेन ७ गुणितं घनफलं १९६ स्यात्॥ ११४॥

इतोऽधोलोकोऽपि भवति;—

सामण्ण दो आयद जवमुर जवमज्झ मदर दूस।
गिरिगडगेणवि जाणह अट्ठवियप्पो अधो लोगो ११५

सामान्य द्व्यायत यवमुरज यवमध्य मंदर दूष्य।
गिरिकटकेनापि जानीहि अष्टविकल्प अधोलोक॥ ११५॥

सामण्ण। सामान्यमूर्ध्वायत तिर्यगायत यवमुरज यवमध्य मंदर दूष्य गिरिकटकेन सह अष्टविकल्पो अधोलोक इति जानीहि। सामान्यक्षेत्रफल मुखभूमाजागदलं त्यादिना समम। अधोलोकस्य मध्य छित्वा आयतचतु रस्र यथा भवति तथा व्यायासेन सम्पाप्य भजकोत्विध त्यादिना

गुणिते [illegible] । अथ [illegible] "मुखभूमि [illegible]"
इत्यादिनानीय [illegible] निर्गलग्रन्थमुखे [illegible]
"मुखजोगे [illegible]" इत्यादिना [illegible] ॥ ११५ ॥

अथ यवमुरजक्षेत्रफलमानयति,—

रज्जुतयस्सोरणे मज्जुइओ जदि हवेज्ज एक्कोसे ।
किमिदि कदे सपादे एक्कजउस्सेहमाणमिणं ॥ ११६ ॥

रज्जुत्रयस्यावमरणे मसोदया यदि भवेत् एकस्यात् ।
किमिति कृत सपाने एकयवस्यात्सेधमानमिदम् ॥ ११६ ॥

रज्जु । रज्जुत्रयस्यावसरणे सप्तादया यदि भवेत् एकरज्ज्वा[illegible]
कियानुदय इति सपात कृत आगतमकयवस्योत्प्रमाणमिदं $\frac{7}{6}$ । एकयव-
१ इयदुदय $\frac{7}{6}$ अर्धयवस्य किमिति सपात अर्धयवशमेधमानं स्या-
पश्चादर्धयवक्षेत्रफलं "मुखभूमिजोगदल" इत्यादिनानीय $\frac{49}{72}$ एकार्धयव-
इयति फले अष्टादशार्धस्य किमिति सपात्य षड्भिरपवर्तिते सर्व यवक्षेत्रफ-
$\frac{49}{2}$ स्यात् । मुख १ भूमि ८ जोग ५ दल $\frac{5}{2}$ पदे $\frac{7}{2}$ गुणिते $\frac{35}{4}$ प-
घन होदीत्यर्धमुरजक्षेत्रफलमानीयाधमुरजस्यैतावति $\frac{35}{4}$ फले एकमुरज-
किमिति सपात्यापवर्त्य $\frac{35}{2}$ एतद्यवक्षेत्रफले $\frac{49}{2}$ संयोज्य मार्जिते २-
यवमुरजक्षेत्रफल भवति । यवमध्यक्षेत्रस्थयवान् सवान् गुणयित्वा २-
पूर्ववदर्धयवक्षेत्रफलमानीय पुनरर्धयवस्य $\frac{7}{2}$ एतावति $\frac{49}{72}$ एकयवस्य किमिति
सपात्यापवर्तिते एकयवक्षेत्रफलं $\frac{49}{36}$ स्यात् । एकयवस्य एतावति फले $\frac{49}{36}$ चतु-
र्विंशतियवाना किमिति सपात्य षड्भिरपवर्तितं यवमध्यक्षेत्रफलं भवति ॥ ११६

अथ मन्दरक्षेत्रफलानयनप्रकारं दर्शयति —

अद्ध चउत्थभागो सगचारसम तिदालबारसो ।
सगबारस दिवड्ड रज्जुइओ मदर सत्त ॥ ११७ ॥

अर्धं चतुर्थभागः सप्तद्वादश त्रिचत्वारिंशद्द्वादशांशाः ।
सप्तद्वादशांशाः द्व्यर्धं रज्जवः मन्दरे क्षेत्रे ॥ ११७ ॥

अर्द्ध । अर्द्धं $\frac{१}{२}$ चतुर्थांशः $\frac{१}{४}$ तयामेलने $\frac{३}{४}$ सप्तद्वादशांशाः $\frac{७}{१२}$ त्रिचत्वारिंशद्द्वादशांशाः $\frac{४३}{१२}$ पुनरपि सप्तद्वादशांशाः $\frac{७}{१२}$ अर्धाद्वितीयांशाः $\frac{३}{२}$ रज्जवः मंदरक्षेत्रे भवति । मुख १ भूमौ ७ विशेषे इति हानिमानीय ६ सप्त रज्जूदयस्य ७ षष्ठांशो $\frac{६}{७}$ त्रिचतुर्थ $\frac{३}{४}$ रज्जूदयस्य किमिति सपात्य द्वाभ्यां तिर्यगप वर्त्य $\frac{३}{४}$ $\frac{१}{२}$ गुणिते $\frac{१}{२}$ समानच्छिन्नसप्तरज्ज्वां $\frac{१४}{२}$ स्फोटिते $\frac{१३}{२}$ त्रिचतुर्थक्षेत्रोपरितनायाम स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षष्ठांशो सप्तद्वादश $\frac{७}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति सपात्यापवर्त्य गुणिते $\frac{१}{२}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{१३}{२}$ स्फोटिते $\frac{१२}{२}$ उपरितनायाम स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षष्ठांशो त्रिचत्वारिंशद्द्वादश $\frac{४३}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति संपात्यापवर्त्य गुणिते $\frac{४३}{१२}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{१२}{२}$ स्फोटिते $\frac{२९}{१२}$ उपरितनायाम स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षष्ठांशो सप्तद्वादश $\frac{७}{१२}$ रज्जूदयस्य किमिति तथा गुणिते $\frac{७}{१२}$ पूर्वस्मिन्नायामे $\frac{२९}{१२}$ स्फोटिते $\frac{२२}{१२}$ उपरितनायाम स्यात् । सप्तरज्जूदयस्य षष्ठांशो अर्धद्वितीय $\frac{३}{२}$ रज्जूदयस्य किमिति गुणिते $\frac{३}{२}$ समानच्छेदेन $\frac{१८}{१२}$ अधस्तात् $\frac{२२}{१२}$ स्फोटने कृते $\frac{४}{१२}$ उपरितनायाम स्यात् । चूलिकानयनार्थं सप्तद्वादशोदयक्षेत्रद्वयमायतचतुरस्रं कृत्वा तत्र मुखे $\frac{४}{१२}$ $\frac{१}{१२}$ तत्तद्भूमौ $\frac{४}{१२}$ $\frac{१}{१२}$ स्फोटयित्वा $\frac{७}{१२}$ $\frac{७}{१२}$ सप्तभिरपवर्त्य $\frac{१}{१२}$ $\frac{१}{१२}$ खंडद्वयस्य एतावति $\frac{१}{२}$ एकखंडस्य किमिति सपातिते $\frac{१}{२}$ एकैकखंडस्य भूमि । तेष्वेक-खंडभूमिमुपरितनं कृत्वा खंडद्वयभूमिमधस्तनभूमिं कृत्वा $\frac{१}{२}$ सप्तद्वादशोदयां चूलिकां कुर्यात् । पश्चाद्विषमचतुर्भुजक्षेत्रफलं मुखभूमिजोगदलत्यादिनानीय आयतचतुरस्रक्षेत्रफलं भुजकोटिवधादित्यादिनानीय षण्णां फलानां च त्रि द्वि द्वि षट्चतुर्दशभिः समानच्छेदेन मेलनं कृत्वा $\frac{१२}{३६}$ इतं च मंदरक्षेत्रफलं भवति २८ । रज्जुतयस्येत्यादिनार्धयवोत्सेध $\frac{१}{२}$ मानीय समानच्छिन्नसप्त रज्ज्वां स्फटने सप्तरज्जुभूममुख स्यात् । तत्रैव $\frac{१}{२}$ पुनरर्धयवोत्सेध स्फोटने $\frac{१}{२}$ तदुपरितनस्य मुख स्यात् । एवं पूर्वपूर्वमुख पुनः पुनः अधस्तात्

लोकफलने सम्पूर्णलाकारं भूमौ स्यात् । मुखमित्र ... एं क्षेत्रफल ... इत्वा ... क्षेत्रफलं भवति । ... पश्चाद्रज्जुसंख्यात्मक ... ति ... गुणिते २८ ... भवति ॥ ११७ ॥

इदानीमूर्ध्वलोकक्षेत्रभेदमाह:—

सामण्ण पत्तेयं अद्धत्थमं तहेव चिण्णट्ठी ।

एदे पंचपयारा लोयक्खेत्तम्हि णायव्वा ॥ ११८ ॥

सामान्य प्रत्येक अर्ध स्तम तथैव विनष्टि ।

एते पञ्चप्रकारा लोकक्षेत्रे ज्ञातव्या ॥ ११८ ॥

सामण्ण । समच्छुत प्रत्येक अर्द्ध स्तम तथैव विनष्टि एते पञ्चप्रकारा ऊर्ध्वलोकक्षेत्रे ज्ञातव्या । मुख १ भूमि ५ जोग ६ दले इत्यादिना सर्वी कृतोर्ध्वलोकार्धक्षेत्रफल ३... मानीय एकस्यैतावति ३... द्वयो किमिति सपात्यापवर्त्य गुणिते सामान्यक्षेत्रफल २१ भवति । भूमौ ५ मुख १ शोधयित्वा अधश्चतुर्थोदयस्य ... चतुष्टय ४ अर्धद्वितीयो ... दयस्य किमिति पवर्त्य सपातित ... समानछेदीकरज्ज्वा ... मेलने कृते ... अर्धद्वितीयोपरितनव्यास ... तत्रैव तत्सपातमेलने ... तदुपरितनव्यास । अध चतुर्थोदयस्य चतुष्टये अर्धोदयस्य किमित्यपवर्त्य सपातित ... अधस्तात् ... मेलने उपरितनव्यास ... । एवमधोदयस्य त्रय ... मेव तत्क्रमो स्फेटने ... उपर्युपरि व्यास स्यात् यावत्पञ्चदल ... । अधश्चतुर्थोदये चतुष्टये ४ एकोदयस्य १ किमिति सपातित ... अधस्तात् ... स्फेटने ... लोकमध्यास स्यात् । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना अधर्द्वितीयोदयादिक्षेत्रफलमानीय सर्वथा मेलने कृते ... प्रत्येक क्षेत्रफल भवति २१ । अर्धस्तमयो क्षेत्रफल सुगमे । मुह १ भूमाण ५ विसेसे ४ उदयहिदेत्यादिना द्विक्षा-

शुपरितननवभूमिव्यासमानीय [illegible] द्वि बाहूपरितना व्यासे [illegible] समच्छेदेन मध्यमैकरज्जुं स्फेटयित्वा [illegible] उभयभागस्यैतावति [illegible] एकभागस्य किमिति त्रैराशिकं कृत्वा अर्धिते [illegible] अधो द्विबाहुमद्दशत्रिभुजभूमि [illegible] अधोद्विबाहूपरिमव्यासे [illegible] समच्छेदमत्रिरज्ज्वा [illegible] स्फेटयित्वा [illegible] अर्धिते [illegible] बहिः सूचीभूमि ॥ ११८ ॥

अथ त्रिभुजोदयार्थं गाथाद्वयमाह,—

रज्जुदुगहाणिठाणे आहुट्ठुदओ जदीह एक्किस्से।
किमिदि तिरासियकरणे फल दलूण तिबाहुदओ ११९

रज्जुद्विकहानिस्थाने अर्धचतुर्थोदयो यदीह एकस्य।
किमिति त्रैराशिककरणे फलं दलेन त्रिबाहूदय ॥ ११९ ॥

रज्जु। रज्जुद्विकहानिस्थाने अर्धचतुर्थोदयो [illegible] यदि सर्वैकस्य [illegible] किमिति त्रैराशिककरणे फलं [illegible] दलयित्वा [illegible] प्रणिधिरेनदयोदय तत्फलं [illegible] समच्छेदरलन्यूनं [illegible] द्विबाहुसहहानिबाहूदय ॥ ११९ ॥

तिभुजुदयूणुदयुग्घं सूईखेत्तस्स भूमिमुहसेसे।
भूमीतप्फलहीणं चउरस्सधराफलं सुद्धं ॥ १२० ॥

त्रिभुजोदयोनमुखयोः सूचीक्षेत्रस्य भूमिमुखशेषे।
भूमितत्फलहीनं चतुरस्रधराफलं शुद्धम् ॥ १२० ॥

तिभुजु। त्रिभुजोदयेन [illegible] ऊन समुच्छिन्नद्विबाहूदय [illegible] बहिः सूचीक्षेत्रस्योदय भूमिमुखयो [illegible] शेषभूमि [illegible] तत्फलहीनं शुद्धं चतुरस्रधराफलं भवति। समच्छिन्नत्रिरज्जु [illegible] द्वितीयद्विबाहूपरितनव्यासे [illegible] अपनीय अवशिष्टे [illegible] अर्धिते [illegible] अन्ताभिमुखभूमि तत्र तत्र व्यासे [illegible] [illegible] शेषिरज्जु अपनीय [illegible] अर्धिते [illegible] तत्र

त्रिभुजभूमि । रज्जुद्वगेत्यादिना त्रैराशिकफलमानीय $\frac{४}{७}$ तत्र समच्छिन्नत्रिदल $\frac{६}{७}$ न्यूने $\frac{१}{७}$ उपरितनात सूच्युदय तदुदये $\frac{१}{७}$ समच्छिन्नदलोदये $\frac{२}{७}$ अपनीते अवशिष्टे $\frac{१}{७}$ उपरितनबहि सूच्युत्सेध । तदुपरितनव्यास $\frac{११}{७}$ समच्छिन्न त्रिरज्ज्वा $\frac{२१}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{१०}{७}$ अर्धिते $\frac{५}{७}$ तद्बहि सूचीभूमि । पुनरपि तद्व्यासे $\frac{११}{७}$ एकसमच्छिन्नरज्जु $\frac{७}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{४}{७}$ अर्धिते $\frac{२}{७}$ उपरितनत्रिभुजभूमि । एतदुपरितनव्यासे $\frac{१५}{७}$ एकरज्जु $\frac{७}{७}$ मपनीय अवशिष्टे $\frac{८}{७}$ अर्धिते $\frac{४}{७}$ अग्रसूचीभूमि । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना अधउपरितनबहि सूचीक्षेत्रफल $\frac{५}{९८}$ $\frac{५}{९८}$ मानीय तत् तयोरत क्षेत्रफले भुजकोटिवधेत्यादिना आनीते $-\frac{१}{}$ अष्टाविंशत्या समच्छिन्ने $\frac{६४}{९८}$ $\frac{३६}{९८}$ स्फेटयित्वा एकक्षेत्रस्यैतावति $\frac{६३}{९८}$ $\frac{२१}{९८}$ दयो । किमिति सपात्यापवर्तिते $\frac{६३}{९८}$ $\frac{२५}{९८}$ अधस्तनोपरितनबहि सूच्यन्त क्षेत्रफल भवति । इतरेषां क्षेत्राणां फलं मुखभूमी जोगदलेत्यादिनानीय चतुर्भि समानछेदं कृत्वा परस्परं मेलयित्वा भवे दशरज्जव मध्यसप्तरज्जव तत्पार्श्वाष्टदलाना चतूरज्जव । एवं सर्वेषां मेलने पिण्डितक्षेत्रफल २१ भवति ॥ १२० ॥

अतो लोकस्य पूर्वापरेण दक्षिणोत्तरेण च परिधिं दर्शयन्नाह,—

पुव्वावरेण परिही उगुदाल साहिय तु रज्जूण ।
दक्खिणउत्तरदो पुण बादाल होंति रज्जूण ॥ १२१ ॥

पूर्वापरेण परिधि एकोनचत्वारिंशत् साधिकं तु रज्जूनाम् ।
दक्षिणोत्तरतः पुनः द्वाचत्वारिंशत् भवति रज्जूनाम् ॥ १२१ ॥

पुव्वा । पूर्वापरेण परिधि एकोनचत्वारिंशत् ३९ साधिका $\frac{२३}{}$ रज्जूनां, दक्षिणोत्तरतः पुनर्द्वाचत्वारिंशद्भवति रज्जूनाम् ॥ १२१ ॥

साधिकत्वं कथमिति चेदाह,—

भुजकोडिकदिसमासो कण्णकदी होदि वग्गरासिस्स ।
गुणयारभागहारा वग्गाणि हवंति णियमेण ॥ १२२ ॥

भुजकोटिकृतिसमास कर्णकृति भवति वर्गराशेः ।
गुणकारभागहारौ वर्गौ भवत नियमेन ॥ १२२ ॥

भुज । भुज ७ कोटि २ कृति ४९।१ समास ५८ कर्णकृतिर्भवति । एकपार्श्वस्यैतावति ५८ द्वयो पार्श्वयो किमिति वर्गराशेर्गुणकारभागहारौ वर्गात्मकौ भवत ५८।२२ नियमेन । एतत्सगुण्य २३२ मूले गृहीते १५$\frac{७}{३०}$ अधोलोकस्य साधिकत्वमभूत । भुज $\frac{७}{२}$ कोटि २ कृति $\frac{४९}{४}$ । ४ चतुर्भिस्समछेदेन समासे $\frac{६५}{४}$ कर्णकृति एक पार्श्वस्यैतावति $\frac{६५}{४}$ चतुर्णां किमिति सपात्यापवर्त्य गुणयित्वा २६० मूले गृहीते १६$\frac{४}{३२}$ ऊर्ध्वलोकस्य साधिकत्वमभूत । मिलितोभयपरिधिरज्जुप ३१ अधोलोकाध परिधि ७ ऊर्ध्वलोकपरिधेश्च १ मेलने ८ व्येकचत्वारिंशत्व ३९ अधिकोभयहारा १०।३२ वर्गीकृत्य १५।१६ ताभ्यामन्योन्यमशछत्रौ १५$\frac{७}{३०}$ $\frac{४}{३२}$ १५ गुणयित्वा $\frac{११३}{३०}$ $\frac{५}{१२८}$ समेत्य $\frac{१७३}{९६}$ चतुर्भिरपवर्तने $\frac{११३}{९६}$ उभयलोका धिक्यं स्यात् । दक्षिणोत्तरपरिधि सुगम ॥ १२९ ॥

अथ लोकपरिवेष्टितवायुस्वरूपादिनिर्णयार्थमाह,—

गोमुत्तमुग्गणाणावण्णाण घणम्बुघणतणूण हवे ।
वादाण वलयतयं रुक्खस्स तय व लोगस्स ॥ १२३ ॥

गोमूत्रमुद्गनानावर्णाना घनाम्बुघनतनूनां भवेत् ।
वाताना वलयत्रय वृक्षस्य त्वगिव लोकस्य ॥ १२३ ॥

गोमुत्त । गोमूत्रमुद्गनानावर्णानां घनोदधिघनवाततनुवातानां वलयत्रयं लोकस्य भवेत् वृक्षस्य त्वगिव ॥ १२३ ॥

अथ तद्वायूना बाहु यनिर्णयार्थमाह

जोयणवीससहस्सं बहलं वलयाण पत्तेयं ।
मूलादुवरि दलादो जाव रज्जुत्ति ॥ १२४ ॥

योजनविंशसहस्र बाहुल्य वल्यनयाणा प्रत्येकम् ।
मूलोकतले पार्श्वे अधस्तात् यावत् रज्जुरिति ॥ १२४ ॥

जोयण । योजनविंशतिसहस्र बाहुल्य वलयत्रयाणां प्रत्येक भवेत् । कुत्र कुत्रेतिचेत् । भुवा ८ तले लोकतले पार्श्वे अधस्ताद्यावदेका रज्जुस्तावत्१२४

अथोपरिमवायुबाहुल्यनिर्णयायमाह,—

सत्तमखिदिपणिधिम्हि य सग पणचत्तारिपणचउक्कतिय
तिरिये बम्हे उड्ढे सत्तमतिरिए च उक्कमं ॥ १२५ ॥

सप्तमक्षितिप्रणिधौ च सप्त पञ्च चतुष्क पञ्च चतुष्क त्रिकम् ।
तिरश्चि ब्रह्मे ऊर्ध्वे सप्तमतिरश्चि च उत्क्रमम् ॥ १२५ ॥

सत्तम । सप्तमक्षितिसदृशे च वायुत्रयाणां यथासंख्येन सप्त पञ्च चतुष्क बाहुल्य, तिर्यक्क्षितिप्रणिधौ पञ्च चतुष्क त्रिकं बाहुल्य । ब्रह्मलोकोर्ध्वलोकप्रणिधौ पुन सप्तमतिर्यक्क्षितौ उत्क्रमं ॥ इदानीं सप्तमक्षितिमारभ्य तिर्यग्भूमिपर्यंत मध्यक्षितीनां हानि मुख १२ भूमीण १६ विशेषे ४ उदय ६ इत्यादिना हानिं आनीय $\frac{4}{6}$ भूमौ १६ एक निष्काश्य समच्छिन्ने $\frac{6}{6}$ तस्मिन् तद्धानिं स्फोटयित्वा $\frac{2}{6}$ अपवर्तिते $\frac{1}{3}$ षष्ठभूप्रणिधिवायुबाहुल्य स्यात् $\frac{44}{3}$ तन्नैकं गृहीत्वा तद्धानि $\frac{2}{6}$ मेव तथा स्फोटयित्वा $\frac{4}{6}$ पञ्चत्य $\frac{2}{3}$ मानतारिमागमेलने पञ्चमभूवायुबाहुल्यं स्यात् $\frac{43}{3}$ । एवमेव तिर्यग्लोकपर्यंत वायुहानिबाहुल्य ज्ञातव्य १४ $\frac{1}{3}$ $\frac{13}{3}$ १२ । इत उर्ध्वलोकवायुचय मुख १२ भूम्यो १६ विशेषं कृत्वा ४ आहृद्दीदमस्य $\frac{4}{3}$ चतुश्चये ४ अर्धद्वितीयोदयस्य - कियान् चय इति सपात्यानीय तत् $\frac{8}{7}$ एतावन्मुखे १२ समच्छेदन $\frac{84}{7}$ संयोज्य $\frac{92}{7}$ भक्ते $\frac{13}{7}$ द्विक्षप्रणिधिवायुबाहुल्य स्यात् । एवमेव तत्र तत्र पृथक् पृथक् त्रैराशिकविधिना उपरितनतनवायुचयहानिबाहु यमानयत् ॥ १२५ ॥

अथ लोकाग्रवायुबाहुल्यं द्योतयन्नाह,—

कोसाण दुगमेक्कं देसूणेक्कं च लोयसिहरम्मि ।
ऊणधणूण पमाणं पणुवीसज्झहियचारिसयं ॥ १२६ ॥

क्रोशानां द्विकमेकं देशोनैकं च लोकशिखरे ।
ऊनधनुषां प्रमाणं पञ्चविंशाधिकचतुःशतम् ॥ १२६ ॥

कोसाण । क्रोशानां द्विकमेकं देशोनैकं च लोकशिखरे ऊनधनुषां प्रमाणं । किमित्युक्ते पञ्चविंशत्यधिकचतुःशतमित्युक्तं च ॥ १२६ ॥

अथ लोकाधस्तनवायुत्रयफलमानयन्नाह,—

लोयतले वादतये वाहल्लं सट्ठिजोयणसहस्सं ।
सेढिभुजकोडिगुणिदं किंचूणं वाउखेत्तफलं ॥ १२७ ॥

लोकतले वातत्रये बाहुल्यं षष्टियोजनसहस्रम् ।
श्रेणिभुजकोटिगुणितं किंचिदूनं वायुक्षेत्रफलम् ॥ १२७ ॥

लोयतले । लोकतले वातत्रये बाहुल्यं षष्टियोजनसहस्रं, श्रेणिभुजकोटिगुणितं पूर्वापरेण समचतुरस्रत्वाभावात् किंचिन्न्यूनमेवं वायुक्षेत्रफलं स्यात् ॥ १२७ ॥

अथ तदुपरि वायुक्षेत्रफलमानयन्नाह,—

किंचूणरज्जुवासो जगसेढीदीहर हवे वेहो ।
जोयणसट्ठिसहस्सं सत्तमखिदिपुव्वअवरे य ॥ १२८ ॥

किंचिदूनरज्जुव्यासः जगच्छ्रेणिदैर्घ्यं भवेत् वेधः ।
योजनषष्टिसहस्रं सप्तमक्षितिपूर्वापरे च ॥ १२८ ॥

किंचूण । किंचिन्न्यूनरज्जुव्यासः जगच्छ्रेणिदैर्घ्यं भवेत् । [illegible] प्रदेश

नपष्टिसहस्रं सप्तमपृथिव्या पूर्वापरद्वयो क्षेत्रयो फलं । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना एकभागस्यैतावति द्वयोर्भागयो किमिति संपातेन चानेतव्यम् ॥ १२८ ॥

इत परं सिद्धफलमाह,—

जगपदरसत्तभाग सट्ठिसहस्सेहि जोयणेहि गुण ।
विगुणिदमुभयपासे वादफल पुव्वअवरे य ॥ १२९ ॥

जगत्प्रतरसप्तभाग षष्टिसहस्रै योजनै गुण ।
द्विगुणित उभयपार्श्वे वातफल पूर्वापरयो च ॥ १२९ ॥

जग । जगत्प्रतरसप्तमभाग षष्टिसहस्रैर्योजनैर्गुणित द्विकगुणित उभयपार्श्वे वातफल पूर्वापरयो ॥ १२९ ॥

अथ दक्षिणोत्तरवातक्षेत्रफलानयनप्रकारमाह,—

उदयमुहभूमिवेहो रज्जुससत्तमछरज्जुसेढी य ।
जोयणसट्ठिसहस्स सत्तमखिदिदक्खिणुत्तरदो ॥ १३० ॥

उदयमुखभूमिवेधा रज्जुससप्तमषड्रज्जुश्रेण्य च ।
योजनषष्टिसहस्र सप्तमक्षितिदक्षिणोत्तरत ॥ १३० ॥

उदय । उदयमुखभूमिवेधा यथासख्य रज्जुससप्तमषड्रज्जुश्रेण्य योजनषष्टिसहस्र सप्तमक्षितिदक्षिणोत्तरत । मुखभूमिजोगदलेत्यादिना त्रैराशिकविधिना चानेतव्यम् ॥ १३० ॥

तत्रैव तत्फलमुच्चारयति,—

तस्स फल जगपदरो सट्ठिसहस्सेहि जोयणेहि हदो ।
चाणउदिगुणो सगघणसभजिदो उभयपासम्हि ॥ १३१ ॥

तस्य फल जगत्प्रतर षष्टिसहस्रै योजनै हत ।
द्वानवतिगुण सप्तघनसभक्त उभयपार्श्वे ॥ १३१ ॥

तस्स । छायामात्रमेवार्थ ॥ १३१ ॥

अथ तदुपरि पूर्वापरपार्श्वगतफलमानयन्नाह,—

सेढी छरज्जु चोद्दसजोयणमायामवासमुस्सेह ।
पुव्ववरपासजुगले सत्तमदो तिरियलोगोत्ति ॥ १३२ ॥

श्रेणी षड्रज्जु चतुर्दशयोजन आयामव्यासोत्सेधम् ।
पूर्वापरपार्श्वयुगले सप्तमतः तिर्यग्लोकात ॥ १३२ ॥

सेढी । श्रेणी षड्रज्जुचतुर्दशयोजनानि आयामव्यासोत्सेधा पूर्वापरपार्श्वयुगले सप्तमतस्तिर्यग्लोकपर्यंत । भुजकोटीत्यादिना द्विपञ्चाशभय-पार्श्वयं द्वाभ्यां सगुण्य नेतव्यम् ॥ १३२ ॥

अथ तस्य सिद्धफलमुच्चारयति,—

तव्वादरुद्धखेत्त जोयणचउवीसगुणिदजगपदर ।
उभयदिसासजणिद णादव्व गणिदकुसलेहिं ॥ १३३ ॥

तद्वातरुद्धक्षेत्र योजनचतुर्विंशतिगुणितजगत्प्रतरम् ।
उभयदिशासंजात ज्ञातव्य गणितकुशलैः ॥ १३३ ॥

तव्वाद । तद्वातावरुद्धक्षेत्रं योजनचतुर्विंशतिगुणितजगत्प्रतरं उभयदिशासंजातं ज्ञातव्यं गणितकुशलैः ॥ १३३ ॥

अथ दक्षिणोत्तरपार्श्वगतफलमानयति,—

उदय भूमुह वेहो छरज्जु सत्तमछरज्जु रज्जू य ।
जोयण चोद्दस सत्तमतिरियोत्ति हु दक्खिणुत्तरदो ।१३४।

उदय भूमुख वेध षड्रज्जव सप्तमषड्रज्जव रज्जुश्च ।
योजनचतुर्दश सप्तमात्तिर्यगन्त हि दक्षिणोत्तरत ॥ १३४ ॥

उदय । उदय भूमध्य वेध षड्रज्जव सप्तमषड्रज्जव एकरज्जु

[illegible] ।

[illegible] ॥ १४५ ॥

[illegible] ॥ १४५ ॥

अथ [illegible] —

रयणप्पहा तिहा खरभागा पंकायबहुलभागाति ।
सोलस चउरासीई सीई जोयणसहस्सबाहल्ला ॥१४६॥

रत्नप्रभा त्रिधा खरभागा पङ्कबहुलभागा इति ।
षोडश चतुरशीतिः अशीतिः योजनसहस्रबाहुल्या ॥ १४६ ॥

रयण । रत्नप्रभा त्रिधा खरभागा पंकभागा अप्बहुलभागा क्रमेण षोडश चतुरशीतिः अशीतिः योजनसहस्रबाहुल्या ॥ १४६ ॥

षोडशभुवां संज्ञा गाथाद्वयेनाह —

चित्ता वज्जा वेलुरियलोहिदक्खा मसारगल्लवणी ।
गोमेदा य पवाला जोदिरसा अंजणा णवमी ॥१४७॥

चित्रा वज्रा वैडूर्या लोहिताख्या मसारकल्पा इति ।
गोमेदा च प्रवाला ज्योतिरसा अंजना नवमी ॥ १४७ ॥

चित्ता । चित्रा वज्रा वैडूर्या लोहिताख्या मसारकल्पा इति गोमेदा च प्रवाला ज्योतिरसा अंजना नवमी ॥ १४७ ॥

अंजणमूलिय अंका फलिहा चंदण सवत्थगा वकुला ।
सेलक्खा य सहस्सा एगेगा लोगचरिमगया ॥ १४८ ॥

अजनमूलिका अंका स्फटिका चदना सवार्थका बकुला ।
शैलाख्या च सहस्रा एकैका लोकचरमगता ॥ १४८ ॥

अजण । अजनमलिका अका स्फटिका चन्द्रना सर्वार्थका बकुला शै लाख्या च सहस्रप्रमिता एकैका लोकचरमगता ॥ १४८ ॥

अथ द्वितीयादीनां बाहुल्यमाह,—

बत्तीसमट्ठवीस चउवीस वीस सोलसट्ठाणि ।
हेट्ठिमछप्पुढवीण सहस्समाणेहिं बाहुलियं ॥ १४९ ॥

द्वात्रिंशदष्टाविंशति चतुर्विंशति विंशति षोडशाष्टौ ।
अधस्तनषट्पृथ्वीना सहस्रमानै बाहुल्य ॥ १४९ ॥

बत्तीस । द्वात्रिंशदष्टाविंशति चतुर्विंशति विंशति षोडशाष्टौ अध स्तनषट्पृथ्वीना योजनसहस्रबाहुल्यम् ज्ञेयम् ॥ १४९ ॥

अथ तासु स्थितपटलानां स्थानान्याह,—

सत्तमखिदिबहुमज्झे बिलाणि सेसासु अप्पबहुलोत्ति ।
हेट्ठुवरिं च सहस्स वज्जिय पटलक्कमे होंति ॥ १५० ॥

सप्तमक्षितिबहुमध्ये बिलानि शेषासु अब्बहुलान्त ।
अध उपरि [redacted] सहस्र वर्जयित्वा पटलक्रमेण भवन्ति ॥ १५० ॥

सत्तम । सप्तमक्षितिबहुमध्ये बिलानि शेषासु अब्बहुलभागपर्यंत अध उपरि [redacted] सहस्रयोजन वर्जयित्वा पटलक्रमेण भवति ॥ १५ ॥

अथ प्रथमादीनां त्रिंशत्यामाह —

तीस पणुवीस पण्णरस दस तिण्णि पचहीणेक्क ।
लक्खं सुद्धं पच य पुढवीसु कमेण णिरयाणि ॥ १५१ ॥

त्रिंशत् पंचविंशतिः पंचदश दश त्रीणि पंचहीनैकं ।
लक्षं शुद्धं पंच च पृथ्वीषु क्रमेण निरयाणि ॥ १५१ ॥

तीसं । त्रिंशत् पंचविंशति पंचदश दश त्रीणि पंचहीनैकं लक्षं शुद्धं पंच च पृथ्वीषु क्रमेण निरयाणि बिलानि इत्यर्थः ॥ १५१ ॥

अथ तास्वतिशीतोष्णविभागमाह,—

रयणप्पहपुढवीदो पंचमतिचउत्थओत्ति अदिउण्हं ।
पंचमतुरिए छट्टे सत्तमिए होदि अदिसीदं ॥ १५२ ॥

रत्नप्रभापृथ्वीतः पंचमीत्रिचतुर्थांतं अत्युष्णम् ।
पंचमतुरीये षष्ठ्यां सप्तम्यां भवति अतिशीतम् ॥ १५२ ॥

रयण । रत्नप्रभापृथ्वीमारभ्य पंचमपृथ्व्यास्त्रिचतुर्थभागपर्यंतं अत्युष्णं पंचमपृथ्व्याश्चतुर्थे भागे षष्ठ्यां सप्तम्यां च भुवि भवत्यतिशीतम् ॥ १५२ ॥

अथ तास्विंद्रकश्रेणीबद्धसंख्यामाह,—

तेरादि दुहीणिंदय सेढीबद्धा दिसासु विदिसासु ।
उणवण्णडदालादी एक्केक्केणूणया कमसो ॥ १५३ ॥

त्रयोदशाद्या द्विहीना इंद्रकाः श्रेणीबद्धा दिशासु विदिशासु ।
एकोनपंचाशदष्टचत्वारिंशादि एकैकेन न्यूना क्रमशः ॥ १५३ ॥

तेरादि । त्रयोदशाद्या द्विहीना इंद्रकाः श्रेणीबद्धा दिशासु यथासंख्यमे कोनपंचाशदष्टचत्वारिंशदादि पटलं पटलं प्रत्येकैकेन न्यूना क्रमशः ॥ १५३ ॥

अथ तासिंद्रकसंज्ञा गाथाषट्केनाह,—

सीमंतणिरयरोरवभंतुब्भंतिंदिया य संभंतो ।
तत्तोवि असंभंतो विब्भंतो पंचमओ तत्थो ॥ १५४ ॥

सीमतनिरयरौरवभ्रांतोद्भ्रांतेंद्रका च संभ्रांत ।
ततोपि असंभ्रांत विभ्रांत नवम त्रस्त ॥ १५४ ॥

सीमंत । सीमंतनिरयरौरवभ्रांतोद्भ्रांतेंद्रका च संभ्रांत ततोप्यसंभ्रांत विभ्रांत नवम त्रस्त ॥ १५४ ॥

तसिदो वक्कतक्तो होदि अवक्कतणाम विक्कतो ।
पढमे तदगो थणगो वणगो मणगो खडा खडिगा॥१५५॥

त्रसितो वक्रातान्य भवति अवक्रांतनाम विक्रांत ।
प्रथमायां ततक स्तनक वनक मनक खडा खडिका ॥ १५५ ॥

तसिदो । त्रसितो वक्रांताख्यो भवति अवक्रांतनाम विक्रांत प्रथमपृथिव्यां १३ ततकस्तनक वनक मनक खडा खडिका ॥ १५५ ॥

जिब्भा जिब्भिगसण्णातो लोलिगलोलवच्छथणलोलो ।
बिदिए तत्तो तविदो तवणो तावणणिदाहा य॥१५६॥

जिह्वा जिह्विकसंज्ञा ततो लोलिकलोलवत्सस्तनलोला ।
द्वितीयायां तप्त तपित तपन तापननिदाघौ च ॥ १५६ ॥

जिब्भा । जिह्वा जिह्विकसंज्ञा ततो लोलिकलोलवत्सस्तनलोला द्वितीयायां ११ तप्तस्तपितस्तपनस्तापननिदाघौ च ॥ १५६ ॥

उज्जलिदो पज्जलिदो सजलिदो संपजलिदणामा य ।
तदिए आरा मारा तारा चच्चा य तमगी य ॥ १५७ ॥

उज्वलित प्रज्वलित संज्वलित संप्रज्वलितनामा च ।
तृतीयायां आरा मारा तारा चर्चा च तमकी च ॥ १५७ ॥

उज्ज । उज्जालिता प्रज्वालित संज्वलित। संज्वलितनामा च दृष्टौ
धायाँ ९ आरा मारा तारा चर्चा च तमकी च ॥ १५७ ॥

घाडा घडा चउत्थे तमगा ममगा य झमग अद्विंग।
तिमिसा य पचमे हिमवद्दललल्लगितय छट्ठे ॥ १५८॥

घाटा घटा चतुर्थ्यां तमका भ्रमका च झषका अँद्रा।
तिमिश्रा च पञ्चम्यां हिमवा॰र्दिल्लकानित्रयं षष्ठ्यां ॥ १५८ ॥

घाडा। घाटा घटा चतुर्थ्यां ७ तमका भ्रमका च झषका अँद्रा
तिमिश्रा च पञ्चम्यां ५ हिमवार्दिल्लकत्रय मिति त्रयं ३ षष्ठ्यां ॥१५८॥

ओहिट्ठाण चरिमे तो सीमंतादिसेटिबिलणामा।
पुव्वादिदिसे कखापिवास महकख अइपिवासा य॥१५९॥

अप्रतिष्ठान चरमे ततः सीमन्तादिश्रेणिबिलनामानि।
पूर्वादिदिशायां काक्षा पिपासा महाकाक्षा अतिपिपासा च ॥१५९॥

ओहि। अवधिस्थान अप्रतिष्ठितस्थान वा चरमे चरमायां। ततः
सीमन्तादिश्रेणिबिलनामानि। चरमायां पूर्वादिदिशायां काक्षा पिपासा
महाकाक्षा अतिपिपासा च ॥ १५९ ॥

अथोत्तराधस्य पातनिका गर्भीकृत्य गाथात्रयमाह,—

घसतदगे अणिच्छा अविज्ज महाणिच्छ महअविज्जा य।
तत्ते दुक्खा वेदा महदुक्ख महादिवेदा य ॥ १६०॥

धर्मातत्के अनिच्छा अविद्या महानिच्छा महाऽविद्या च।
तप्ते दुःखा वेदा महादुःखा महादिवेदा च ॥ १६० ॥

धस। धर्मायास्तनकद्वके अनिच्छा अविद्या महानिच्छा महाविद्या च।
मेघायां तप्तेंद्रके दुःखा वेदा महादुःखा महावेदा च ॥ १६० ॥

आराए दु णिसिट्ठाणिरोहअणिसिट्ठमहणिरोहा य ।
तमग णिरुद्धविमद्दण अइपुव्वणिरुद्धमहविमद्दणया ॥

आराया तु निसृष्टा निरोधा अनिसृष्टा महानिरोधा च ।
तमके निरुद्धविमर्दनअतिपूर्वनिरुद्धमहाविमर्दना ॥ १६१ ॥

आराए । अञ्जनाया आरेंद्रके तु निसृष्टा निरोधा अनिसृष्टा महानिरोधा च अरिष्टाया तमकेंद्रके निरुद्धविमर्दनअतिनिरुद्धमहाविमर्दनकाश्च ॥ १६१ ॥

हिमगा णीला पका महणील महादिपक सत्तमय ।
पढमो काळो रउरयमहकालमहादिरउरयया ॥ १६२ ॥

हिमके नील पङ्का महानील महादिपंका सप्तमागाय ।
प्रथम काल रौरवमहाकालमहादिरौरवा ॥ १६२ ॥

हिमगा । मघव्या हिमकमध्ये नीला पङ्का महानीला महापंका च सप्तमायां प्रथम काल रौरवमहाकालमहारौरवा ॥ १६२ ॥

अथ प्रतिपदि प्रथमपटलधन मत्वा चरमपटलधनमानेतुं चरमपटलधनं मत्वा प्रथमपटलधनमानेतु वा गाथ माह,—

वेगपदं पयगुणिदं भूमिहि मुहम्मि रिणधनं च कए ।
मुहभूमीजोगदले पदगुणिदे पदधण होदि ॥ १६३ ॥

व्येकपदं चयगुणितं भूमौ मुखे ऋण धनं च कृते ।
मुखभूमियोगदले पदगुणिते पदधनं भवति ॥ १६३ ॥

वेगपदं । प्रथमपटलेन्द्रकविस्तारकाद्वयं ह ४५ ४८ अन्ते का १७ चयगुणि समाधान ह ८ आगमयत चरमपटलेन्द्रक ... मध्य ... मद ह १७ ... ६ अनाय ... ७ ... अन्तं ... ... मव

भूमौ ३८८ मुखे च २९२ यथासम्भवेन विगतैकं पद १२ चय ८ गुणितं ९६ ऋणे धने च कृते २९२।३८८ मुखभूमी स्याताम् । तयोर्योगे ६८० दलिते ३४० पद १३ गुणिते ४४२० प्रथमपृथ्वीश्रेणिबद्धसकलितद्धन भवति । इन्द्रकसहितमेवामनेनान्य ४४३३ । सप्तमपृथ्वीश्रेणिबद्धानधनेप्येवमेवानेतव्यम् । तत्र मुख ५ भूमि ३८९ ॥ १६३ ॥

इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रमाणानयने सकलितसूत्रमाह,—

पदमेगेणविहीणं दुभाजिदं उत्तरेण संगुणिदं ।
पभवजुदं पदगुणिदं पदगणिदं तं विजाणाहि ॥ १६४ ॥

पदमेकेन विहीनं द्विभक्तं उत्तरेण संगुणितं ।
प्रभवयुतं पदगुणितं पदगणितं तत् विजानीहि ॥ १६४ ॥

पद । पद १३ एकेन हीन १२ द्वाभ्यां भक्त ६ उत्तरेण संगुणित ४८ प्रभव २९२ युत ३४० पद १३ गुणित ४४२० तत्सकलितपदगणितमिति विजानीहि । एवं द्वितीयादि सर्वपृथिव्यामानेतव्यं ॥ १६४ ॥

अथ प्रकारान्तरेण सकलितानयनमाह,—

पुढविंदयमेगूणं अद्धकयं वग्गियं च मूलजुदं ।
अट्ठगुणं चउसहिदं पुढविंदयताडियं च पुढविधणं १६५

पृथ्वीन्द्रकमेकोनं अर्धकृतं वर्गितं च मूलयुतम् ।
अष्टगुणं चतुःसहितं पृथ्वीन्द्रकताडितं च पृथ्वीधनम् ॥ १६५ ॥

पुढविं । पृथ्वीन्द्रकसंख्या १३ एकोनां १२ संस्थाप्य अनेन हानिवृद्ध्योरभावात् प्रथमपटले चयशलाका प्ररूपिता । अर्धीकृता चयशलाका ६।८ स्थापयेत् । अनेन सर्वत्र पटलेषु रूपोनगच्छार्धमात्र्यचयशलाकाः समीकृता जाता इति अर्धकयं मित्युक्तं । वग्गियं च अत्र

द्विगतेषु सर्वत्र रूपचतुष्टयमपनीय पृथक् संस्थाप्य अपनीतद्विद्विद्विगत संख्या ३६।८ सर्वत्र समाना । इदमेवादिंदय । इदं सर्वत्र सदृशमेवा धनिष्ठने । इदं दृष्ट्वा वर्गित चेत्युक्त । मूलजुत आदिधनत्रगमूल प्रमाणया चयशलाकया ६।८ युत आदिधन ३६।८ गुणकारयो साम्यात् आदिधने ३६ चयशलाका ६ संयोज्या ४२ अष्टगुणं दिग्विदिग्गतगुणकाराष्टकेन ८ चयशलाकायुतादि ३६।८ घन ४९ गुणयेत् ३३६ । अत्र चतुःसहितं पूर्वं पृथक्स्थापितद्विग्गताधिकरूपचतुष्टय मेलयेन ३४० पुर्वविदयता चिप च इदं समीकरणवशात् सर्वेषु पटलेषु समानमिति कृत्वा एकस्मिन् पटले १ एतावंति श्रेणिनिबद्धानि यदि स्यु ३४० तदा त्रयोदशसु पटलेषु १३ कियति स्युरिति त्रैराशिकेन समुत्पन्नगुणकारेण पृथ्वीप्रक प्रमाणेन ताडिते पुष्पविधणे पृथ्वीगतश्रेणीबद्धप्रमाण स्यात् ४४२० । एवं द्वितीयादिषु पृथ्वीष्वपि श्रेणिबद्धप्रमाणमानेतव्यम् ॥ १६५ ॥

अथ प्रकीर्णकसंख्यानयनमाह,—

सेढीण विचाले पुप्फपइण्णय इव ठ्ठिया णिरया ।
होंति पइण्णयणामा सेढिंदयहीणरासिसमा ॥ १६६ ॥

श्रेणीना अंतराले पुष्पप्रकीर्णकानि इव स्थितानि निरयाणि ।
भवति प्रकीर्णकनामानि श्रेणीन्द्रकहीनराशिसमानि ॥ १६६ ॥

सढीणं । श्रेणीनां विचाले अतराले पुष्पाणि प्रकीर्णकानीव स्थितानि निरयाणि भवति । प्रकीर्णकनामानि श्रेणीन्द्रक ४४२०।१३ हीनराशि ३०००००० समानानि २९९५५६७ । एवं पृथ्वी प्रत्यानेतव्यम् ॥१६६॥

अथ नरकबिलानां विस्तारप्रतिपादनायमाह,—

पंचमभागपमाणा णिरयाण होंति संखवित्थारा ।
सेसचउपंचभागा असंखवित्थारया णिरया ॥ १६७ ॥

पञ्चमभागप्रमाणा निरयाणां भवन्ति सङ्ख्यविस्तारा ।
शेषचतुःपञ्चभागा असङ्ख्यविस्ताराणि नरकाणि ॥ १६७ ॥

पंचम । पंचमभागप्रमाणा ३०००००० नरकाणां भवन्ति सङ्ख्येय विस्तारा ६००००० तच्छेषचतुःपञ्चभागा २४००००० असङ्ख्येय विस्ताराणि नरकाणि सङ्ख्येयविस्तारेषु ६००००० इन्द्रकापनयने १९ कृते ५९९९८७ अत्र शेषाणि सङ्ख्येयविस्तारप्रकीर्णकानि भवन्ति । असङ्ख्येयविस्तारेषु २४००००० श्रेणीबद्धा ४४२० पनयने कृते २३९५५८० शेषाणि असङ्ख्येयविस्तारप्रकीर्णकानि भवन्ति प्रत्येकं द्वितीयादिपृथिव्यां समस्ते च धने एवमवमानेतव्य ॥ १६७ ॥

अथ सङ्ख्यातासङ्ख्यातयोनियतत्वं प्रदर्शयन्नाह,—

इदयसेढीबद्धा पइण्णयाण कमेण वित्थारा ।
संखेज्जमसंखेज्जं उभयं च य जोयणाण हवे ॥ १६८ ॥

इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्ताराः ।
सङ्ख्येयमसङ्ख्येयमुभयं च च योजनानां भवेत् ॥ १६८ ॥

इदय । छायामात्रमेवार्थः ॥ १६८ ॥

अथेन्द्रकगतरुन्द्रत्वं विशेषयति,—

माणुसखेत्तपमाणं पढमं चरिमं तु जंबुदीवसमं ।
उभयविसेसे रूऊणिंदयभजिदम्हि हाणिचयं ॥ १६९ ॥

मानुषक्षेत्रप्रमाणं प्रथमं चरमं तु जम्बूद्वीपसमम् ।
उभयविशेषे रूपोनेन्द्रकभक्ते हानिचयं ॥ १६९ ॥

माणुस । मानुषक्षेत्रप्रमाणं ४५००००० प्रथमेन्द्रकप्रमाणं चरमेन्द्रकं जम्बूद्वीप १००००० समं उभयोर्विशेषे शोधने ४४००००० रूपन्यूनेन्द्रक

४८ मते शेषे च $\frac{1}{१८}$ षाडशभिरपवर्तिते ९१६६६$\frac{2}{3}$ हानिचय ज्ञातव्यं । एतद्धानिचय चचत्वारिंशद्गुणे रज्ज्वे कृते ४४०८३३३$\frac{1}{3}$ द्वितीयेंद्रकायामप्रमाण स्यात् । एवमुपर्युपरींद्रकायामप्रमाणे ४४०८३३३$\frac{1}{3}$ तद्धानिमेव ९१६६६$\frac{2}{3}$ स्फेटयित्वा अवशिष्टमधो ४८४ इंद्रकायामप्रमाणं स्यात् ॥ १६९ ॥

अथेंद्रकादित्रयाणां बाहुल्यं प्रमाणयति,—

छक्कट्ठचोद्दसादिसु पडिपुढविमुखब्भसहियकोसेसु ।
छहिं भजिदेसु बहलं इंदयसेढीपइण्णाणं ॥ १७० ॥

षट्‌काष्टचतुर्दशादिषु प्रतिपृथ्वीमुखाभ्रसहितक्रोशेषु ।
षड्भि भक्तेषु बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीप्रकीर्णानाम् ॥ १७० ॥

छक्कट्ठ । षट्‌ ६ अष्ट ८ चतुर्दशसु १४ आदिषु प्रथमपृथ्वींद्रकादिषु षड्भिर्भक्तेषु १ $\frac{1}{3}$ $\frac{4}{3}$ प्रथमभित्तींद्रकादिबाहुल्यं स्यात् । द्वितीयादि प्रतिपृथ्विमुखाभ्र २ । ८ । ७ । सहितेषु तेषु ६ । ८ । १४ क्रोशेषु ९ । ११ । २१ छ १२ । १६ । २८ छ १५ । २० । ३५ छ १८ । २४ छ २१ । २८ । ४९ छ २४ । ३२ । ० षड्भिर्भक्तेषु $\frac{3}{2}$ । २ । $\frac{7}{2}$ इत्यादि बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानाम् ॥ १७० ॥

अथ पुनरपि तद्बाहुल्यं प्रकारांतरेणाह,—

रूवहियपुढविसंखं तियचउसत्तेहिं गुणिय छब्भजिदे ।
कोसाणि बेहुलियं इंदयसेढीपइण्णाणं ॥ १७१ ॥

रूपाधिकपृथिवीसंख्यां त्रिकचतुःसप्तभिः गुणयित्वा षड्भक्ते ।
क्रोशाना बाहुल्यं इंद्रकश्रेणीप्रकीर्णानाम् ॥ १७१ ॥

रूप । रूपाधिकपृथिवीसंख्यां २ । २ । २ । छ ३ । ३ । ३ छ ४ । ४ । ४ छ । इत्यादि त्रि ३ चतु ४ सप्तभि ७ गुणयित्वा ६ । ८ १४

छ ९। १२। २१। छ १२। १६। २८ इत्यादि प्रत्येक पद्भूमिगानि इन्द्र १। $\frac{४}{३}$। $\frac{५}{३}$। $\frac{२}{३}$। २। $\frac{७}{३}$। २। $\frac{८}{३}$। $\frac{१४}{३}$। इत्यादि क्रोशाना वाहुल्य इन्द्र श्रेणीवद्धप्रकीर्णकानाम् ॥ १७१ ॥

अथद्रकप्रभृतीना व्यवधानप्रमाणमाह,—

पदराहय बिलबहल पदरट्ठिदभूमिदो विसोहित्ता।
रूऊणपदहिदाए बिलतर उड्ढगं तीए ॥ १७२॥

प्रतराहत बिलबाहल्य प्रतरस्थितभूमित विशोध्य।
रूपोनपदहृताया बिलातर ऊर्ध्वग तस्या ॥ १७२ ॥

पदर। प्रतरा १३ हत बिलबाहल्य इन्द्रक १ श्रेणीवद्ध $\frac{४}{३}$ प्रकीर्णकाना $\frac{७}{३}$ वाहुल्य १३। $\frac{५२}{३}$। $\frac{९१}{३}$ चतु क्रोशाना एकयोजने इयत क्रोशाना किमिति सपात्य योजन कृत्वा तत् $\frac{१३}{४}$। $\frac{५२}{१२}$। $\frac{९१}{१२}$ प्रतरस्थित भूमित उपर्यध सहस्रसहस्रयोजनहीनाशीतिसहस्रे ७८००० तथा हीन बत्तीस ३०००० मट्टावीसादि २६००० सहस्रे च समानछेदेनापनीय $\frac{३११९८७}{४}$ श्रेणीवद्ध चतुर्भिरपवर्त्यापनीय $\frac{३३३१८७}{३}$ प्रकीर्णक समच्छेदेनापनीय $\frac{९३५५१९}{१२}$ रूपन्यूनपद १२ हृतायां सत्या $\frac{३११९८७}{४८}$, $\frac{३३३१८७}{३६}$, $\frac{९३५५१९}{१४४}$ तत्पृथिव्या ऊर्ध्वग बिलांतर भवति ॥ १७२ ॥

अथोपरिमाधस्तनपटलयोरतर निरूपयति,—

उवरिमपच्छिमपडला हिट्ठिमपढमिल्लपत्थरतरय।
रज्जू तिसहस्सूणिदधम्मा वसुदयपरिहीणा ॥ १७३॥

उपरिमपश्चिमपटलात् अधस्तनप्रथमप्रस्तारातरक।
रज्जु त्रिसहस्रोनितघमा वसोदयपरिहीना ॥ १७३ ॥

उवरिम। उपरिमपश्चिमपटलात् अधस्तनप्रथमपटलांतरक रज्जु सा कथभूता ? धर्मावरिमचित्राभवद्धधर्मापश्चिमपटलाधस्तनसहस्रे द्वेश

प्रथमपटलोपरितनसहस्रमिति त्रिसहस्रोनितघर्मा १८०००० वंशो ११००० इप २११०००० परिहीना स्यात् ७२०१००० ॥ १७३ ॥

अथ ततोऽप्यधोऽधो भूमीनां पटलयोरंतरं निरूपयति,—

कमसो बिसहस्सूणियमेघादीण च सेद्दपरिहीणा ।

चरिमे बितिभागाहियजोयणतिसहस्सपरिवज्जा ॥ १७४ ॥

क्रमशो द्विसहस्रोनितमेघादीनां च शेषपरिहीना ।

चरमे द्वित्रिभागाधिकयोजनत्रिसहस्रपरिवर्जा ॥ १७४ ॥

कमसो । क्रमशो द्विसहस्रोनितमेघादीनां च शेष $\frac{२८}{२}$— । $\frac{२४}{०}$ ॥ $\frac{२}{०}$— । $\frac{२}{१}$— परिहीना चरमांतरानयने द्वित्रिभागा $\frac{२}{३}$ धिकयोजन त्रिसहस्रपरिवर्जा रज्जु । बितिभागाहिय इत्यादेर्वासनोच्यते-सप्तमपृथ्वी बाहल्ये ८००० श्रेणीबद्धबाहल्य $\frac{१}{३}$ योजनीकृत्य $\frac{१}{३}$ अपवर्तितश्रेणी बद्धबाहल्यं $\frac{४}{३}$ समच्छेदेन $\frac{२४}{३}$— अपनीय $\frac{२३९९९}{३}$ अर्धीकृत्य $\frac{११९९९८}{३}$ मकृत्वा $\frac{११९९९}{}$ षष्ठमित्यघस्तनपटलाध सहस्रमत्र मेलयित्वा $\frac{४१९९९}{३}$ । इदं सप्तमपृथ्वीबाहल्ये ८००० एकेन न्यूना भवति ॥ १७४ ॥

अथ बिलानां तिर्यगंतरं गाथाद्वयेन निरूपयति—

संखेज्जवासणिरए तेरिच्छं अंतरं जहण्णमिणं ।

इगिजोयणमद्धजुदं जोयणतिदयं हवे जेट्ठं ॥ १७५ ॥

संख्यातव्यासनिरये तैरश्चमंतरं जघन्यमिदं ।

एकयोजनमर्धयुतं योजनत्रितयं भवेत् ज्येष्ठम् ॥ १७५ ॥

संखेज्ज । संख्यातव्यासनरकबिले प्रकाणकं तिर्यगंतरं जघन्यमिदं एकयोजनमर्धयुतं $\frac{३}{२}$ योजनत्रयं भवति ज्येष्ठं ॥ १७५ ।

जोयणसत्तमहम्म अमग्गनित्थारजुत्तणिरयाण ।
अतरमवर णेय जेट्ठममखेज्जजोयणय ॥ १७६ ॥

योजनसप्तमहस्र असंख्यविस्तारयुक्तनिरयाणाम् ।
अनरमवर ज्ञेय ज्येष्ठमसंख्येययोजनकम् ॥ १७६ ॥

जोयण । योजनसप्तसहस्रं असंख्यविस्तारयुक्तनारकाणां नियन्त्यन्तरं ज्ञेय ज्येष्ठमसंख्येययोजनकम् ॥ १७६ ॥

अथ तेषां बिलानां संस्थानादिकं निरूपयति,—

वज्जघणभित्तिभागा वट्टतिचउरंसबहुविहायारा ।
णिरया सयावि भरिया सव्विंदियदुक्खदाइदव्वेहिं ॥ १७७ ॥

वज्रघनभित्तिभागा वृत्तत्रिचतुरस्रबहुविधाकारा ।
निरयाः सदापि भृता सर्वेन्द्रियदुःखदायिभि ॥ १७७ ॥

वज्ज । वज्रघनभित्तिभागा वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रबहुविधाकारा निरया सदापि भृता सर्वेन्द्रियदुःखदायिभिर्द्रव्यैः ॥ १७७ ॥

अथ तत्रस्थदुर्गंधं दृष्टान्तमुखेन निर्दिशति,—

मज्जारसाणसूयरखरवाणरकरहहत्थिपहुदीण ।
कुहिदादहिदुग्गधा णिरया णिच्चंधयारचिदा ॥ १७८ ॥

मार्जारश्वसूकरखरवानरकरभहस्तिप्रभृतीनाम् ।
कुथितादतिदुर्गंधा निरया नित्यान्धकारचिता ॥ १७८ ॥

मज्जार । छायामात्रमेवार्थ ॥ १७८ ॥

अथ तत्रोत्पद्यमानजीवान् तदुत्पत्तिस्थान च निर्दिशति,—

उप्पज्जंति तहिं बहुपरिग्गहारंभसंचिदाउस्सा ।
उट्टादिमुहायारसुवरिल्लुवरादिठाणेसु ॥ १७९ ॥

उत्पद्यन्ते तेषु बहुपरिग्रहारम्भसञ्चितायुष्या ।
उष्ट्रादिमुखाकारेषु उपरितनोपपादस्थानेषु ॥ १७९ ॥

उप्पज्जंति । उत्पद्यन्ते तेषु बहुपरिग्रहारम्भसञ्चितनरकायुषः उष्ट्रादिमुखाकारेषु उपरितनोपपादनस्थानेषु ॥ १७९ ॥

अथ तेषामुपपादस्थानानां व्यासबाहल्ये कथयति,—

इगिबितिकोसो वासो जोयणमवि जोयण सय जेट्ठं ।
उट्टादीण बहल्लं सगविस्थारेहि पंचगुणं ॥ १८० ॥

एकद्वित्रिक्रोशा व्यास योजनमपि योजनशतं ज्येष्ठं ।
उष्ट्रादीनां बाहल्यं स्वकविस्तारेभ्य पञ्चगुणम् ॥ १८० ॥

इगिबि । एकद्वित्रिक्रोशो व्यास योजनमपि एकद्वित्रियोजनानां शत । एतानि सप्तपृथ्वीनां यथासंख्येन ज्येष्ठव्यासप्रमाणानि उष्ट्राद्युपपादस्थानानां तद्बाहल्यं स्वकविस्तारेभ्य पञ्चगुणम् ॥ १८० ॥

अथोपपादस्थानेषूत्पन्नाः किं कुर्वन्तीत्यत आह,—

अंतोमुहुत्तकाले तदो चुदा भूतलम्हि तिक्खाणं ।
सत्थाणमुवरि पडिदूणुट्ठिय पुणोवि णिवडंति ॥१८१॥

अन्तर्मुहूर्तकाले ततश्च्युता भूतले तीक्ष्णानां ।
शस्त्राणामुपरि पतित्वा उत्थाय पुनरपि निपतन्ति ॥ १८१ ॥

अंतो । [illegible] ॥ १८१ ॥

अथ [illegible] आह

पणपणजोयणमाणं [illegible] उप्पडंति णारइया ।
पढमादि [illegible] दुगुणं दुगुणाति णादव्वा ॥ १८२ ॥

[illegible] गुणानि वैक्रियिका ।

धर्मायां वैक्रियिकं द्विगुणं द्विगुणं इति ज्ञातव्यम् ॥ १८२ ॥

धम्म । [illegible] गुणानि वैक्रियिका धर्मायां [illegible] द्विगुणं द्विगुणं वेदि [illegible] ॥ १८२ ॥

अथ तत्रत्या [illegible] किं कुर्वन्ति [illegible] —

पीलिज्जिंता तत्थ य [illegible] ।
णांवंति णिदिसि य वगेतु बहुलाणवारीणि ॥ १८३ ॥

पीड्यमाना तदा [illegible] आगम्य ।
प्रति निर्विशन्ति च मग्नु बहुलावर्तीनि ॥ १८३ ॥

पीडा । पीड्यमाना [illegible] तत्र पूतनाम् [illegible] आगम्य प्रति निर्विशन्ति च मग्नु बहुलावर्तीनि ॥ १८३ ॥

अथ ते भूतना किं कुर्वन्तीत्याह,—

तेवि विहंगेण तदो जाणिदपुव्वावरारिसंबधा ।
असुहापुहविक्किरिया हणंति हण्णंति वा तेहिं ॥१८४॥

तेपि विभंगेन तत ज्ञातपूर्वापरारिसंबधा ।
अशुभापृथग्विक्रिया घ्नंति हन्यते वा तैः ॥ १८४ ॥

तेवि । तेपि विभंगेन तत पर ज्ञातपूर्वापरारिसंबधा अशुभापृथग्वि-क्रिया सत घ्नंति परान् स्वयं हन्यते वा तैरन्यैः ॥ १८४ ॥

अथापृथग्विक्रियाकरणप्रकारमाह —

वयवग्धघूगकागहिविच्छियभल्लकागिद्धसुणयादिं ।
सूलग्गिकातमोग्गरपहुदी सगे विकुव्वंति ॥ १८५ ॥

धूप दग्धद्रवताराद्विषाग्निभक्ष्यभुजगादि ।
शूल्यादिवृन्तद्रुमप्रभृतीन् स्थाने विकुर्वन्ति ॥ १८५ ॥

धव । छायामात्रमेवार्थः ॥ १८५ ॥

अथ क्षेत्रजनितदुःखं गाथाद्वयेनाह,—

वेदालगिरी भीमा जंतसयउक्कडगुहा य पडिमाओ ।
लोहणिहग्गिकणड्ढा परसूछुरिगासिपत्तवणं ॥ १८६ ॥

वेतालगिरयः भीमा यन्त्रशतोत्कटगुहाश्च प्रतिमाः ।
लोहनिभाग्निकणाढ्याः परशुक्षुरिकासिपत्रवनम् ॥ १८६ ॥

वेदाल । वेतालाकृतिगिरयः भीमाः यन्त्रशतोत्कटगुहाश्च तत्रस्थाः प्रतिमाः लोहनिभाग्निकणाढ्याः वनं च परशुक्षुरिकासिपत्रवनम् ॥ १८६ ॥

कूडा सामलिरुक्खा वइदरणिणदीउ खारजलपुण्णा ।
पूहरुहिरा दुगंधा दहा य किमिकोडिकुलकलिदा १८७॥

कूटाः शाल्मलिवृक्षाः वैतरणीनद्यः क्षारजलपूर्णाः ।
पूयरुधिराः दुर्गंधाः ह्रदाश्च कृमिकोटिकुलकलिताः ॥ १८७ ॥

कूडा । कूटाः असत्याः शाल्मलिवृक्षाः वैतरण्याख्या नद्यः क्षारजलपूर्णाः पूयरुधिराः दुर्गंधाः ह्रदाश्च क्रिमिकोटिकुलकलिताः ॥ १८७ ॥

अथ तथाविधनदीमाध्ये किं भवतीत्यत आह,—

अग्गिभया धावंता मण्णंता सीयलंति पाणीयं ।
ते वइदरणिं पविसिय खारोदयदड्ढसव्वंगा ॥ १८८ ॥

अग्निभयाद्धावन्तः मन्यमानाः शीतलमिति पानीयं ।
ते वैतरणीं प्रविश्य क्षारोदकदग्धसर्वांगाः ॥ १८८ ॥

अग्गि । अग्निभयाद्धावत मध्यमाना शीतलमिति पानीयं ते नूतननारका वैतरणीं प्रविश्य क्षारोदकदग्धसर्वांगा सत ॥ १८८ ॥

अथ ते पुन किं कुर्वंतीत्यत आह,—

उट्ठिय वेगेण पुणो असिपत्तवणं पयाति छायेत्ति ।
कुंतासिसत्तिजट्ठिहिं छिज्जंते वादपडिदेहिं ॥ १८९ ॥

उत्थाय वेगेन पुन असिपत्रवनं प्रयाति छायेति ।
कुंतासिशक्तियष्टिभिश्छिद्यन्ते वातपतितैः ॥ १८९ ॥

उट्ठिय । तत्रेति शेष । छायामात्रमेवार्थ ॥ १८९ ॥

अथ तथा बहिर्दुःखसाधनमाह,—

लोहोदयभरिदाओ कुंभीओ तत्तबहुकडाहा य ।
मतत्तलोहफासा भू सूईसंडुलाइण्णा ॥ १९० ॥

लोहोदकभरिता कुम्भ्य तप्तबहुकटाहाश्च ।
सतप्तलोहस्पर्शा भू सूचीशाड्वलाकीर्णा ॥ १९० ॥

लोहो । छायामात्रमेवार्थ ॥ १९० ॥

अथ क्षेत्रस्वभावजं दृष्टांतमुखेनाह,—

विच्छियसहस्सवेयणसमधियदुक्खं धरित्तिफासादो ।
कुक्खसिरसीसरोगगछुधतिसभयवेयणा तिव्वा ॥१९१॥

वृश्चिकसहस्रवेदनासमधिकदुःखं धरित्रीस्पर्शात् ।
कुक्ष्यक्षिशीर्षरोगगच्छुधातृषाभयवेदना तीव्रा ॥ १९१ ॥

विच्छिय । स्यादिति शेष । छायामात्रमेवार्थ ॥ १९१ ॥

अथ ते किं भुजते इत्यत आह,—

सादिकुहिदातिगंधं सणिमण्णं मट्टियं विभुजंति ।
घम्मभवा वसादिसु असंखगुणिदासुहं तत्तो ॥ १९२ ॥

स्व'र्गेषु वैमानिगणां शनैरस्त्री कृतिकां विधुनते ।
धर्मधरा धर्मादिषु असुरसुरगणिनानुपमा तत ॥ १९२ ॥

साहि । स्वर्गादिषु दिवादिवितिषुर्गेषां शनैरस्त्री कृतिका विधुनते धर्मधरा दर्भ दिषु तत असुरसुरगणिनानुपमा कृतिका विधुनते ॥ १९२ ॥

अथ नद्दारकादुत्तरणसामर्थ्यं कथयति,—

पढमासणमिह खित्त कोसद्ध गयदो विमारेदि ।
कोसद्धद्धहियधराहियजीवे पत्थरक्कमदो ॥ १९३ ॥

प्रथमासनमिह क्षित्र क्रोशार्धं गतवतो विमारयति ।
क्रोशार्धार्धाधिकधराधिकजीवान् प्रस्तरक्रमत ॥ १९३ ॥

पढमा । प्रथमपृथ्वीप्रथमपटलासनं इह मनुष्यक्षेत्रे स्थितं यान् क्रोशार्धं गतवतः विमारयति । क्रोशार्धार्धाधिकधराधिकान् जीवान् ततःपरं प्रस्तरक्रमेन विमारयति ॥ १९३ ॥

अथ एतेषु लसाधनैर्म्रियते किमित्याशंकायामाह,—

ण मरंति ते अकाले सहस्सखुत्तोवि छिण्णसव्वंगा ।
गच्छंति तणुस्स छया सघादं सूदगस्सेव ॥ १९४ ॥

न म्रियन्ते ते अकाले सहस्रकृत्वोपि छिन्नसर्वांगा ।
गच्छंति तनो छया सघातं सूतकस्येव ॥ १९४ ॥

ण मरंति । छायामात्रमेवार्थ ॥ १९४ ॥

अथैतेषु लसाधने सत्रा मर्वे दु:खमाप्नुवंति किमित्यत्राह;—

तित्थयरसंतकम्मुवसग्गं णिरए णिवारयंति सुरा ।
छम्मासाउगसेसे सग्गे अमलाणमालंको ॥ १९५ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ १९५ ॥

[illegible]

[illegible]

अथ [illegible] —

अणवहुमणाउगा पुरुषा वाहारणामपठमें य ।
[illegible] काया [illegible] ॥ १९६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १९६ ॥

अणवहु । [illegible] ॥ १९६ ॥

अथ तेषामनुभवनप्रकारमाह —

सेसजणिद् असाद् सारीर माणस च अणुरूवं ।
भुंजंति जहावसर भवट्ठिदीचरिमसमयंति ॥ १९७ ॥

शेषजनित असात शारीर मानस च अनुरूपम् ।
भुञ्जते यथावसर भवस्थितेश्चरमसमयान्तम् ॥ १९७ ॥

सेस । अन पर्यंत । उपमानमेतत् ॥ १९७ ॥

अथ प्रतिपटलं तदायुर्जघन्योत्कृष्टं गाथाद्वयेनाह;—

पढमिंदे दसणउदीवाससहस्साउग जहण्णिदरं ।
तो णउदिलक्ख जट्ठ असंखपुव्वाण कोडी य ॥ १९८ ॥

प्रथमेन्द्रके दशनवतिवर्षसहस्रायुष्कं जघन्येतरत् ।
तत नवतिलक्षं ज्येष्ठ असंख्यपूर्वाणां कोट्यश्च ॥ १९८ ॥

पद । मघमेंद्रक दश १०००० भवति ९०००० वर्ष सहस्रायुष्यं उत्पन्दितात् तत् उपरि वक्ष्यमाण सर्व अत्र नवतिदश असंख्यपूर्वाणां के स्थ ॥ १९८ ॥

सायरदसम तुरिये सगसगचरमिंदयम्हि इगि तिण्णि ।
सत्त दसं सत्तरस उवही बावीस तत्तीसं ॥ १९९ ॥

सागरदशम तुरीये स्वकस्वकचरमेंद्रके एक त्रीणि ।
सप्त दश सप्तदश उदधय द्वाविंशति त्रयस्त्रिंशत् ॥ १९९ ॥

सायर । तुरिये चतुर्थे, उदधय सागरोपमाणि इत्यर्थ । शेषं गाथामात्रमर्थं ॥ १९९ ॥

आदी अंतविसेसे रूऊणद्धाहिदम्हि हाणिचय ।
उवरिम जेट्ठ समयेणहियं हेट्ठिमजहण्णं तु ॥ २०० ॥

आदि अंतविशेषे रूपोनाद्धाहिते हानिचय ।
उपरिम ज्येष्ठ समये नाधिकं अधस्तनजघन्य ॥ २०० ॥

आदी । आदि सागरदशमांशादिक १।१।३।७।१०।१७।२२ अंते एकसागरोपमादी १।३।७।१०।१७।२२।३३ यथायोग्य समच्छेदेन स्वेष्टिते तत्तत्पृथ्वीनां हानिचयो स्यातां ९।२।४।३।७।५।११ कथितायुःप्रमाण पटलत्रयं मुक्त्वा भजनपटलसहितरूपानतत्तत्पटलानां ९।१२।९।७।५।३।१ प्रतिपृथ्वि एताश्चतावद्वायुश्चय ९।२।४।१०।७।५।११ एकादिपटलानां कियदायुरिति संवात्य यथायोग्यमपवर्त्य गुणिते तत्तत्पटलानामायुश्चयं भवति । ९।२।३।१।३।५।१ एतच्चये प्राक्तनप्राक्तनरिमतो संयोजिते तत्तत्पटलानामुत्कृष्टायु प्रमाण स्यात् । उपरिमज्येष्ठ ९०००० इत्यादि समयेनाधिक चेत् अधस्तनाधस्तनजघन्य स्यात ॥ २०० ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] ॥ २०१ ॥

अथ नारकाणामवधिं [illegible],—

रयणप्पहपुढवीए चउरो कोसा य ओहिविसयं तु ।
तेण परं पडिपुढवी कोसद्धविवज्जिय होदि ॥ २०२ ॥

रत्नप्रभापृथिव्यां चत्वारः क्रोशा अवधिविषय तु ।
ततः परं प्रतिपृथिवि क्रोशार्धविवर्जितो भवति ॥ २०२ ॥

रयण । सुगममेवात्र ॥ २०२ ॥

अथ नरकाद्विनिर्गतस्य जीवस्य प्रतिनियममाह;—

णिरयादो णिस्सरिदो णरतिरिए कम्मसण्णिपज्जत्ते ।
गब्भभवे उप्पज्जदि सत्तमपुढवीदु तिरिए व ॥ २०३ ॥

निरयान्निःसृतः नरतिरश्चोः कर्मसंज्ञिपर्याप्तयोः ।
गर्भभवे उत्पद्यते सप्तमपृथिव्यास्तु तिरश्चि एव ॥ २०३ ॥

णिरया । निरयान्निःसृतो नरतिरश्चोः कर्मभूमौ संज्ञिनि पर्याप्ते गर्भभवे उत्पद्यते । सप्तमपृथिव्यास्तु निर्गतस्याद्विविधतिरश्चो गतो उत्पद्यते ॥ २०३ ॥

अथ णरतिरिए इति नियमे सत्यपि किं सर्वस्थानप्राप्तावाह,—

णिरयचरो णत्थि हरी बलचक्की तुरियपहुदिणिस्सरिदो ।
तित्थचरमंगसंजद मिस्सतियं णत्थि णियमेण ॥२०४॥

निरयचरो नास्ति हरिः बलचक्रिणौ तुरीयप्रभृतिनिःसृतः ।
तीर्थचरमाङ्गसंयताः मिश्रत्रयं नास्ति नियमेन ॥ २०४ ॥

णिर । नरकचरो नास्ति हरिः बलचक्रिणौ तुर्यप्रभृतिनिःसृत यथा संख्यं तीर्थकरचरमाङ्गसंयता मिश्रत्रया मिश्रासंयतदेशसंयता न संति नियमेन । असंयतस्यनिषिद्धत्वात्प्रत्यासन्नाद्दनस्याप्यभाव एव ॥२०४॥

अथ नरकं गच्छतां जीवानां पृथ्वीं प्रति नियममाह;—

असण्णिसरिसपविहगमफणिसिंहित्थीण मच्छमणुवाण ।
पढमादिसु उप्पत्ती अडवारादो दु दोण्णिवारोत्ति २०५

असंज्ञिसरीसृपविहगमफणिसिंहस्त्रीणां मत्स्यमनुष्याणाम् ।
प्रथमादिषु उत्पत्तिः अष्टवारतस्तु द्विवार इति ॥ २०५ ॥

असण्ण । असंज्ञिसरीसृपविहगमफणिसिंहस्त्रीणां मत्स्यमनुष्याणां प्रथमादिषु यथासंख्यमुत्पत्तिः । निरंतरं कतिवारमिति चेत्, अष्टवारत आरभ्य

[illegible] ॥ २०५ ॥

अथ [illegible] —

पडवीसमुहुत्तं पुण गब्भाए [illegible] च ।
दुग[illegible] च य जम्मणमरणंतरं णिरए ॥ २०६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ २०६ ॥

चउवीस । [illegible] ॥ २०६ ॥

तेषां दुःखस्वरूपमाह —

अच्छिणिमीलणमेत्तं णत्थि सुहं दुक्खमेव अणुबद्धं ।
णिरए णेरइयाणं अहोणिसं पच्चमाणाणं ॥ २०७ ॥

अक्षिनिमीलनमात्रं नास्ति सुखं दुःखमेव अनुबद्धम् ।
निरये नैरयिकाणां अहर्निशं पच्यमानानाम् ॥ २०७ ॥

अच्छि । छायामात्रमेवार्थः ॥ २०७ ॥ इति नरकस्वरूपनिरूपणं ।

इति श्रीनेमिचन्द्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे
लोकसामान्याधिकारः ॥ १ ॥

भवनाधिकार ॥ २ ॥

अथ लोकस्य सामान्यवर्णनां कृत्वा 'भवण वेंतर' इत्यादिगाथा सूचितवंशाधिकाराणां मध्ये तावद् भवनाधिकारं प्रथमप्रमाणत्वद्विधानभूता रत्नप्रभा सहचरितो द्वाविंशतिभाविभूमिं तद्गतनारकप्रस्तारान् तद्गतनारका युरादिकं च प्रासंगिकं एव व्याख्याय प्रकृत भवनाधिकारं प्रवर्तुकामस्तदादौ भवनलोकचैत्यालयान् वदमान इदं मङ्गलमाह,—

भवणेसु सत्तकोडी बावत्तरिलक्खा होंति जिणगेहा ।
भवणामरिंदमहिया भवणसमा ताणि वंदामि ॥२०८॥

भवनेषु सप्तकोट्यः द्वासप्ततिलक्षाणि भवंति जिनगेहानि ।
भवनामरेंद्रमहितानि भवनसमानि तानि वंदे ॥ २०८ ॥

भवण । भवनेषु सप्तकोट्यः द्वासप्ततिलक्षाणि भवंति जिनगेहानि । भवनामरेंद्रमहितानि तथा भवनसमानानि तानि वंदे ॥ २०८ ॥

अथ भवनवासिनां कुलभेदं तेषामिंद्रनामानि च गाथात्रयेणाह,—

असुरणागसुवण्णादीवोदहिविज्जुथणिददिसअग्गी ।
वादकुमारा पढमे चमरो वइरोहणो इंदो ॥ २०९ ॥

असुरो नागसुवर्णौ द्वीपोदधिविद्युत्स्तनितदिगग्नय ।
वातकुमार प्रथमे चमरो वैरोचन इंद्र ॥ २०९ ॥

असुरा । असुर नागसुवर्णौ द्वीपोदधिविद्युत्स्तनितदिगग्नय वातकुमार । कुमारशब्द प्रत्येकमभिसंबध्यते । प्रथमे कुले चमरो वैरोचनश्चेति द्वाविंद्रौ ॥ ०९ ॥

चतुरिंसायामसया [illegible] [illegible] वित्थारा ।
चतुरस्रा [illegible] [illegible] ॥ २१७ ॥

[illegible] । [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] ॥ २१७ ॥

अथ तेषां भवनानां [illegible] —

सगुंधपुप्फमालिपरयणधरा रयणभित्ति णिच्चपहा ।
सण्णियदिव्वमुहवादहिं णिच्चं हाडीहिं णिदा भवणा २१८

सगन्धपुष्पमालिप्रतोरणा रत्नभित्तयः नित्यप्रभाः ।
सन्निहितमृदङ्गवादित्रैः [illegible] भवनानि ॥ २१८ ॥

सगुंध । छायामात्रमेवार्थ ॥ २१८ ॥

अथ तत्रत्यदेवानामैश्वर्यमाह,—

अट्ठगुणिड्ढिसिसिट्ठा णाणामणिभूसणेहिं दित्तगा ।
भुंजंति भोगमिट्ठं सगपुव्वतवेण तत्थ सुरा ॥ २१९ ॥

अष्टगुणर्द्धिविशिष्टा नानामणिभूषणैः दीप्ताङ्गाः ।
भुञ्जन्ति भोगमिष्टं स्वकपूर्वतपसा तत्र सुराः ॥ २१९ ॥

अट्ठ । छायामात्रमेवार्थ ॥ २१९ ॥

अथ तेषां भवनानां भूगृहोपमानानां व्यासादिकमाह,—

जोयणसहस्ससंखाकोडी तव्वित्थडं तु चउरस्सा ।
तिसयं बहलं मज्झं पडि सयतुंगेक्ककूडं च ॥ २२० ॥

योजनसहस्रासंख्यकोट्यः तद्विस्तारस्तु चतुरस्राः ।
त्रिशतं बाहल्यं मध्यं प्रति शततुङ्गैककूटश्च ॥ २२० ॥

जादव। अथ धन च जनानां भवनानां ... उत्कर्षेण असंख्यात ... द्विगाम्बु चतुरस्र निगन्तय भवन ... । तत्र प्रतिमार्थं द्वानतु ... पल्लबुध्दि योजनान्यथ ॥ २२० ॥

अथ तेषां भवनावस्थितिस्थानानि गाथाद्वयेन ह,—

वेंतर अप्पमहद्धियमज्झिमभवणामराण भवणाणि ।
भूमीदोधो इगिदुगबादालसहस्सइगिलक्खेरे ॥ २२१ ॥

व्यन्तराणां अल्पमहर्धिकमध्यमभवनामराणां भवनानि ।
भूमितोऽध एकद्विद्वाचत्वारिंशत्सहस्रएकलक्षाणि ॥ २२१ ॥

वेंतर। व्यन्तराणां अल्पर्धिमहर्धिकमध्यमर्धिभवनामराणां च भवनानि चित्राभूमित अधोऽध एकसहस्रद्विसहस्रद्वाचत्वारिंशत्सहस्रएकलक्षाणि गत्वा भवति ॥ २२१ ॥

रयणप्पहपङ्कबहुले भागे असुराण होंति आवासा ।
भोम्मेसुरक्खसाणं अवसेसाणं खरे भागे ॥ २२२ ॥

रत्नप्रभापङ्कबहुले भागे असुराणां भवंति आवासाः ।
भौमेषु राक्षसानां अवशेषाणां खरे भागे ॥ २२२ ॥

रयण। भौमेषु व्यंतरेषु, अवशेषाणां नागादीनां इत्यर्थः। शेषं छायामात्रमेवाय ॥ २२२ ॥

इदानीमिन्द्रादिभेदमाह;—

इंदपडिंददिगिंदा तेत्तीससुरा समाणतणुरक्खा ।
परिसत्तयआणीया पइण्णगअभियोगकिब्भिसिया २२३॥

इन्द्रप्रतीन्द्रदिगीन्द्राः त्रयस्त्रिंशत्सुराः सामानिकतनुरक्षौ ।
परिषत्त्रयानीकौ प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्बिषिकाः ॥ २२३ ॥

ईंद । छायामात्रमेवार्थं ॥ २२३ ॥

अथ इन्द्रादिपदवीनां दृष्टांतमाह,—

रायजुवततराण पुत्तकलत्तगरस्सरमज्झे ।
अयरे तट्टे सेणापुरपरिजणगायणेहि समा ॥ २२४ ॥

राजयुवतत्राने पुत्रकलत्रागरक्षवरमध्येन ।
अवरेण तंडेण सेनापुरपरिजनगायकैः समाः ॥ २२४ ॥

राय । राजयुवतत्राजेश पुत्रकलत्रांगरक्षै वरेण मध्येन अवरेण च तडेण अवलोगनसेनापुरपरिजनगायकैः समाः ॥ २२४ ॥

अथ चतुर्निकायामरेष्विंद्रादीनां संभवप्रकारमाह,—

वेंतरजोयिसियाण तेत्तीससुरा ण लोयपाला य ।
भवणे कप्पे सव्वे हवंति अहमिंदया तत्तो ॥ २२५ ॥

व्यंतरज्योतिष्काणां त्रयस्त्रिंशत्सुरा न लोकपाला च ।
भवने कल्पे सर्वे भवंति अहमिंद्रका ततः ॥ २२५ ॥

वेंतर । व्यंतरज्योतिष्काणां त्रयस्त्रिंशत्सुरा न संति लोकपालश्च भवने कल्पे च सर्वे भवंति तत परमहमिंद्राः ॥ २२५ ॥

अथ भावनेष्विंद्रादिपरिपत्त्रयातानां सर्वां गाथात्रयेणाह,—

इंदसमा हु पडिंदा सोमो यम वरुण तह कुबेरा य ।
पुव्वादिलोयवाला तेत्तीससुरा हु तेत्तीसा । २२६ ॥

इंद्रसमा खलु प्रतींद्रा सोमो यमो वरुणस्तथा कुबेरश्च ।
पूर्वादिलोकपाला त्रयस्त्रिंशत्सुरा हि त्रयस्त्रिंशत् ॥ २२६ ॥

इंद । हि एव इत्यर्थ । शेष छायामात्रमेवार्थं ॥ २२६ ॥

चमरतिये सामाणियतणुरक्खाण पमाणमणुकमसो ।
अडसोलकदिसहस्सा चउसोलसहस्सहीणकमा ॥२२७॥

चमरत्रिके सामानिकतनुरक्षाणां प्रमाणमनुक्रमशः ।
अष्टषोडशकृतिसहस्राणि चतु षोडशसहस्रहीनक्रमाणि ॥२२७

चमर । चमरत्रिके सामानिकतनुरक्षाणां प्रमाणमनुक्रमशः अष्टकृति षोडशकृतिसहस्राणि चतु सहस्रषोडशसहस्रहीन क्रम ॥ २२७ ॥

पण्णसहस्स विलवरा सेसे तट्ठाण परिसमादिल्ल ।
अडछव्वीस छच्चउसहस्स दुसहस्सवड्ढिकमा ॥ २२८ ॥

पंचाशत्सहस्राणि द्विलभे शेषे तत्स्थाने परिषदादिमा ।
अष्टषड्विंशतिषट्चतु सहस्राणि द्विसहस्रवृद्धिक्रम ॥ २२८ ॥

पण्ण । पंचाशत्सहस्राणि द्विलभ शेषे नागादिषु तत्स्थाने चमरत्रिक शेषस्थाने आदिमा परिषत्, अष्टविंशतिसहस्राणि षड्विंशतिसहस्राणि षट्सहस्राणि चतु सहस्राणि मध्यमबाह्यपरिषदोस्तु उक्तपरिषद्भ्येव द्विसहस्रवृद्धिक्रमो ज्ञातव्य ॥ २२८ ॥

अथ परिषत्त्रयाणां विशेषाभिधानमाह,—

पढमा परिसा समिदा विदिया चंदोत्ति णामदो होदि ।
तदिया जदुअहिधाणा एवं सव्वेसु देवेसु ॥ २२९ ॥

प्रथमा परिषत् समित् द्वितीया चंद्रा इति नामतो भवति ।
तृतीया जत्वभिधाना एवं सर्वेषु देवेषु ॥ २२९ ॥

पढमा । छायामात्रमेवार्थ ॥ २२९ ॥

इदानीमानीकभेदं तत्संख्यां चाह,—

सत्तेव य आणीया पत्तेयं सत्तसत्तकक्खजुदा ।
पढमं ससमाणसमं तद्दुगुणं चरिमकक्खोत्ति ॥ २३० ॥

नागेन्द्रमकरं करभ मल्लौ मृगारिशिविकारथाः ।
प्रथमानीके द्वौ शेषानीकानां तु पूर्वं इव २३३ ॥

णाया । शेषं नागादी इत्यर्थ । अन्यत् छायामात्र ॥ २३३ ॥

अथ भावनदेवानामनभ्यन्तरत्वात् प्रकीर्णकादिदेवानामभ्यन्तरत्वमनु समप्यवगतव्यमिति तत्प्रमाणमनुक्त्वा सांप्रतमसुरादिदेवीनां संख्यां गाथाद्वयेनाह,—

असुरतिए देवीओ छप्पण्णसहस्स तत्थ वल्लभिया ।
सोलसहस्स छक्कसहस्सेणूणक्कमो होइ ॥ २३४ ॥

असुरत्रिके देव्यः षट्पञ्चाशत्सहस्राणि तत्र वल्लभिकाः ।
षोडशसहस्राणि षट्सहस्रेणोनक्रमो भवति ॥ २३४ ॥

असुर । तत्र तासु देवीषु इत्यर्थ । शेषं छायामात्र ॥ २३४ ॥

बत्तीस बे सहस्सा सेसे पण पण सजेट्ठदेवीओ ।
तिसु अट्ठ छस्सहस्स विगुव्वणामूलतणुसहिय ॥ २३५॥

द्वात्रिंशत् द्वे सहस्राणि शेषे पञ्च पञ्च स्वज्येष्ठदेव्यः ।
त्रिषु अष्ट षट्सहस्र विकुर्वणामूलतनुसहिता ॥ २३५ ॥

बत्तीस । द्वात्रिंशत्सहस्राणि द्वे सहस्र शेषे द्वीपादौ तासां मध्ये पञ्च पञ्च ज्येष्ठदेव्यः असुरादिदेवीत्रिस्थानेषु शेषे च ज्येष्ठदेव्यः अष्टसप्तषट्सहस्र विकुर्वणामूलतनुसहिता ॥ २३५ ॥

अथ चमरवैरोचनयो पट्टदेवीनां संज्ञामाह,—

किण्ह सुमेघसुकड्ढा रयणि य जेट्ठित्थि पउम महपउमा ।
पउमसिरी कणयसिरी कणयादिममाल चमरदुगे ।२३६।

कृष्णा सुमेघा सुकान्ता रत्ना च ज्येष्ठाश्रिय पद्मा महापद्मा।
पद्मश्री कनकश्री कनकादिमाला चमरद्विके ॥ २३६ ॥

किण्ह। कृष्णा सुमेघा सुकान्ता रत्नी च ज्येष्ठाश्रिय पद्मा महापद्मा पद्मश्री कनकश्री कनकमाला एताश्चमरद्विके ॥ २३६ ॥

अथ द्वादिपञ्चानां देवामानं समानमित्यनुक्त्वा इतरेषां कोता निरूपयति गाथापेण,—

अट्ठाइज्ज तिसय पण्णासूण कमं तु चमरदुगे।
पारिसदेवी णागे विसय तु ससट्ठिताळसय ॥ २३७ ॥

अर्धतृतीय त्रिशत पञ्चाशदून क्रमम्तु चमरद्विके।
पारिषदेव्य नागे द्विशत तु सषष्टिचत्वारिंशच्छत ॥ २३७ ॥

अड्ढा। अर्धतृतीय शत त्रिशतं पञ्चाशदूनकमस्तु ज्ञातव्यश्चमरद्विके पारिषदेव्य। नागे तु द्विशत सषष्टिशत सचत्वारिंशच्छत ॥ २३७ ॥

गरुडे सेसे सोलसचउदस दससगुण तु वीसूणा।
सयसयदेवी पेधामहत्तराणगरक्खाण ॥ २३८ ॥

गरुडे शेषे षोडशचतुर्दश दशसगुणा तु विंशोना।
शतशतदेव्य पृतनामहत्तराणां अंगरक्षाणाम् ॥ २३८ ॥

गरुड। गरुडे शेषे दशसगुणा षोडश दशसगुणाश्चतुर्दश। तत्रैव मध्यवाह्यपरिषद्वाविंशत्यूना। शतशतदेव्य पृतनामहत्तराणां अंगरक्षा णाम् ॥ २३८ ॥

सेणाइवाण पुण देवीयो तस्स अद्धपरिमाण।
सव्वाणिगिट्ठसुराण बत्तीसा होंति देवीओ ॥ २३९ ॥

सेनाव्वाना पुन देव्य तस्य अर्धपरिमाण।
सर्वनिकृष्टसुराणा द्वात्रिंशद्धनि देव्य ॥ २३९ ॥

सेणा। तस्य तस्य सेनामहत्तरस्य ५० इत्यर्थ । शेष छायामात्रं ॥२३९॥

अथ भवनवासिनामग्रे वक्ष्यमाण व्यतराणां च जघन्योत्कृष्टमायुराह,—

असुरादिचदुसु सेसे सोम्मे सायर तिपल्लमाउस्स।
दलहीणकमं जेट्ठं दसवाससहस्समवरं तु ॥ २४० ॥

असुरादिचतुर्षु शेषे भौमे सागर त्रिपल्य आयुष्यम्।
दलहीनक्रम ज्येष्ठ दशवर्षसहस्र अवर तु ॥ २४० ॥

असुरा। असुरादिषु चतुर्षु शेषे ६ भौमे च यथासख्य सागरोपम त्रिपल्य आयुष्य दलहीनक्रम । एतत्सर्वं ज्येष्ठ अवर त्वायुर्दशवर्ष सहस्र ॥ २४० ॥

अथोक्तानामेव सविशेषणायु कथयन् तदेवान्यत्रेति निरूपयति;—

असुरचउक्के सेसे उदही पल्लत्तिय दलूणकम।
उत्तरइंदाणहियं सरिसं इंदादिपंचण्हं ॥ २४१ ॥

असुरचतुष्क शेषे उदधि पल्यत्रिक दलोनक्रम।
उत्तरेंद्राणामधिक सदृश इन्द्रादिपंचानाम् ॥ २४१ ॥

असुर। असुरचतुष्के शेषे उदधि पल्यत्रिक दलोनक्रम । एतदुत्तरेंद्राणा साधिक सदृशमिन्द्रादिपंचानाम ॥ २४१ ॥

अथ तदेव सादृश्य विशेषण निरूपयति,—

आऊपरिवारिड्ढीविकिरियाहि पडिदयादि चऊ।
सगसगइदहि समा दहरच्छत्तादिसजुत्ता ॥ २४२ ॥

आयु परिवारर्धिविक्रियाभि प्रतीन्द्रादय चत्वार ।
स्वकस्वकेन्द्रै समा दशच्छत्रादिमयुक्ता ॥ २४२ ॥

आऊ । दश ह्रस्व तेन इत्यय । 'ष छायामात्र ॥ २४२ ॥

असुरादींद्रदेवीनामायु प्रमाणमाह,—

अड्ढाइज्जतिपल्लं चमरदुगे णागगरुडसेसाण ।
देवीणमट्ठम पुण पुव्वाणस्साण कोडितियं ॥ २४३ ॥

अर्धतृतीयत्रिपल्य चमरद्विके नागगरुडशेषाणा ।
देवानामष्टम पुन पूर्ववर्षाणा कोटित्रयम् ॥ २४३ ॥

अड्ढा । अर्धतृतीय पल्य त्रिपल्य चमरद्विके देवीनां नागगरुडशेषाणां देवीनां यथासख्य पल्याष्टमभाग पुन पूर्वकोटित्रय वर्षाणां कोटित्रयं ज्ञातव्य ॥ २४३ ॥

अंगरक्षपरिषत्त्रयाणामायुष्य गाथाचतुष्केणाह,—

चमरंगरक्खसेणामहत्तराणाउगं हवे पल्लं ।
साणीकवाहणाण दलं तु वइरोयणे अहियं ॥२४४॥

चमराङ्गरक्षसेनामहत्तराणामायुष्य भवेत् पल्य ।
सानीकवाहनाना दलं तु वैरोचने अधिकम् ॥ २४४ ॥

चमरं । चमराङ्गरक्षसेनामहत्तराणामायुष्य भवेत्पल्य आनीक आरोहक तेन सहितानां वाहनानां दलं अर्धपल्य एतदेव वैरोचने साधिकम् ॥२४४॥

फणिगरुडदेसेसयाणं तट्ठाणे पुव्ववस्सकोडी य ।
वस्साण कोडि लक्खं लक्खं च तदद्धयं कमसो ॥२४५॥

फणिगरुडशेषाणा तत्स्थाने पूर्ववर्षकोटि च ।
वर्षाणां कोटि लक्ष लक्ष च तदर्धकं क्रमश ॥ २४५ ॥

असुरे । असुर त्रिक्षिषु च उच्छ्वासाहारौ पक्षे एकवार समासहस्र च एकवार समुहूर्तदिनयोरर्धत्रयोदश द्वादशे दशनाष्टमे भाग एकैकवार ॥२४८॥

अथ भवनत्रयाणामुत्सेधमाह,—

पणवीस असुराण सेसकुमाराण दसधणू चेव ।
विंतरजोइसियाण दससत्त सरीरउदओ दु ॥ २४९ ॥

पञ्चविंशति असुराणां शेषकुमाराणां दशधनूंषि चैव ।
व्यंतरज्योतिष्कयो दशसप्त शरीरोदय तु ॥ २४९ ॥

पणवीसं । पञ्चविंशति असुराणां धनुषामुदय शेषकुमाराणां दश धनुषां चैवोदय । व्यंतरज्योतिष्कयो दशसप्तधनु शरीरोदयस्तु ॥२४ ॥

इति श्रीनेमिचन्द्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे
भवनलोकाधिकार ॥ २ ॥

[illegible] ॥ ३ ॥

[illegible]

त्रिज्याग्र [illegible] कक्षिविष्कम्भ [illegible]
[illegible] ॥ ३४ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ३५ ॥

[illegible]

[illegible] शून्य
[illegible] अग्रस्य । [illegible] यदि इयता [illegible]
सप्तस्य सूक्ष्मगुण वा [illegible] गुणयेत् । एवमनेन आगतमा मध्य
=४।६५=८१।१० शून्य [illegible] परिमाणं स्यात् । तदुक्तं—" त्रिज्या
सप्तजायमाणा वसुदृग्घ्राणा आयामा च । कक्षिविष्कम्भदरे वैतालोर्द्ध
याज च परिमाणं [illegible] ज्ञात । पुन मध्य तद्वानो म एकस्मिन् त्रिज
गेहे प १ इयता=४।८ =८१।१० शून्य । किमिति सप्तस्य सस्थानेन

जगप्रतरे भक्ते=४१६५=८१।१० गु । व्यंतराणां जिनगेहप्रमाणं स्यात् ॥ २५० ॥

अथ व्यंतराणां कुलभेदं निरूपयति,—

किंणरकिंपुरिसा य महोरगगंधव्व जक्खणामा य ।
रक्खसभूयपिसाया अट्ठविहा वेंतरा देवा ॥ २५१ ॥

किंनरकिंपुरुषौ च महोरगगंधर्वयक्षनामानः च ।
राक्षसभूतपिशाचा अष्टविधा व्यंतरा देवाः ॥ २५१ ॥

किंणर छायामात्रमेवार्थः ॥ २५१ ॥

अथ तेषां शरीरवर्णं निरूपयति,—

तेसिं कमसो वण्णा पियंगुफलधवलकालयसियाम ।
हेम तिसुवि सियाम किह्न बहुलेयमसा य ॥ २५२ ॥

तेषां क्रमशः वर्णाः प्रियंगुफलधवलकालश्यामाः ।
हेम त्रिष्वपि श्यामः कृष्णः बहुलेपभूषा च ॥ २५२ ॥

तेसिं । तेषां क्रमशः शरीरवर्णा प्रियंगुफलधवलकालश्यामाः हेमवर्ण-त्रिष्वपि श्यामवर्णः कृष्णवर्णः । ते देवा बहुलेपभूषणाः ॥ २५२ ॥

अथ तेषां चैत्यतरुभेदमाह —

तेसिं असोयचंपयणागा तुंबुरुवडो य कटतरू ।
तुलसी कदंबणामा चेत्ततरू होंति हु कमेण ॥ २५३ ॥

तेषां अशोकचंपकनागाः तुंबुरवटाश्च कंटतरुः ।
तुलसी कदंबनामा चैत्यतरवः भवन्ति खलु क्रमेण ॥ २५३ ॥

तेसिं । नामा नामकसर इ य ड । भाव छायामात्र ॥ २५३ ॥

अथ तन्मूले पल्यङ्कजिनप्रतिमादिमाह —

तम्मूले पलियंकगजिणपडिमा पडिदिसम्हि चत्तारि ।
चउतोरणजुत्ता ते भवणसु व जंबुमाणद्धा ॥ २५४ ॥

तन्मूले पल्यङ्कगजिनप्रतिमाः प्रतिदिशं चतस्रः ।
चतुस्तोरणयुक्तास्ता भवनेषु च जंबूमानार्धाः ॥ २५४ ॥

तम्मूले । जम्बूमानार्धा वै भवनस्य जम्बूद्रुमस्थितिकामानादा इत्यर्थः । दीर्घं च्यायामाद्यम् ॥ २५४ ॥

अथ तदग्र मानस्तम्भं सविशेषं निरूपयति,—

पडिपडिम एक्केका माणत्थमा तिपीढसालजुदा ।
मोत्तियदाम सोहइ घंटाजालादिय दिव्वं ॥ २५५ ॥

प्रतिप्रतिमा एकैका मानस्तम्भा त्रिपीठशालयुता ।
मौक्तिकदाम शोभते घंटाजालादिकं दिव्यम् ॥ २५५ ॥

पडि । प्रतिप्रतिमा एकैका मानस्तम्भा त्रिपीठविशालयुता । तत्र मौक्तिक दाम शोभते दिव्य घंटाजालादिकं च ॥ २५५ ॥

अथ अष्टविधव्यन्तराणां प्रतिकुलमवांतरभेदमाह,—

किंणरचउ दसदसधा सेसा बारसगसत्तचोदसधा ।
दो दो इंदा दो दो वल्लभिया पुह सहस्सदेविजुदा॥२५६

किंनरचत्वार दशदशधा शेषा द्वादशसप्तचतुर्दशधा ।
द्वौ द्वौ इंद्रौ द्वे द्वे वल्लभिके पृथक् सहस्रदेवीयुते ॥ २५६ ॥

किंणर । किंनराद्य चत्वार दशधा दशधा भिद्यते शेषा यक्षाद्य

द्वादश्या गाथया चतु,राधा । अत्र द्वौ द्वौ इन्द्रौ तयोर्द्वे द्वे वल्लभिके पृथक् पृथक् भवतः इत्यर्थः ॥ २५६ ॥

अथ तयो देव्यौ गाथाद्वयेनाभिनिरूपयति,—

किंपुरिसकिंणरावि य हिदयंगमगा य रूपपाली य ।
किंणरकिंणरऽणिंदित मणरम्मा किंणरुत्तमगा ॥२५७॥

किंपुरुषकिंनरावपि च हृदयंगमका रूपपाली च ।
किंनरकिंनर अनिंदित मनोरम किंनरोत्तम ॥ २५७ ॥

किंपुरिस । छायामात्रमेवार्थः ॥ २५७ ॥

रतिपियजेट्ठा इंदा किंपुरिसाकिंणरा य तस्स दु ।
केदुमती रतिसेणा रतिप्पिया होति वल्लभिया ॥२५८॥

रतिप्रियज्येष्ठौ इन्द्रौ किंपुरुषकिंनरौ अनयोः हि ।
केतुमती रतिसेना रतिप्रिया भवन्ति वल्लभिकाः ॥ २५८ ॥

रतिपिय । रतिप्रियज्येष्ठौ १० इन्द्रौ किंपुरुषकिंनरौ तयोरवतंसा केतुमती रतिसेना रतिप्रिया भवति वल्लभिका ॥ २५८ ॥

पुरुसा पुरुसुत्तमसप्पुरुसमहापुरुसपुरुसपहणामा ।
अतिपुरुसा मरुओ मरुदेवमरुप्पहजसोवंतो ॥ २५९ ॥

पुरुषाः पुरुषोत्तमसत्पुरुषमहापुरुषपुरुषप्रभनामानः ।
अतिपुरुषः मरुन्मरुद्देवमरुत्प्रभयशस्वन्तः ॥ २५९ ॥

पुरुसा । छायामात्रमेवार्थः ॥ २५९ ॥

सप्पुरुसमहापुरुसा किंपुरिसिंदा कमेण वल्लभिया ।
रोहिणिया णवमी हिरि पुप्फवदी य इयरस्स ॥२६०॥

सप्पुरिसमहपुरिसा किंपुरिसिंदा कमेण णट्टमिता ।
रदिसेणा नवमी ही पुप्फवदी य इत्थव ॥ २६० ॥

सप्पुरुष । सत्पुरुषमहापुरुषौ किंपुरुषेन्द्रौ । क्रमेण नट्टमिता । रतिसेना नवमी ही पुष्पवती पुष्पवती । इत्थव ॥ २६० ॥

भुजगा भुजगसाली महाकायतिकाय खंधसाली य ।
मणहर असणिजयक्खा महमस्सगंभीरपियदरिसा॥२६१॥

भुजग भुजगशाली महाकायः अतिकाय स्कंधशाली च ।
मनोहर अशनिजवाख्य महेश्वरगंभीरप्रियदर्शिन ॥ २६१ ॥

भुजग । छायामात्रमेवाथ ॥ २६१ ॥

महकायो अतिकायो महोरगइंदा हु भोग भोगवदी ।
इदरस्स पुप्फगंधी अणिंदिता होंति वल्लभिया ॥२६२॥

महाकायो अतिकाय महोरगेंद्री हि भोगा भोगवती ।
इतरस्य पुष्पगंधी अनिंदिता भवत वल्लभिके ॥ २६२ ॥

महकाया । महाकायोऽतिकायश्चेति महोरगेंद्री खलु । भोगा भोगवती पूर्वस्य, इतरस्य पुष्पगंधी अनिंदिता भवत वल्लभिके ॥ २६२ ॥

हाहा हूहू णारयतुंबुरुककदंबवासवक्खा य ।
महसर गीतरतीवि य गीतयसा दइवता दसमा ॥२६३॥

हाहा हूहू नारदतुंबुरुकदंबवासवाख्याश्च ।
महास्वरो गीतरति अपि च गीतयशा दैवता दशम ॥२६३॥

हाहा । छायामात्रमेवाथ ॥ २६३ ॥

गीतरती गीतयसा गंधव्विंदा हवंति पत्तभिया ।
रमणि सरसणाविय णंदिणि पियदरिंसिणादेवी २६४

गीतरति गीतयशा गंधर्वेन्द्रौ भवत वल्लभिका ।
सरस्वति स्वरसेना वि च नन्दिनी प्रियदर्शना देवी ॥ २६४ ॥

गीतरती । वल्लभिका भव [illegible] ॥ २६४ ॥

अह माणिपुण्णसेलमणोभद्दा भद्दगा सुभद्दा य ।
तह सव्वभद्द माणुस धणपाल सुरूवजक्खा य ॥ २६५ ॥

अथ माणिपूर्ण शैलमनोभद्रा भद्रक सुभद्र च ।
तथा सर्वभद्र मानुष धनपाल सुरूपयक्ष ॥ २६५ ॥

अह । अथ माणिभद्रपूर्णभद्रशैलभद्रमनोभद्रा भद्रक सुभद्रश्च तथा सर्वभद्र मानुष धनपाल सुरूपयक्ष ॥ २६५ ॥

जक्खुत्तमा मणोहरणामा तह माणिपुण्णभद्दिंदा ।
कुंद बहुपुत्तदेवी तारा पुण उत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

यक्षोत्तमौ मनोहरनामा तत्र माणिपूर्णभद्रेन्द्रौ ।
कुन्दा बहुपुत्रदेवी तारा पुनरुत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

जक्खु । यक्षोत्तमा मनोहरनामा १२ तत्र माणिभद्रपूर्णभद्राविन्द्रौ । तयोर्देव्यः कुन्दा बहुपुत्रदेवी तारा पुनरुत्तमा देवी ॥ २६६ ॥

भीममहाभीमविग्घविणायक तह उदकरक्खसा य तहा ।
रक्खसरक्खस तह बम्हरक्खसा होंति सत्तमया ॥ २६७ ॥

भीमा महाभीम विघ्नविनायक तथा उदक राक्षसश्च तथा ।
राक्षसराक्षस तथा ब्रह्मराक्षस भवन्ति सप्तमकाः ॥ २६७ ॥

भीम । [illegible] ॥

भीमा य महाभीमो रक्खसमईण हवंति वल्लभिया ।
पउमा वसुमित्ताओ य रयणड्ढा कणयपह देवी ॥ २६८॥

भीमस्य महाभीमस्य राक्षसेन्द्रौ भवतः वल्लभिका ।
पद्मा वसुमित्रादि च रत्नाढ्या कनकप्रभा देवी ॥ २६८ ॥

भीमा । वल्लभिका उपरि गत । अन्यत् सुगमार्थं ॥ २६८ ॥

भूदाणं तु सुरूवा पडिरूवा भूदउत्तमा तत्ता ।
पडिभूद महाभूदा पडिछण्णागासभूद इदि ॥ २६९ ॥

भूतानां च सरूप प्रतिरूप भूतोत्तम ततः ।
प्रतिभूत महाभूत प्रतिच्छन्न आकाशभूत इति ॥ २६९ ॥

भूदाण । छायामात्रमेवार्थ ॥ २६९ ॥

इदा य सुपडिरूवा वल्लभिया तह य होदि रूववदी ।
बहुरूवा य सुसीमा सुमुहा य हवंति देवीयो ॥ २७०॥

इन्द्रौ च सुप्रतिरूपौ वल्लभिका तथा च भवति रूपवती ।
बहुरूपा च सुषीमा सुमुखा च भवति देव्य ॥ २७० ॥

इदा । इन्द्रौ च सुरूपप्रतिरूपौ तयोर्वल्लभिका तथा भवति रूपवती बहु-
रूपा च सुषीमा सुमुखा च एता देव्यो भवति ॥ २७० ॥

कुम्भड रक्खजक्खा समोहो तारका अचोक्खा य ।
काल महकाल चोक्खा सतालया देह महदेहा॥२७१॥

कूष्माण्डो रक्षोयक्ष समोह तारक अशुचिश्च ।
काल महाकाल शुचि सतालक देह महादेह ॥ २७१॥

कुंभ । छायामात्रामेवार्थ ॥ २७१ ॥

तुण्णिंद पवयणणामा इंदा तसिं तु कालमहकाला ।
कमलकमलप्पहुप्पलसुदरिसणा होंति वल्लभिया॥२७२॥

तूर्णीन्द्र प्रवचननामा इंद्रौ तयो तु कालमहाकाली ।
कमलाकमलप्रभोत्पलासुदर्शना भवन्ति वल्लभिका ॥ २७१ ॥

तुण्णिंद । तूर्णीन्द्र प्रवचननामा १४ इंद्रौ तेयां तु कालमहाकाली कमला कमलप्रभा उत्पला सुदर्शनिका एतास्तयोर्वल्लभिका ॥ २७२ ॥

अथ पुनरिंद्रमात्रमेव पृथक्कथयति गाथाद्वयेनाह,—

किंपुरुस किणरा सप्पुरिसमहापुरुसणामया कमसो ।
महकायो अतिकायो गीतरती गीतयसणामा॥२७३॥

किंपुरुष किन्नर सत्पुरुष महापुरुषनामा क्रमशः ।
महाकाय अतिकाय गीतरति गीतयशोनामा ॥ २७१ ॥

किंपुरुस । छायामात्रमेवाथ ॥ २७३ ॥

ता माणिपुण्णभद्दा भीममहाभीमया सुरूवा य ।
पडिरूवो काल महाकालो भोम्मेसु जुगलिंदा ॥२७४॥

ततो माणिपूर्णभद्रौ भीममहाभीमौ सुरूपश्च ।
प्रतिरूप काल महाकाल भौमेषु युगलेंद्राः ॥ २७४ ॥

ता । ततः माणिभद्र पूर्णभद्र भीम महाभीम सुरूपश्च प्रतिरूप कालो महाकाल एते सर्वे भौमेषु युगलेंद्राः ॥ २७५ ॥

अथ किंपुरुषादींद्राणां गणिकामहत्तरीगाथाचतुष्टयेन कथयति;—

गणिकामहत्तरीयो इद पडि पल्लदलठिदी दो दो ।
मधुरा मधुरालावा सुसर मउभासिणी कमसो ॥२७५॥

गणिकामहत्तरा इन्द्रे द्वौ तत्प्रहरणविमाना द्वे द्वे ।
मधुरा मधुरालापा मधुरा सुस्वरभाषिणी क्रमशः ॥ २७५ ॥

गणिका । छायामात्रमत्रार्थः ॥ २७५ ॥

पुरिसपिया पुरुकंता सोमा पुप्फगंधिणी य भोगक्खा ।
भोगवदी य भुजगा भुजगपिया तह सुघोस विमलेत्ति ॥२७६॥

पुरुषप्रिया पुरुकान्ता सौम्या पुष्पगन्धिनी च भोगाख्या ।
भोगवती च भुजगा भुजगप्रिया तत्र सुघोषा विमला इति ॥२७६॥

पुरिस । छायामात्रमत्रार्थः ॥ २७६ ॥

सुस्सर अणिंदिदक्खा भद्दा सुभद्दा य मालिणी होंति ।
पउमादिमालिणीवि य तह सव्वसिरि सव्वसेणेत्ति ॥२७७॥

सुस्वरा अनिन्दिताख्या भद्रा सुभद्रा च मालिनी भवन्ति ।
पद्मादिमालिनी अपि च तत सर्वश्री सर्वसेना इति ॥ २७७ ॥

सुस्सर । छायामात्रमत्रार्थः ॥ २७७ ॥

रुद्दक्खव रुद्ददरिसिणि भूदादीकंत भूद भूदादी ।
दत्त महाभुज अंबा कराल सुलसा सुदरिसणया ॥२७८॥

रुद्राख्या रुद्रदर्शना भूतादिकान्ता भूता भूतादि ।
दत्ता महाभुजा अम्बा कराला सुलसा सुदर्शनिका ॥ २७८ ॥

रुद्दक्ख । भूतादिकान्ता भूतकान्ता इत्यर्थः । भूतादिदत्ता भूतदत्ता इत्यर्थः । शेष छायामात्रं । २७८ ।

अथ किंपुरुषादीन्द्राणां सामानिकादीनां सख्याभेदमाह,—

इंदसमा हु पडिंदा समाणुतणुरक्खपारिसपरिमाणं ।
चउसोलसहस्स पुण अट्ठसय बिसदवड्ढिकमो ॥ २७९ ॥

इंद्रसमा खलु प्रतीन्द्राः सामानिकतनुरक्षपारिषत्प्रमाणं ।
चतुः षोडशसहस्रं पुनरष्टशतं द्विशतवृद्धिक्रमं ॥ २७९ ॥

इंदसमा । इन्द्रसमाः खलु प्रतीन्द्राः सामानिकतनुरक्षपारिषत्प्रमाणं चतुःसहस्रं षोडशसहस्रं पुनरष्टशतं मध्यमबाह्यपरिषदो द्विशतवृद्धिक्रमं ॥२७९॥

अथ तेषां सप्तानीकं कथयति,—

कुंजरतुरयपादद्दीरहगंधव्वा य णच्चवसहेत्ति ।
सत्तेयप आणीया पत्तेयं सत्त सत्त कक्खजुदा ॥ २८० ॥

कुंजरतुरगपदातिरथगंधर्वाश्च नृत्यवृषभाविति ।
सप्तैव अनीकाः प्रत्येकं सप्त सप्त कक्षयुताः ॥ २८० ॥

कुंजर । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८० ॥

अथ सप्तानीकमहत्तराभेदमाह,—

सेणामहत्तरा खु जेट्ठा सुग्गीवविमलमरुदेवा ।
सिरिदामा दामसिरी सत्तमदृवो विसालक्खो ॥ २८१ ॥

सेनामहत्तराः खु ज्येष्ठाः सुग्रीवविमलमरुद्देवाः ।
श्रीदामा दामश्रीः सप्तमो विशालाक्षः ॥ २८१ ॥

सेणा । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८१ ॥

अथ तदानीकसंख्यामाह,—

अट्ठावीससहस्सं पढमं दुगुणं कमेण चरिमोत्ति।
सव्विंदाण मिसा पइण्णयादी असंखमिदा ॥ २८२॥

अष्टाविंशसहस्राणि प्रथमं द्विगुणं क्रमेण चरमान्तम्।
सर्वेन्द्राणां मिश्राः प्रकीर्णकादयः असंख्यमिताः ॥ २८२॥

अट्ठावीस। अष्टाविंशति सहस्राणि प्रथम प्रमाणं क्रमेण द्विगुणं चरमं यावत्। सर्वेन्द्राणां मिश्राः आनीकसंख्याः चतुर्निकायेषु प्रकीर्णकादयः असंख्यातमिताः ॥ २८२॥

अथ व्यन्तराणां नगराश्रयद्वीपसंज्ञामाह,—

अंजणकधज्जधाउकसुवण्णमणोसिलकवज्जरजदेसु।
हिंगुलिके हरिदाले दीवे भोम्मिंदणयराणि ॥ २८३॥

अंजनकवज्रधातुकसुवर्णमनःशिलकवज्ररजतेषु।
हिंगुलिके हरिताले द्वीपे भौमेन्द्रनगराणि ॥ २८३॥

अंजणक। छायामात्रमेवार्थः ॥ २८३॥

अथ तन्नगरसंज्ञामायामं चाह,—

भोम्मिंदक मज्झे पहकंतावत्तमज्झ चरिमका।
पुव्वादिसु जंबुसमा पणपणणयराणि सममागे॥२८४॥

भौमेन्द्राक मध्ये प्रभकान्तावर्तमध्या चरमाका।
पूर्वादिषु जंबूसमानि पंच पंच नगराणि सममागे ॥ २८४॥

भोमिंद। भौमेन्द्र किंनरस्तद्वाक मध्ये पुरि प्रभकान्तावर्तमध्या भौमेन्द्राकचरमाका पूर्वादिषु जंबूद्वीपसमानि पंच पंच नगराणि सममागे ॥ २८४॥

अथ तन्नगरप्राकारद्वारयोरुदयादिमाह,—

तप्पायारुदयतियं पणहत्तरिपणवीसपंचदलं ।
दारुदओ वित्थारो पणघणद्धं तदद्धं च ॥ २८५ ॥

तत्प्राकारोदयत्रयं पञ्चसप्ततिपञ्चविंशतिपञ्चदलम् ।
द्वारोदयो विस्तारः पञ्चघनार्धं तदर्धं च ॥ २८५ ॥

तप्पाया । तत्प्राकारोदयत्रयं पञ्चसप्ततिदलं $\frac{75}{2}$ पञ्चविंशतिदलं $\frac{25}{2}$ पञ्चदलं $\frac{5}{2}$ तद्द्वारोदयो विस्तारश्च पञ्चघनार्धं $\frac{125}{2}$ तदर्धं च $\frac{125}{4}$ ।२८५।

अथ तदुपरिमप्रासादस्वरूपं निरूपयति;—

तस्सुवरिं पासादो पणहत्तरितुंगओ सुधम्मसहा ।
पणकदिदल तद्दल णव दीहरवासुदय कोस ओगाढा ॥२८६

तस्योपरि प्रासादः पञ्चसप्ततितुङ्गः सुधर्मसभा ।
पञ्चकृतिदलं तद्दलं नव दीर्घव्यासोदयाः क्रोशः अवगाढः ॥२८६॥

तस्सुव । तस्योपरि प्रासादः पञ्चसप्ततितुङ्गः [illegible] एष सुधर्मसभेत्याख्यायते । पञ्चकृतिदलं $\frac{25}{2}$ तद्दलं $\frac{25}{4}$ नव ९ एते यथासंख्यं दीर्घव्यासोदया तदवगाढः कुट्टिमभूमि एकक्रोशं ॥ २८६ ॥

अथ तत्प्रासादस्य द्वारोदयादीन्निरूपयति,—

तिस्से दारुदओ दुगदुगं वासो दक्खिणुत्तरिंदाणं ।
सव्वेसिं णगराणं पायारादीणि सरिसाणि ॥ २८७ ॥

तस्या द्वारोदयः द्विकमष्ट व्यासः दक्षिणोत्तरेन्द्राणाम् ।
सर्वेषां नगराणां प्राकारादीनि सदृशानि ॥ २८७ ॥

अथ तदानीकसंख्यामाह,—

अट्ठावीससहस्सं पढम दुगुणं कमेण चरिमोत्ति ।
सव्विंदाण सरिसा पइण्णयादी असंखमिदा ॥ २८२ ॥

अष्टाविंशसहस्राणि प्रथमं द्विगुणं क्रमेण चरमान्तम् ।
सर्वेन्द्राणां सदृशाः प्रकीर्णकाद्य असंख्यमिताः ॥ २८२ ॥

अट्ठावीस । अष्टाविंशति सहस्राणि प्रथम प्रमाणं क्रमेण द्विगुणं चरमं यावत् । सर्वेन्द्राणां सदृशा आनीकसंख्या चतुर्निकायेषु प्रकीर्णकाद्य असंख्यातमिता ॥ २८२ ॥

अथ व्यन्तरेन्द्राणां नगराश्रयद्वीपसंज्ञामाह,—

अंजणकवज्जधादुकसुवण्णमणोसिलकवज्जरजदेसु ।
हिंगुलिके हरिदाले दीवे सोमिंददणयराणि ॥ २८३ ॥

अञ्जनकवज्रधातुकसुवर्णमनःशिलकवज्ररजतेषु ।
हिंगुलिके हरिताले द्वीपे सोमेन्द्रनगराणि ॥ २८३ ॥

अंजणक । छायामात्रमेवार्थः ॥ २८३ ॥

अथ तन्नगरसंज्ञामायामं चाह,—

सोमिंदक मज्झे पहकतावत्तमज्झ चरिमक्का ।
पुव्वादिसु जंबुसमा पणपणणयराणि समभागे ॥ २८४ ॥

सोमेन्द्राक्र मध्ये प्रभकान्तावर्तमध्या चरमाक्रा ।
पूर्वादिषु जम्बूसमानि पंच पंच नगराणि समभागे ॥ २८४ ॥

सोमिंद । सोमेन्द्र किंनरस्तद्वाक्र मध्ये पुरि प्रभकान्तावर्तमध्या सोमेन्द्राकचरमाक्रा पूर्वादिषु जम्बूद्वीपसमानि पंच पंच नगराणि समभागे ॥ २८४ ॥

अथ तन्नगरप्राकारद्वारस्योदयादिमाह,—

तप्पायारुदयतियं पणहत्तरिपण्णवीसपञ्चदलं ।
दारुदओ वित्थारो पञ्चपणद्धं तदद्धं च ॥ २८५ ॥

तत्प्राकारोदयत्रयं पञ्चसप्ततिपञ्चविंशतिपञ्चदलम् ।
द्वारोदयो विस्तारः पञ्चपञ्चार्धं तदर्धं च ॥ २८५ ॥

तप्पाया । तत्प्राकारोदयत्रयं पञ्चसप्ततिदलं $\frac{७५}{२}$ पञ्चविंशतिदलं $\frac{२५}{२}$ पञ्चदलं $\frac{५}{२}$ तद्द्वारोदयो विस्तारश्च पञ्चपञ्चार्धं $\frac{५}{२}$ तदर्धं च $\frac{५}{४}$ ।२८५।

अथ तदुपरिमप्रासादस्वरूपं निरूपयति,—

तस्सुवरिं पासादो पणहत्तरितुंगओ सुधम्मसहा ।
पणकदिदल तद्दल णव दीहरवासुदय कोस ओगाढा॥२८६

तस्योपरि प्रासादः पञ्चसप्ततितुङ्गः सुधर्मसभा ।
पञ्चकृतिदलं तद्दलं नव दीर्घव्यासोदया क्रोशं अवगाढा ॥२८६॥

तस्सुव । तस्योपरि प्रासादः पञ्चसप्ततितुङ्गः ७५ एष सुधर्मसभा नाम्ना स्यात् । पञ्चकृतिदलं $\frac{२५}{२}$ तद्दलं $\frac{२५}{४}$ नव ९ एते यथासंख्यं दीर्घव्यासोदयाः तदवगाहः कुट्टिमा भूमि एकक्रोशः ॥ २८६ ॥

अथ तत्प्रासादस्य द्वारोदयादीन्निरूपयति,—

तिस्से दारुदओ दुगइगि वासो दक्खिणुत्तरिंदाण ।
सव्वेसिं णयराण पायारादीणि सरिसाणि ॥ २८७ ॥

तस्या द्वारोदयः द्विकमेकं व्यासः दक्षिणोत्तरेन्द्राणाम् ।
सर्वेषां नगराणां प्राकारादीनि सदृशानि ॥ २८७ ॥

[illegible] । [illegible] ॥ २८७ ॥

अथ [illegible] —

[illegible] ॥ २८८ ॥

[illegible] ॥ २८८ ॥

[illegible] ॥ २८८ ॥

अथ [illegible] —

तत्थेव य गणिकाणं तुलसीदिसहस्सविउलणयराणि ।
सेसाण भोम्माणं अणयदीवे समुद्दे य ॥ २८९ ॥

तत्रैव च गणिकानां चतुरशीतिसहस्रविपुलनगराणि ।
शेषाणां भौमानां अनेकद्वीपे समुद्रे च ॥ २८९ ॥

तत्थेव । तत्रैव द्वारे गणिकानां चतुरशीतिसहस्रविपुलनगराणि शेषाणां भौमानां अनेकद्वीपे अनेकसमुद्रे च नगराणि ॥ २८९ ॥

अथ कुम्भिनीप्रमस्थस्य निलयभेदमाह —

भूदाण रक्खसाणं चउदस सोलस सहस्स भवणाणि ।
सेसाण वाणवेंतरदेवाणं उवरि णिलयाणि ॥ २९० ॥

भूतानां राक्षसानां चतुर्दश षोडश सहस्र भवनानि ।
शेषाणां वानव्यन्तरदेवानां उपरि निलयानि ॥ २९० ॥

भूदाण । भूमानां खरभागे राक्षसानां पंकभागे चतुर्दश षोडशसहस्र भवनानि देवानां वानव्यन्तरदेवानां उपरि मध्यलोके नित्यानि संति ॥२९०॥

अथ नीचोपपादादिव्यंतरविशेषान् गाथाद्वयेनाह,—

हत्थपमाणे णिच्चुववादा दिग्गुवासि अंतरणिवासी ।
कुम्हंडा उप्पण्णाणुप्पण्ण पमाणया गंधा ॥ २९१ ॥

हस्तप्रमाणे नीचोपपादा दिग्वासिन अन्तरनिवासिन ।
कूष्माण्डा उत्पन्ना अनुत्पन्ना प्रमाणकाः गन्धा ॥ २९१ ॥

हत्थ । छायामात्रमेवार्थः ॥ २९१ ॥

महगंध भुजग पीदिक आगासुववण्णगा य उवरुवरिं ।
तिसु दसहत्थसहस्स वीससहस्संतर सेसे ॥ २९२ ॥

महागन्धा भुजगा प्रीतिका आकाशोत्पन्नाश्च उपर्युपरि ।
त्रिषु दशहस्तसहस्राणि विंशतिसहस्रान्तरं शेषे ॥ २९२ ॥

मह । महागन्धा भुजगा प्रीतिका आकाशोत्पन्नाश्च १२ एते सर्वे भूतविशेषा चित्राभूमित उपर्युपरि । त्रिषु दशहस्तसहस्राणि अंतरं शेषे उत्पन्नादौ विंशतिहस्तसहस्राणि अंतरं ॥ २९२ ॥

अथ तेषां नीचोपपादादीनां क्रमेणायुष्यमाह,—

दसवरिससहस्सादो सीदी चुलसीदिकं सहस्स तु ।
पल्लट्ठम तु पाद पल्लद्ध आउग कमसो ॥ २९३ ॥

दशवर्षसहस्रात् अशीति चतुरशीतिकं सहस्र तु ।
पल्याष्टम तु पादं पल्यार्धमायुष्य क्रमशः ॥ २९३ ॥

दस । दशवर्षसहस्रादारभ्य दशसहस्रोत्तरवृद्धिक्रमेणाशीतिसहस्रवर्षाणि, ततश्चतुरशीतिसहस्राणि पल्याष्टमभाग पल्यचतुर्थांश पल्यार्धमायुर्यं क्रमश ॥ २९३ ॥

अथ व्यंतराणां निलयभेदमाह,—

वितरणिलयतियाणि य भवणपुरावासभवणणामाणि ।
दीवसमुद्दे दहगिरितरुम्हि चित्तावणिम्हि कमे ॥२९४॥

व्यन्तरनिलयत्रयाणि च भवनपुरावासभवननामानि ।
द्वीपसमुद्रे द्रहगिरितरौ चित्रावन्यां क्रमेण ॥ २९४ ॥

वितर । व्यंतराणां निलयत्रयाणि च भवनपुरं आवासो भवनमिति नामानि । तत् कुत्र कुत्रेति चेत् । द्वीपसमुद्रे ह्रदगिरितरौ चित्रावन्यां च क्रमेण भवंति ॥ २९४ ॥

अथ निलयत्रयं विवृणोति,—

उड्ढगया आवासा अधोगया वितराण भवणाणि ।
भवणपुराणि य मज्झिमभागगया इदि तिय णिलयं२९५

ऊर्ध्वगता आवासा अधोगता व्यन्तराणां भवनानि ।
भवनपुराणि च मध्यमभागगतानीति त्रयं निलयम् ॥ २९५ ॥

उड्ढगया । छायामात्रमेवार्थः ॥ २९५ ॥

अथ भौमी व्यन्तराणां वसत्यामवं निवासस्थानमुद्दिशति,—

चित्तवइरादु जावय मरुदयं तिरियलोयवित्थारं ।
भोम्मा हवंति भवण भवणपुरावासग जोग्ग ॥ २९६॥

चित्रावज्रात यावत् मेरूदय तिर्यग्लोकविस्तार ।
भौमा भवंति भवने भवनपुरावासके योग्यं ॥ २९६ ॥

चित्त । चित्रावज्रामध्यादारभ्य यावन्मेरूदय यावत्तिर्यग्लोकविस्तारं तावति क्षेत्रे भौमा भवंति स्वस्वयोग्यभवने भवनपुरे आवासे च ॥ २९६ ॥

अथ निलयस्वरूपमावेदयति,—

भवण भवणपुराणि य भवणपुरावासयाणि केसिंचि ।
भवणामरेसु असुरे विहाय केसिं तिय णिलय ॥२९७॥

भवन भवनपुरे च भवनपुरावासरानि केषांचित् ।
भवनामरेषु असुरान् विहाय केषां त्रय निलयम् ॥ २९७ ॥

भवणं । केषांचित् भवनमेव, केषांचिद्भवनपुरे च भवत , केषांचिद्भव नभवनपुरावासकानि च भवंति । भवनामरेषु असुरान् विहाय केषांचित् त्रय निलयम् ॥ २९७ ॥

अथ निलयत्रयाणो व्यासादिकं गाथात्रयेण कथयति,—

जेट्ठावरभवणाण बारसहस्स तु सुद्ध पणुवीसं ।
बहलं तिसय तिपादं बहलतिभागुदयकूडं च ॥२९८॥

ज्येष्ठावरभवनयो द्वादशसहस्र तु शुद्धपंचविंशति ।
बाहल्यं त्रिशतं त्रिपाद बाहल्यत्रिभागोदयकूटं च ॥ २९८ ॥

जेट्ठा । जेष्ठजघन्यभवनयोर्विस्तारौ द्वादशसहस्रयोजनानि शुद्धा पंचविंशति तयोर्बाहल्यं त्रिशतयोजनानि त्रिपादयोजनं तयोर्मध्ये स्वबाहल्यत्रिभागोदयकूटं चास्ति ॥ २९८ ॥

जेट्ठभवणाण परिदो वदी जोयणदलुस्सिदा होदि ।
अप रार्णं भवणाणं दंडाणं पणुवीसुदया ॥ २९९ ॥

ज्येष्ठभवनानां परितः वेदी योजनद्वयोच्छ्रिता भवति ।
अवराणां भवनानां दण्डानां पञ्चविंशत्युदया ॥ २९९ ॥

जेट्ठ । वेदीशब्दः द्विवारं सम्बध्यते । अन्यत् छायामात्रमेवार्थः ॥२९९॥

वट्टादीण पुराण जोयणलक्खं कमेण एक्कं च ।
आवासाण तिसयाहियबारसहस्स य तिपादं ॥ ३००॥

वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षं क्रमेण एकं च ।
आवासानां त्रिशताधिकद्वादशसहस्राणि च त्रिपादम् ॥३००॥

वट्टा । वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षमुत्कृष्टविस्तारः क्रमेण जघन्य-मेकयोजनं । वृत्तादीनामावासानां त्रिशताधिकद्वादशसहस्राण्युत्कृष्टविस्तारः जघन्यं त्रिपादयोजनं ॥ ३०० ॥

अथ नित्यनवाणां त्रिकालस्वरूप भौमाहारोच्छ्वासं च कथयति,—

भवणावासादीण गोउरपायारणच्चणादिघरा ।
भोम्माहारुस्सासा साहियपणदिणमुहुत्ता य ॥ ३०१ ॥

भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि ।
भौमाहारोच्छ्वासौ साधिकपञ्चदिनानि मुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

भवणा । भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि भवन्ति । भौमाहारोच्छ्वासौ यथाक्रमं साधिकपञ्चदिनानि साधिकपञ्चमुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

इति श्रीनेमिचन्द्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे भवनलोकाधिकारः॥ १॥

अथ ज्योतिर्लोकाधिकार ॥ ४ ॥



अथ व्यंतरलोकाधिकारं निरूप्य तदनंतरोद्देशभाजं ज्योतिर्लोकाधिकारं निरूपयितुकामस्तदादौ ज्योतिर्बिंबसंख्याप्रदर्शनगर्भं ज्योतिर्लोकचैत्यालय-वन्दनालक्षणं मंगलमाह,—

वेसदछप्पण्णंगुलकदिहिदपदरस्स संखभागमिदे ।
जोइसजिणिंदगेहे गणणातीदे णमंसामि ॥ ३०२ ॥

द्विशतषट्पञ्चाशदंगुलकृतिहृतप्रतरस्य संख्यातभागमितान् ।
ज्योतिष्कजिनेन्द्रगेहान् गणनातीतान्नमस्यामि ॥ ३०२ ॥

वेसद । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०२ ॥

अथ तद्भेदस्य ज्योतिष्कभेदमाह,—

चंदा पुण आइच्चा गह णक्खत्ता पइण्णतारा य ।
पंचविहा जोइगणा लोयतघणोदहिं पुट्ठा ॥ ३०३ ॥

चन्द्राः पुनः आदित्या ग्रहा नक्षत्राणि प्रकीर्णकताराश्च ।
पंचविधा ज्योतिर्गणा लोकान्तघनोदधिं स्पृष्टवन्तः ॥ ३०३ ॥

चंदा । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०३ ॥

अथ द्वीपसमुद्रनिरूपणमंतरेण ज्योतिर्गणनिरूपणासंभवात् तदाधारद्वीप-समुद्रान् गाथाचतुष्केण निरूपयति,—

जंबूधादकिपुक्खरवारुणिखीरघदखोदवरदीओ ।
णंदीसरअरुणअरुणब्भासा वर कुंडलो संखा ॥ ३०४ ॥

ज्येष्ठभवनानां परितः वेदी योजनदलोच्छ्रिता भवति ।
अवराणां भवनानां दण्डानां पञ्चविंशत्युच्च्या ॥ २९९ ॥

जेट्ठ । वेदीशब्दः द्विवारं सबध्यते । अन्यत् छायामात्रमेवार्थ ॥२९९॥

वट्टादीण पुराणं जोयणलक्खं कमेण एक्कं च ।
आवासाणं बिसयाहियबारसहस्सं च तिपादं ॥ ३००॥

वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षं क्रमेण एकं च ।
आवासानां द्विशताधिकद्वादशसहस्राणि च त्रिपादम् ॥३००॥

वट्टा । वृत्तादीनां पुराणां योजनलक्षमुत्कृष्टविस्तारः क्रमेण जघन्य मेकयोजनं । वृत्तादीनामावासानां द्विशताधिकद्वादशसहस्राण्युत्कृष्टविस्तारः जघन्यं त्रिपादयोजनं ३/४ ॥ ३०० ॥

अथ निलयत्रयाणां विशेषस्वरूपं भौमाहारोच्छ्वासं च कथयति,—

भवणावासादीणं गोउरपायारणच्चणादिघरा ।
भोम्माहारुस्सासा साहियपणदिणमुहुत्ता य ॥ ३०१ ॥

भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि ।
भौमाहारोच्छ्वासौ साधिकपंचदिनानि मुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

भवणा । भवनावासादीनां गोपुरप्राकारनर्तनादिगृहाणि भवंति । भौमाहारोच्छ्वासौ यथाक्रमेण साधिकपंचदिनानि साधिकपंचमुहूर्ताश्च ॥ ३०१ ॥

इति श्रीनेमिचन्द्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे व्यंतरलोकाधिकारः ॥ ३ ॥

अथ ज्योतिर्लोकाधिकार ॥ ४ ॥



अथ व्यंतरलोकाधिकारं निरूप्य तदनंतरोद्देशभाजं ज्योतिर्लोकाधिकारं निरूपयितुकामस्तदादौ ज्योतिर्विम्बसंख्याप्रदर्शनगर्भं ज्योतिर्लोकचैत्यालयवन्दनालक्षणं मंगलमाह,—

वेसदछप्पण्णंगुलकदिहिदपदरस्स संखभागमिदे ।
जोइसजिणिंदगेहे गणणातीदे णमंसामि ॥ ३०२ ॥

द्विशतषट्पंचाशदंगुलकृतिहृतप्रतरस्य संख्यातभागमितान् ।
ज्योतिष्कजिनेंद्रगेहान् गणनातीतान्नमस्यामि ॥ ३०२ ॥

वेसद । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०२ ॥

अथ तद्गेहस्थज्योतिष्कभेदमाह,—

चंदा पुण आइच्चा गह णक्खत्ता पइण्णतारा य ।
पंचविहा जोइगणा लोयंतघणोदहिं पुट्ठा ॥ ३०३ ॥

चन्द्रा पुन आदित्या ग्रहा नक्षत्राणि प्रकीर्णकताराश्च ।
पंचविधा ज्योतिर्गणा लोकांतघनोदधिं स्पृष्टवंत ॥ ३०३ ॥

चंदा । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३०३ ॥

अथ द्वीपसमुद्रनिरूपणमंतरेण ज्योतिर्गणनिरूपणासंभवात् तदाधारद्वीपसमुद्रान् गाथाचतुष्केण निरूपयति,—

जंबूधादकिपुक्खरवारुणिखीरघदखोदवरदीओ ।
णंदीसरअरुणअरुणब्भासा वर कुंडलं संखा ॥ ३०४ ॥

जम्बूधातकिपुष्करवारुणिक्षीरघृतक्षौद्रवरद्वीपाः ।
नदीश्वरारुणारुणाभासाः वराः कुडल शाख ॥ ३०४ ॥

जम्बू । जम्बूद्वीप धातुकीखण्डद्वीप पुष्करवर वारुणिवर क्षीरवर घृत-वर क्षौद्रवर नदीश्वरवर अरुणवर अरुणाभासवर कुण्डलवर शङ्खवर ॥ ३०४ ॥

तो रुजगभुजगकुसगयकोंचवरादी मणसिला तत्तो ।
हरिदालदीवसिंदुरसियामगजणयहिंगुलिया ॥ ३०५ ॥

ततो रुचकभुजगकुशगक्रौञ्चवरादयः मनःशिला ततः ।
हरितालद्वीपसिंदूरश्यामकाञ्जनकहिंगुलिकाः ॥ ३०५ ॥

तो । ततो रुचकवर भुजगवर कुशगवर क्रौञ्चवरादयः । एते अभ्यन्तरषोडशद्वीपाः । तत उपरि असंख्यातद्वीपसमुद्रान् त्यक्त्वा अन्त्य-षोडशद्वीपानाह–ततो मनःशिलाद्वीप हरितालद्वीप सिंदूरवर श्यामवर अंजनकवर हिंगुलिकवर ॥ ३०५ ॥

रूप्पसुवण्णयवज्जयवेलुरियणागभूदजक्खवरा ।
तो देवाहिंदवरा सयभुरमणो हवे चरिमो ॥ ३०६ ॥

रूप्यसुवर्णकवज्रकवैडूर्यकनागभूतयक्षवराः ।
ततो देवाहिंद्रवरौ स्वयंभूरमणो भवेत् चरमः ॥ ३०६ ॥

रूप्प । रूप्यवर सुवर्णवर वज्रवर वैडूर्यवर नागवर भूतवर यक्ष-वर ततो देववर अहींद्रवर स्वयंभूरमणो भवेच्चरमः ॥ ३०६ ॥

लवणुदहि कालोदयजलही तत्तो सदीवणामुवही ।
सव्वे अड्ढाइज्जुद्धारुवहिमेत्तया होंति ॥ ३०७ ॥

लवणाम्बुधि कालोदकजलधि तत स्वद्वीपनामोदधय ।
सर्वे अर्धतृतीयोद्धारोदधिमात्रा भवन्ति ॥ ३०७ ॥

लवणं । लवणाम्बुधि कालोदकजलधि तत स्वस्वद्वीपनामान उदधय सर्वे द्वीपसमुद्रा कियन्त इतिचेत, अर्धतृतीयोद्धारसागरोपममात्रा भवति ३०७

इदानीं तेषां विस्तारं संस्थानं च निरूपयति,—

जंबू जोयणलक्खो वट्टो तद्दुगुणदुगुणवासेहिं ।
लवणादीहिं परिखित्तो सयंभुरमणुदहिपज्जंतेहिं ॥३०८॥

जम्बू योजनलक्ष वृत्त तद्द्विगुणद्विगुणव्यासै ।
लवणादिभि परिक्षिप्त स्वयम्भूरमणोदध्यन्तै ॥ ३०८ ॥

जंबू । जंबूद्वीप योजनलक्षव्यास वृत्त तद्द्विगुणद्विगुणव्यासै लवणसमुद्रादिभि परिक्षिप्त परिवेष्टित स्वयम्भूरमणोदध्यन्तै ॥ ३०८ ॥

अथ तत्राभिमतस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा सूचीव्यासं वलयव्यासं चानेतुं करणसूत्रमिदम् —

रूऊणाहियपदमिददुगवग्गे पुणोवि लक्खहदे ।
गयणतिलक्खविहीणे वासो वलयस्स सूइस्स ॥ ३०९ ॥

रूपोनाधिकपदमिताद्विकवर्गं पुनरपि लक्षहते ।
गगनत्रिलक्षविहीने व्यासो वलयस्य सूच्या ॥ ३०९ ॥

रूऊणा । द्वीपसमुद्राणामभिमतसंख्याप्रमाणं कालोदके एकत्र रूपोनाया म रूपाधिकं च कृत्वा स्थापयित्वा ३।५ तद्द्वयमपि विरलयित्वा ॥११११। ११११ । एवं प्रति द्विकं दत्वा २२२ ।२२२२२। अ योज्य एवां ...

रव दशभागोऽपि येऽतिआनयन् द्विनिशगमोऽन्यतर्गते । एवं कृते सति कन्दस्थाम ८ ल सूचीव्यासस्य न्यासो २९ ल । अत्र वलय स्य मानयने वासना । तद्यथा । जम्बूद्वीपव्यास १ ल अस्मात्प्रभृत्य ग्रा द्विव्यासा द्विगुणादिद्विगुणक्रमाणा भवन्ति इति कृत्वा रूपोनगच्छमात्रद्वि कैर्जम्बूद्वीपव्यासे गुणिते तत्र तत्रस्थाने वलयव्यासा भवन्ति । इदं मनसि कृत्य ' रूऊणगच्छद्विरूवगुणसंवग्गं ' इत्युक्तं । अथ सूचीव्यासानयने वासना । इष्टस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलयव्यासे उभयदिग्गतमेलनात् द्विगुणं स्थापयित्वा १६ ल तथा तदावार्चीनानां द्वीपसमुद्राणां वलयव्यास द्विगुणं द्विगुणं स्थापयेत् ८ ल । ४ ल । जम्बूद्वीपस्य द्विपार्श्वाभावादेकप्रमाणमेव १ ल स्थापयेत् । तत्र व्यासानां न्यास । १६ ल ८ ल ४ ल १ ल गुणसंकलनार्थ । अत्र द्वितीयस्थाने शून्ये रूपद्वयमेव प्रक्षिपेत् । एवंकृते रूपाधिकगच्छोत्पत्तिर्भवति । इद संज्ञाय " रूवाहियपददुग संवग्ग " इत्युक्त । अत्र " पदमेत्ते गुणयारे " इत्यनेन गुणसंकलनसूत्रेण रूपाधिक- पदमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नराशावेकरूप प्राक् प्रक्षिप्तं रूपद्वय चापनयेत् । इद मेवाभ्यधाय " तिलक्खविहीण ' इत्युक्त । एवं कृते इष्टस्थाने सूचीव्यास प्रमाणमुत्पद्यते ॥ ३०९ ॥

तथाभ्यन्तरमध्यमबाह्यसूच्यानयने इदं करणसूत्रम्,—

लवणादीणं वासं दुगतिगचदुसगुण तिलक्खूणं ।
आदिममज्झिमबाहिरसूइत्ति भणंति आइरिया ॥३१०॥

लवणादीनां व्यासं द्विकत्रिकचतुःसगुणं त्रिलक्षोनम् ।
आदिममध्यमबाह्यसूची इति भणन्ति आचार्याः ॥ ३१० ॥

लवणा । लवणसमुद्रादीनां मध्ये इष्टस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलय व्यासं द्विसंगुणं कृत्वा तत्र लक्षत्रयं शोधिते अभ्यन्तरसूचीप्रमाणं भवति । तथाहि । विवक्षितवलयव्यासं उभयदिक्सजनितं अवाचीनानां द्वीपसमु-

द्राणां उभयदिक्समजनितवलयव्यासयुत मकाशात् त्रिलक्षाधिको यतस्तत त्रिलक्षोन उभयदिक्सजनितो विवक्षितवलयव्यास अभ्यन्तरसूचीप्रमाणमित्य भिप्राय । विवक्षितवलयव्यास त्रिसगुण कृत्वा तत्र लक्षत्रये शोधित मध्यमसूचीप्रमाण भवति । तथाहि । विवक्षितस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा वलयव्यासो द्विगुणितत्रिलक्षोनश्चेत तदा तदभ्यन्तरसूचीप्रमाण भवति यतस्तत कारणात् तस्मिन्नभ्यन्तरसूचीप्रमाणे विवक्षितवलयव्यासमध्यान्तर्धस्य दिग्द्वयगतस्य विवक्षितवलयव्यासप्रमाणस्याभ्यधिकत्वात् मध्यमसूचीप्रमाण त्रिगणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासमामितमिति भाव । विवक्षितवलय व्यास चतुःसगुण कृत्वा तत्र लक्षत्रये शोधिते च बाह्यसूचीप्रमाण भवति । तथाहि । यत द्विगुणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासप्रमिते अभ्यन्तरसूचीप्रमाण विवक्षित वलयव्यासस्य दिग्द्वयगतस्य प्रक्षेपणात् बाह्यसूचीप्रमाणमुत्पद्यत तत कारणात् चतुर्गुणितत्रिलक्षोनविवक्षितवलयव्यासप्रमिता बाह्यसूचीत्याचार्याभिप्राय ॥ ३१० ॥

अथोक्तसूचीव्यासमाश्रित्य तत्र क्षेत्रबादरसूक्ष्मपरिधि तत्सबादरसूक्ष्मक्षेत्र फल चानयति,—

तिगुणियवास परिही दहगुणविक्खारवग्गमूल च ।
परिहिहदवासतुरिय बादर सुहुम च खेत्तफल ॥ ३११ ॥

त्रिगुणितव्यास परिधि दशगुणविस्तारवर्गमूले च ।
परिधिहत व्यासतुरीय बादर सूक्ष्म च क्षेत्रफलम् ॥ ३११ ॥

तिगुणिय । त्रिगुणित व्यासो बादरपरिधि ३ ल दशगुणविस्तारवर्ग १ ल १ [illegible] १० तस्मिन् मूले गृहीते सूक्ष्मपरिधि योजन ३१६२२७ तदुपयोजनभाग ४८४४७१ चतुर्भि एतान्य छेदी कृत्वा १९१६८८४ पूर्वभागहारेण ६३२४५५ भागे कृत सा तकाशाच्चैव ४०४६२ एतम् दत्वा ९००० सगुण्य दद्यात् निधाय ८१०४४ ०० मानेनभागहारेण

भक्ते तस्मिन् दद्या स्यु १२८ तदवशेष ८९८८८ चतुर्भि हस्ते कृते ३५९५५२ भागाभावात् चतुर्विंशत्यगुल कृत्वा ८६२९२४८ प्राक्तन हारेण भक्ते तस्मिन् अगुलानि स्यु १३ तद्गुणशेष ४०७३४६ याव द्भागेन अपवर्तित साधिकैक तावद्भागन तद्धारोरि ६३२४५५ त्यपवर्त्यते चेत् द्वे भवत । एव सति साधिकार्ध ½ भवति । तत् योजनादिक सर्व सूक्ष्म परिधि स्थूलपरिधिना ३ ल व्यास १ ल चतुर्थांशन २५००० हतो ७५।८ जबूद्वीपस्य बादरक्षेत्रफल स्यात् । इदानीं योजनरूपसूक्ष्मपरिधि ल ३१६२२७ व्यासचतुर्थांशेन २५००० गुणयित्वा ७९०५६७५००० अत्रैव क्रोशलक्षणसूक्ष्मपरिधि को ३ तेनैव २५००० सगुण्य ७५००० चतुर्भागेन योजन कृत्वा १८७५० मेलयेत् ७८०५६९३७५० अत्रैव पुनर्दडलक्षणसूक्ष्मपरिधि १२८ तेनैव २५००० सगुण्य ३२००००० अष्टसहस्रभागन योजन कृत्वा ४०० मेलयेत् ७९०५६९४१५० अगुल लक्षण सूक्ष्मपरिधि १३½ समच्छेदेनान्योन्य मेलयित्वा २७ द्वाभ्यां तिय गपवर्तितपचविंशतिसहस्रेण १२५०० गुणयित्वा ३३७५०० तस्मिन् क्रोशागुलेन १९२००० भक्ते साधिकक्रोशो भवति । एतत्सर्व जबूद्वीपस्य सूक्ष्मक्षेत्रफल स्यात् । एवमेव सर्वेषां द्वीपसमुद्राणां च स्थूलसूक्ष्मक्षेत्रफले चानेतव्ये ॥ ३११ ॥

अथ जबूद्वीपस्य सूक्ष्मपरिधे सिद्धाकमुच्चारयति,—

जोयणसगदुदु छक्किगि तिदप तिक्कोसमट्ठदुगि दडो ।
अहियदलगुलतेरस जबूए सुहुमपरिणाहो ॥ ३१२ ॥

योजनानां सप्तद्विद्वि षट्कैक त्रय त्रिक्रोशा अष्टद्वये दडा ।
अधिकदलागुलत्रयोदश जबो सूक्ष्मपरिणाह ॥ ३१२ ॥

जोयण । योजनाना सप्तद्विद्विषट्कैकत्रय त्रय क्रोशा अष्टद्वये दडा

...न्तानि अत्र ... जम्बूद्वीपस्य ...धिकमानं सर्वं ॥ ३१२ ॥

अथ जम्बूद्वीपस्य सूक्ष्मफलमाह,—

पण्णासमेयदाले णव उप्पण्णासमुण्णणवसदरी ।
मादिपवाले य हवे जंबुदीवस्स सुहुमफलं ॥ ३१३ ॥

पञ्चाशत् ... पञ्चाशत्... नवसप्तति ।
...धिकानि ... जम्बूद्वीपस्य सूक्ष्मफलं ॥ ३१३ ॥

पण्णास । सुगमम् ॥ ३१३ ॥

अथ जम्बूद्वीपस्य परिधिमाधारं कृत्वा विवक्षितपरिध्यानयने करण-सूत्रमिदम्,—

जंबुडभय परिही इच्छियदीउवहिमुह सगुणिय ।
जंबुवासविभत्ते इच्छियदीउवहिपरिही दु ॥ ३१४ ॥

जम्बूभय परिधी इष्टद्वीपोदधिमुख्या सगुण्य ।
जम्बूव्यासविभक्ते इष्टद्वीपोदधिपरिधिः तु ॥ ३१४ ॥

जंबु । जम्बूद्वीपस्योभयपरिधी स्थूल ३ ल सूक्ष्म ३१६२२७ को ३ द १२८ अंगु १३ भा ३ इष्टद्वीपोदधिमुख्या लवणे ५ ल धातकीखण्डे १३ ल संगुण्य १५ ल स्थू १५८११३९ ल सूक्ष्मजम्बूव्यासविभक्ते १५ ल १५८११३९ इष्टद्वीपोदध्या परिधी भवत ॥ ३१४ ॥

इदानीमुभयफलमानयति,—

अंताइसूइजोगं रुंदद्ध गुणित्तु दुप्पडिं किच्चा ।
तिगुण दसकरणिगुणं बादरसुहुमं फलं वलये ॥ ३१५ ॥

मणुसुत्तरोत्ति मणुवा मणुसुत्तरउपमाणपरिहीणा ।
तत्तो सयपहोत्ति य जहण्णभोगावणीतिरिया ॥३२३॥

मानुषोत्तरान्तं मनुष्याः मानुषोत्तरप्रमाणपरिहीनाः ।
ततः स्वयंप्रभान्तं च जघन्यभोगावनितिर्यञ्चः ॥ ३२३ ॥

मणुसु । मानुषोत्तरपर्वतान्तं मनुष्याः मानुषोत्तरपर्वतनगनिरपरिहीनाः । तस्मात् परं स्वयंप्रभपर्यन्तद्वीपं जघन्यभोगभूमितिर्यञ्चो भवन्ति ॥ ३२३ ॥

कम्मावणिपडिबद्धो बाहिरभागो सयपहगिरिस्स ।
वरओगाहणजुत्ता तसजीवा होंति तत्थेव ॥ ३२४ ॥

कर्मावनिप्रतिबद्धो बाह्यभागः स्वयंप्रभगिरेः ।
वरावगाहनयुक्ताः त्रसजीवा भवन्ति तत्रैव ॥ ३२४ ॥

कम्मा । सुगममेतत् ॥ ३२४ ॥

अथैतत्स्थानवर्तिनोत्कृष्टावगाहनद्वीन्द्रियादीनुद्दिशन्नाह,—

अधियसहस्स बारस तियचउरधेक्क सहस्समय पउमे ।
सखे गोम्हि भमरे मच्छे वरदेहदीहो दु ॥ ३२५ ॥

अधिकसहस्रं द्वादश त्रिचतुर्भागैकं सहस्रं पद्मे ।
शङ्खे गोम्यां भ्रमरे मत्स्ये वरदेहदीर्घं तु ॥ ३२५ ॥

अधिय । साधिकसहस्रयोजनानि द्वादशयोजनानि योजनत्रिचतुर्थं एकयोजनसहस्रयोजनं च यथासंख्येन पद्मे, शंखे, गोम्ये सहस्रपादप-र्याये त्रीन्द्रिये, भ्रमरे, मत्स्ये वरदेहदैर्घ्यं स्यात् ॥ ३२५ ॥

अथ तयोरेव व्यासं द्वयोः कथयति —

वासिगि कमले सरस मुद्दुदआ चउपचचरणमिह गोम्हो
वासुदओ दिग्घट्ठमतद्दलमाटेय तिपाददल ॥ ३२६ ॥

जलचरजीवा लवणे कालेऽन्तिमस्वयम्भुरमणे च ।
कर्ममहीप्रतिबद्धे न हि शेषे जलचरा जीवाः ॥ ३२० ॥

जलयर । जलचरजीवा लवणसमुद्रे कालोदकसमुद्रे अन्तिमस्वयम्भूरमणसमुद्रे च कर्ममहीप्रतिबद्धत्वात् सन्ति । शेषेषु न हि जलचरा जीवा ३२०

अथ स्थाननिर्देशेन समुद्रत्रयावस्थितमत्स्यानां देहावगाहनमाह,—

लवणदुगतसमुद्दे णदीमुहबाहिम्हि दीहं णव दुगुणं ।
दुगुणं पणसय दुगुणं मच्छे वासुदयमद्धकमं ॥ ३२१ ॥

लवणद्विकान्त्यसमुद्रे नदीमुखेतरयोः दैर्घ्यं नव द्विगुणं ।
द्विगुणं पञ्चशतं द्विगुणं मत्स्ये व्यासोदयौ अर्धक्रमौ ॥ ३२१ ॥

लवण । लवणद्विके लवणकालोदकयोः अन्त्यसमुद्रे च नदीप्रवेशमुखे तदन्यत्र च समुद्रमध्ये यथासंख्यं लवणोदके मत्स्यदैर्घ्यं नव ९ तद्द्विगुणं १८ कालोदके तयोर्द्विगुणं १८ । ३६ स्वयम्भूरमणे पञ्चशतं ५०० तद्द्विगुणं १००० मत्स्यव्यासोदयौ तत्तदर्धार्धक्रमौ भवतः ॥ ३२१ ॥

साम्प्रतं मनुष्यक्षेत्रेतरविभागस्य कर्मभोगभूमिविभागस्य च सीमानमाश्रितयोः पर्वतयोः स्वरूपं निरूपयन् तद्विभागमत्र समर्थयितुं गाथात्रयमाह,—

पुक्खरसयम्भुरमणाणद्धे उत्तरसयपहा सेला ।
कुंडलरुचगद्ध वा सव्व पुव्व परिक्खित्ता ॥ ३२२ ॥

पुष्करस्वयम्भुरमणयोरर्धे उत्तरस्वयम्प्रभौ शैलौ ।
कुण्डलरुचकार्धे वा सर्व पूर्वं परिक्षिप्ताः ॥ ३२२ ॥

पुक्खर । पुष्करार्धे स्वयम्भूरमणार्धे च यथासंख्यं मानुषोत्तरस्वयम्प्रभौ शैलौ भवतः कुण्डलवलयाधमिव कुण्डलगिरिः रुचकार्धं रुचकगिरिरिवेत्यर्थः । एतौ सर्वौ पर्वतौ पूर्वं स्वस्वाभ्यन्तरद्वीपसमुद्रान् परिक्षिप्य तिष्ठतः ॥ ३२२ ॥

मणुसुत्तरोत्ति मणुसा मणुसुत्तरदलसत्तिपरिहीणा ।
परदो सयंपहोत्ति य जहण्णभोगावणीतिरिया ॥३२३॥

मानुषोत्तरान्तं मनुष्या मानुषोत्तरदलशक्तिपरिहीनाः ।
परतः स्वयंप्रभान्तं च जघन्यभोगावनितिर्यञ्चः ॥ ३२३ ॥

मणुसु । मानुषोत्तरपर्वतपर्यन्तं मनुष्या मानुषोत्तरदलशक्तिपरिहीनाः । अग्रतः परतः स्वयंप्रभाचलपर्यन्तं जघन्यभोगावनितिर्यञ्चो भवन्ति ॥ ३२३ ॥

कम्मावणिपडिबद्धो बाहिरभागो सयंपहगिरिस्स ।
परओगाहणजुत्ता तसजीवा होंति तत्थेव ॥ ३२४ ॥

कर्मावनिप्रतिबद्धो बाह्यभागः स्वयंप्रभगिरेः ।
परावगाहनयुक्ता त्रसजीवा भवन्ति तत्रैव ॥ ३२४ ॥

कम्माव । छायामात्रमेवार्थः ॥ ३२४ ॥

अथैतेषूत्कृष्टावगाहनमेकेन्द्रियावगाहनपुरस्सरमाह,—

अधियसहस्स बारस तिचउत्थेक्क सहस्सय पउमे ।
संखे गोम्हि भमर मच्छे वरदेहदीहो दु ॥ ३२५ ॥

अधिकसहस्रं द्वादश त्रिचतुर्थमेकं सहस्रकं पद्मे ।
संखे ग्रैष्मे भ्रमरे मत्स्ये वरदेहदीर्घं तु ॥ ३२५ ॥

अहिय । साधिकसहस्रयोजनानि द्वादशयोजनानि योजनत्रिचतुर्थं एकयोजनसहस्रयोजनं च यथासंख्येन पद्मे, शंखे, ग्रैष्मे सहस्रपादापरपर्याये इत्यर्थः, भ्रमरे, मत्स्ये वरदेहदैर्घ्यं स्यात् ॥ ३२५ ॥

अथ तेषामेव व्यासोदयौ कथयति,—

वासिगि कमले सख मुहुदओ चउपचचरणमिह गोम्ही
वाहुदओ दिग्घट्ठमतद्दलमालिए तिपाददल ॥ ३२६ ॥

व्यास एकः कमले शङ्खे मुखोदयौ चतुःपञ्चचरण इह ग्रैष्मे ।
व्यासोदयौ दीर्घाष्टमनद्यल्पमरे त्रिपाद्दलम् ॥ ३२६ ॥

वासिगि । व्यास एक योजन कमलनाले तद्बाहुल्य समवृत्तत्वात्तदेव शङ्खे मुखोदयो चत्वारि योजनानि पञ्च भवति चरणा चतुर्थांशा योजनस्य । इह ग्रैष्मे व्यासोदयौ दीर्घया (४) ष्टमभागदीर्घयोडश भागौ नद्यल्पमरे व्यासोदयौ त्रयश्चरणा योजनस्य दल च स्यातामर्धयोजनमित्यर्थ । " वासो तिगुणो परिही " इत्यादिना कमलस्य सर्वक्षेत्रफल ७५० मानयेत् ॥ ३२६ ॥

अथ वासनारूपेण शङ्खस्य मुरजक्षेत्रफलमानयति,—

आयामकदी मुहदलहीणा मुहवास अद्धवग्गजुदा ।
विगुणा वेहेण हदा सखावत्तस्स खेत्तफल ॥ ३२७ ॥

आयामकृति मुखदलहीना मुखव्यास अर्धवर्गयुता ।
द्विगुणा वेधेन हता सखावर्तस्य क्षेत्रफलम् ॥ ३२७ ॥

आयाम । एतावदायाम १२ मुखव्यासे ४ शङ्खे एतावन्माने क्षेत्रे विक्षिप्त सपूर्णमुरजाकारो भवति । मुखायामसमासार्धमध्यफलमिति कृते एव भवति । खण्डद्वये कृते एव । अत्रैकखण्डस्य क्षेत्रफलमानीयते । खण्डितत्वादिदमर्धमुख भवति । " विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरयो होदि " इत्यनेन एकखण्डस्य मुख ८ भूम्यो ८ वर्गमूलमपे क्षेत्ररक्षणानुगुणेन गृहीत्वा १२$\frac{२}{३}$।२४$\frac{६}{८}$ मुखमूलशेषे $\frac{२}{६}$ अष्टभिरपवर्तिते $\frac{१}{३}$ भूमिमूलशेषे $\frac{६}{८}$ षोडशभिरपवर्तिते $\frac{३}{४}$ तयो सूक्ष्मपरिधी स्याता । इद क्षेत्रबाहुल्य ८ मध्य ८ पर्यन्त खण्डयित्वा प्रसारिते परिधिप्रमाणेन तिष्ठति तत् क्षेत्र तत्र स्थोभयपार्श्व पुन मुख ० भूमि ८ सम सार्धं मध्यफलमिति वेधरूपमध्य पर्यन्त साधयित्वा तत्र याभयपार्श्वस्थितक्षेत्र गृहीत्वा चतुरस्ररूपेण साधिते एव । तत्र शातपूरणार्थं कोणद्वयस्थितयोरेकरूप गृहीत्वा शून्यस्थाने

निक्षिते सपूर्णं न भवतीति एतावति भागे निक्षिप्ते सम्पूर्णं भवति । पा,व द्वयवर्तिविष्कम्भोपरि तिर्यक्तया । एकस्यापरि एकस्मिन् विपर्यासरूपेण निक्षिप्ते एव । तस्योपरि दूरमानीते क्षेत्रे निक्षिप्ते एव । अत्रत्यतृतीयांशं पृथक् स्थापयित्वा त्रिधा खण्डिते सत्येवं । अस्मिन् खंडत्रय एकभुजारूपेण संधिते सत्येव । तदपि तिर्यग्रूपेण दर्शयित्वा पा,व सस्थाप्य सधिते एव । स पुनरपि तिर्यग्रूपेण दर्शयित्वा पृथक् स्थापिते क्षेत्रद्वये एव । अत्रैकक्षेत्र द्विभागभागेन समानमिति तस्मै दातव्यं । त्रिभागरहितषट्क्षेत्र नियमरूपेण दर्शयित्वा पा,र्श्वे संस्थाप्य संधिते एवं । तदपि पुनस्तिर्यग्रूपेण दर्शयित्वा उच्चभागे ६ संधिते सत्येव । एवं समभुजकोटौ सत्यां आयामकदंबकम् ।
आयामकदंबौ १४४ बधस्य ११ अर्धं ११ दर्शयित्वा प्रथमवर्गमूलवर्गं २ अधुना संस्थाप्य इति ऐवा मुखदलहीनेत्युक्तं । तत्र मुखदलसमक्षणहीनराशौ १४२ कर्षाय दत्वा अवशिष्टे वेधस्य ४ वेधसम द्वाभ्यां भित्वा अधुना सधान्यत इति कृत्वा "मुखतल अर्द्धवधगुणा" इत्युक्त । तत्र मुखतलसार्धवर्गगुणराशि १४६ एव मुखतलद्वयेनापि १४६ द्वयोस्तथा सद्वयो किमिस्यागतेन गुणकारद्वयेन गुणयत इति कृत्वा "त्रिगुणा" इत्युक्तं । एवं द्विरतराशि २९२ वेधेन चतुर्भिर्गुणितेन ७३।५ इत्यत इति 'वरणहृदा" इत्युक्तं । एतदुत्सेधघनफल ३६५ भवति । द्वीन्द्रियचतुरिन्द्रियपंचेन्द्रियाणां स्वात्फल "मुखकोटि वधा" विधिना नेतव्य । एवं द्वियादिस्वातफलानां अंगुलप्रदेशरूपप्रमाणमिदमुच्यते । तत्राद्यल्वं द्वीन्द्रियस्वातफल ८।११ एकयोजनस्यैतावत्स्वंगुलेषु ७६८००० एतावत् ८।११ किमिति संपात्य घनरूपराशित्वात् फलराशिमपि घनरूपेणैव संस्थाप्यागुलं कृत्वा ८।११ । ७६८०००।७६८०००।७६८००० तदैकांगुलस्य सूच्यगुलप्रदेशो एतावदं- गुलानां किमिति संपात्य सूच्यगुलं कृत्वा सूच्यगुलस्य प्रमाणांगुलत्वात् व्यवहाररूपात्तनांगुलानां ११।७६८०००।७६८०००।७६८००० प्र माणांगुलकरणार्थं पंचशत ५०० व्यव हारागुलानामेकप्रमाणागुले एताव द्व्यवहारांगुलानां ११।७६८०००।७६८०० ०।७६८००० किमिति सं-

[illegible] ॥ ३२७ ॥

[illegible] गाथाद्वयमाह,—

सुद्धखरभूजलाणं बारस बावीस सत्त य सहस्सा ।
तेउतिए दिवसतियं सहस्सतियं दस य जेट्ठाओ ॥३२८॥

शुद्धखरभूजलानां द्वादश द्वाविंशतिः सप्त च सहस्राणि ।
तेजस्त्रये दिवसत्रयं सहस्रत्रयं दश च ज्येष्ठम् ॥ ३२८ ॥

सुद्ध । शुद्धखरभूजलानाम् यथासंख्यं द्वादशवर्षसहस्राणि । द्वाविंशतिवर्षसहस्राणि सप्तवर्षसहस्राणि । तेजस्त्रये तेजोवातवनस्पतिकायिके यथासंख्यं दिवसत्रयं सहस्रत्रयं दशवर्षसहस्राणि ज्येष्ठमायुः ३२८

वासदिणमास बारसगुणवण्णा छक्क विगलजेट्ठाओ ।
मच्छाण पुव्वकोडी णव पुव्वंगा सरिसपाणं ॥ ३२९ ॥

वर्षदिनमासा द्वादशैकोनपञ्चाशत् षट् विकलज्येष्ठम् ।
मत्स्यानां पूर्वकोटिः नव पूर्वाङ्गानि सरीसृपाणाम् ॥ ३२९ ॥

वास। वर्षाणि मासा द्वादश १२ एकोनपञ्चाशत् ४९ षट् ६ विकलेन्द्रियाणां यथासंख्यं ज्येष्ठमायुः मत्स्यानां पूर्वकोटि नवपूर्वाङ्गानि नवगुणितचतुरशीतिलक्षवर्षाणीत्यर्थः सरीसृपाणाम् ॥ ३२९ ॥

बावत्तरि बादाल सहस्समाणाहि पक्खिउरगाणं।
अंतोमुहुत्तमवरं कम्ममहीणरतिरिस्साऊ ॥ ३३० ॥

द्वासप्तति द्वाचत्वारिंशत् सहस्रमानानि प.युरगाणाम्।
अन्तर्मुहूर्तमवरं कर्ममहीनरतिरश्चामायुः ॥ ३३० ॥

बावत्तरि। द्वासप्तति द्वाचत्वारिंशत् सहस्रप्रमितानि पक्षिणामुरगाणां च अन्तर्मुहूर्तमवरमायुः मनुष्यादीनां सर्वेषां कर्ममहीनरतिरश्चाम् ॥ ३३० ॥

अथ मानायुष्य निरूप्येदानीं तेषामेव वेदगतविशेषं निरूपयति,—

णिरया इगिविगला समुच्छणपंचक्खा होंति संढा हु।
भोगसुरा मणुणा तिवेदगा गब्भणरतिरिया ॥ ३३१ ॥

निरयाः एकविकलाः सम्मूर्छनपञ्चाक्षा भवन्ति षण्ढाः खलु।
भोगसुराः पुंस्त्रीणाः त्रिवेदगाः गर्भनरतिर्यञ्चः ॥ ३३१ ॥

णिरया। नारकाः एकेन्द्रिया विकलत्रयाः संमूर्छनपञ्चेन्द्रियाश्च भवन्ति षण्ढाः खलु। भोगभूमिजाः सुराश्च पुंस्त्रीणाः। त्रिवेदगा गर्भजनरतिर्यञ्च ॥ ३३१ ॥

एवं प्रासंगिकानुपविश्य प्रतिपाद्येदानीं प्रकृतार्थं ताराद्विविधविषयार्थं गाथात्रयेण निर्दिशति —

णउदुत्तरसत्तसया दस सीदी चदुदुगे तियचउके।
तारिणससिरिक्खवुहा सुक्कगुरुंगारमंदगदी ॥ ३३२ ॥

नवत्युत्तरसप्तशतानि दश अशीतिः चतुर्द्विके त्रिकचतुष्के।
तारिका शशि ऋक्ष बुधा शुक्रगुर्वङ्गारमन्दगतयः ॥ ३३२ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ३३३ ॥

[illegible] ॥ ३३३ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible] ॥ ३३४ ॥

[illegible] ॥ ३ [illegible] ॥

[illegible]

अथ [illegible] —

तारतर जइ्वण तेरिच्छ काममत्तमाणो हु ।
पणाम [illegible] महम्मुस्कम्मय होदि ॥ ३३५ ॥

तारतर [illegible] ।
[illegible] ॥ ३३५ ॥

सारतर । तारकाया सकाशात् तारकांतर जघन्य तिर्यग्रूप परोऽसप्तमभाग पं पंचाशद्योजनानि मध्यमांतर योजनसहस्रमुत्कृष्टांतर भवति ॥ ३३५ ॥

इदानीं ज्योतिर्विमानस्वरूप निरूपयति,—

उत्ताणट्ठियगोलकदलसरिसा सव्वजोइसविमाणा ।
उवरिं सुरनगराणि य जिणभवणजुदाणि रम्माणि ३३६

उत्तानस्थितगोलकदलसदृशा सर्वज्योतिष्कविमानाः ।
उपरि सुरनगराणि च जिनभवनयुतानि रम्याणि ॥ ३३६ ॥

उत्ताण । उपरि 'तपामुपरि' इत्यथ । शेषसुगमार्थमेताव ॥३३६॥

अथ तेषां विमान यास बाहल्य च गाथाद्वयेनाह,—

जोयणमेकट्ठिकए छप्पण्णडदालचदरवियास ।
सुक्कगुरिदरतियाणं कोसं किंचूणकोस कोसद्धं ॥ ३३७ ॥

योजन एकषष्टिकृते षट्पञ्चाशद्‌अष्टचत्वारिंशत् चन्द्ररवि यासः ।
शुक्रगुर्वितरत्रयाणां क्रोशः किंचिदूनक्रोशः क्रोशार्धम् ॥ ३३७ ॥

जोयण । एकयोजने एकषष्टिभाग कृते सत षट्पञ्चाशद्भागा अष्टचत्वारिंशद्भागाश्च क्रमेण चन्द्ररविविमानव्यासो भवत । शुक्रगुर्वितरत्रयाणां बुधमंगलशनीनां विमान यास क्रोश किंचिदूनक्रोश क्रोशार्धं च स्यात् ॥ ३३७ ॥

कोसस्स तुरियमवर तुरियाहियकमेण जाव कोसोत्ति ।
ताराण रिक्खराण कोस बहल्लं तु वासद्धं ॥ ३३८ ॥

क्रोशस्य तुर्यमवरं तुर्याधिकक्रमेण यावत् क्रोश इति ।
ताराणां ऋक्षाणां क्रोशं बाहल्य तु व्यासार्धम् ॥ ३३८ ॥

कालवशात् । कृष्ण [illegible] पूर्णिमा [illegible] अमावस्यायां [illegible] दृश्य [illegible] भागी [illegible] विमानं [illegible] [illegible] विमानस्थानं [illegible] [illegible] स्मरणीयं ॥ ३३८ ॥

अथ राहु [illegible] विमानस्थानं [illegible] तद्व्यापारं [illegible]

राहुअरिट्ठविमाणा किंचूण जोयण अधोगंता ।
छम्मासे पव्वंते चंदरवी छादयंति कमे ॥ ३३९ ॥

राहुरिष्टविमानौ किंचिदूनौ योजनं अधोगतौ ।
षण्मासे पर्वान्ते चन्द्ररवी छादयतः क्रमेण ॥ ३३९ ॥

राहु । राहुरिष्टविमानौ किंचिदूनयोजनमधो गत्वा षण्मासे पर्वान्ते चन्द्ररवी छादयतः क्रमेण ॥ ३३९ ॥

राहुअरिट्ठविमाणधयादुवरि पमाणअंगुलचउक्कं ।
गंतूण ससिविमाणा सूरविमाणा कमे होंति ॥ ३४० ॥

राहुरिष्टविमानध्वजादुपरि प्रमाणाङ्गुलचतुष्कं ।
गत्वा शशिविमानाः सूर्यविमानाः क्रमेण भवन्ति ॥ ३४० ॥

राहु । राहुरिष्टविमानध्वजदण्डादुपरि प्रमाणाङ्गुलचतुष्कं गत्वा शशिविमानाः सूर्यविमानाश्च क्रमेण भवन्ति ॥ ३४० ॥

अथ चन्द्रादीनां किरणप्रमाणं तत्स्वरूपं चाह,—

चंदिण बारसहस्सा पादा सीयल खरा य सुक्के दु ।
अड्ढाइज्जसहस्सा तिव्वा सेसा हु मंदकरा ॥ ३४१ ॥

चन्द्रेनयोः द्वादशसहस्राः पादाः शीतलाः खराश्च शुक्रे तु ।
अर्धतृतीयसहस्राः तीव्राः शेषा हि मन्दकराः ॥ ३४१ ॥

चंद्रि०। चन्द्रादित्ययोः द्वादशसहस्र पादाः करा शीतल खरा उष्णश्च। शुक्रस्य तु तीव्र २५०० सहस्रा तीव्रा प्रकाशेनोज्ज्वला शेषाणां मन्दकरा मन्दप्रकाशा ॥ ३४१ ॥

अथ चन्द्रमण्डलस्य वृद्धिहानिक्रममावेदयति,—

चंदो णियसोलसमं किण्हो सुक्को य पण्णरदिणोत्ति।
हेट्ठिल्ल णिच्च राहुगमणविसेसेण वा होदि ॥ ३४२ ॥

चन्द्रो निजषोडशं कृष्णः शुक्लश्च पञ्चदशदिनानाम्।
अधस्तन नित्य राहुगमनविशेषेण वा भवति॥ ३४२ ॥

चंदो। चन्द्रो निजषोडशभागमभिव्याप्य कृष्णः शुक्लश्च भवति। पञ्चदश दिनपर्यंत षोडशकलानां १६ मेतावति विध त्रे ६० एककलाया किमिति सपाद्याद्याभिपवत्यं गुणिते एवं १२४ एककलाया एतावति क्षेत्रे ३०१६ षोडशकलानां १६ किमिति सपादय द्वाभ्यामपवर्त्य गुणिते एव ३१ आचार्यीतराभिप्रायेणाधस्तन नित्यराहुगमनविशेषेण वा भवति ॥ ३४२ ॥

अथ चन्द्रादीनां विमानवाहकदेवानामाकारविशेष तत्संख्यां चाह,—

सिंहगयवसहजडिलस्सायारसुरा वहंति पुव्वादि।
इंदुरवीण सोलससहस्समद्धद्धमिदरतिये ॥ ३४३ ॥

सिंहगजवृषभजटिलाश्वाकारसुरा वहन्ति पूर्वादिम्।
इन्दुरवीणां षोडशसहस्रं अर्धार्धमितरत्रये ॥ ३४३ ॥

सिंह। सिंहगजवृषभजटिलाश्वाकारसुरा वहन्ति तद्विमानपूर्वादिके संख्या इन्दुरवीणां षोडशसहस्राणि तदर्धार्धमितरत्रये ग्रहनक्षत्र तारकारूपे ॥ ३४३ ॥

अथाकाशे चरतां कियन्नक्षत्राणां दिग्विभागमाह —

उत्तरदक्खिणउड्ढाधोमज्झे अभिजिमूलसादी य।
भरणी कित्तिय रिक्खा चरंति अवराणमेव तु ॥ ३४४ ॥

अथ तेषु वलयेषु व्यवस्थितानां चन्द्रादित्यानां सङ्ख्यामाह्यति,—

दीवद्धपढमवलये चउदालसयं तु वलयवलयेसु।
चउचउवड्ढी आदी आदीदो दुगुणदुगुणकमा ॥३५०॥

द्वीपार्धप्रथमवलये चतुश्चत्वारिंशच्छतं तु वलयवलयेषु ।
चतुश्चतुर्वृद्धय आदि आदितः द्विगुणद्विगुणक्रम ॥ ३५० ॥

दीव । मानुषोत्तराद्बहि स्थितपुष्करार्द्धप्रथमवलये चतुश्चत्वारिंशदुत्तरशतं १४४ तत उपरि वलयवलयेषु चतस्रश्चतस्रो वृद्धयो भवन्ति । १४८।१५२।१५६।१६०।१६४।१६८।१७२ उत्तरोत्तरद्वीपस्य समुद्रस्य वा आदि प्रथमप्रथमस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा प्राक्तनवलयस्यादितः द्विगुणद्विगुणक्रम ॥ २८८ ॥ ३५० ॥

अथ तत्तद्वलयव्यवस्थितचन्द्रचन्द्रांतरं सूर्यसूर्यांतरं च निवेदयति,—

सगसगपरिधिं परिधिगरविंदुभजिदे दु अंतरं होदि ।
पुस्सम्हि सव्वसूरा ठिया हु चंदा य अभिजिम्हि ॥३५१॥

स्वकस्वकपरिधिं परिधिगरवीन्दुभक्ते तु अंतरं भवति ।
पुष्ये सर्वसूर्याः स्थिता हि चन्द्राश्च अभिजिति ॥ ३५१ ॥

सग । स्वकीयस्वकीयपरिधौ परिधिगतरवीन्दुप्रमाणेन भक्ते सति अंतरं भवति । तत्र तावज्जम्बूद्वीपादारभ्योभयभागगततत्तद्द्वीपसमुद्रवलयव्यासमेलनसजातद्वितीयपुष्करार्धप्रथमवलयसूचीव्यासस्य ४६००००० विक्खंभवग्ग इत्यादिना परिधिमानीय १४५४६४७७ तस्मिन् तत्परिधिगतरवीन्दुप्रमाणेन १४४ भक्ते बिंबसहितांतरं चन्द्रादित्यानां १०१२७ शेष [illegible] बिंबरहितांतरानयने बिंबसहितांतरलब्धादेकमपनीय १०१०१६ शेषेण [illegible] सह समच्छेदं कृत्वा [illegible] तदुपरि मेलयित्वा [illegible] अनेन सह चन्द्रबिंबं [illegible] सूर्यबिंबं वा [illegible] परस्परहारगुणेन समच्छेदं कृत्वा शेषं

[illegible] योः [illegible] विवे तस्मिन् चन्द्रबिंब अपनीते [illegible] पूर्वविंबे आनीते [illegible] विमाहिते चन्द्रपूर्णता स्यात् । पुन एवं पुनः विधिना चन्द्रस्य अभिवृद्धि ज्ञेया ॥ ३५१ ॥

अथ [illegible] समुद्रमनचन्द्राद्रिसर्पावर्तने गच्छमानयन् तत्कारण [illegible] गाथाद्वयमाह,—

रज्जुदलिदे मंदिरमज्झादो चरिमसायरंतोत्ति ।
पडदि तदद्धे तस्स दु अब्भंतरवेदिया परदो ॥ ३५२ ॥

रज्जुदलिते मन्दरमध्यात् चरमसागरान्त इति ।
पतति तदर्धे तस्य तु अभ्यन्तरवेदिका परतः ॥ ३५२ ॥

रज्जु । रज्ज्वर्धमाने कृते सति मन्दरमध्यात् आरभ्य चरमसागरांत यावत् तावत्स्था पतति तस्मिन् पुनरप्यर्धिकृते तस्य चरमसागरस्याभ्यंतरवेदिका पात ॥ ३५२ ॥

दसगुणपणपण्णासियसजोयणमुवगम्म दिस्सदे जम्हा ।
इगिलक्खसहिओ एक्को पुव्वगसव्वुवहिदीवेहि ॥ ३५३ ॥

दशगुणपञ्चपञ्चाशत्शतयोजनमुपगम्य दृश्यते यस्मात् ।
एकलक्षाधिक एक पूर्वगसर्वोदधिद्वीपेभ्य ॥ ३५३ ॥

दस । दशगुणपञ्चपञ्चाशत्शत ७५००० योजनमुपगम्य रज्जुर्दृश्यते । कुत इतिचेत् । यस्मात् कारणात् पूर्वस्थितसर्वोदधिद्वीपेभ्य सकाशात् उत्तर एक कश्चिद्द्वीप समुद्रो वा एकलक्षाधिक । एतदेव स्पष्टीकरोति । एवं ३२ ल, स्वयंभूरमण संबन्धि जम्बूद्वीपगताधल [illegible] सर्व द्वीपसमुद्र उपव्यासोऽक ५००००।२ ल।४ ल।८ ल।१६ ल।३२ल। इत्यादि मेलयित्वा ६२५ ००० अर्धीकृते ३१२५००० द्वितीयवारार्धितरज्जुप्रमाणं । तस्मिन् चरमात्पावतन [illegible] ३०५०००० न्यूने सति तदभ्यन्तरवेदिकापरतो

लवणे द्वि पतित एक जम्बू द्वीपे आदिमा पञ्च ।
द्वीपोदधय मेरुशलाका प्रकृतोपयोगिनो न भवन्ति ॥ ३५८ ॥

लवण । लवणसमुद्रे द्वि छेदं पतितं तत्रैक जम्बूद्वीपे देहि । तत्र छेदे आदिमा पञ्च द्वीपोदधिच्छेदा मेरुशलाका च प्रकृते प्रकृते ज्योतिर्विमानयने उपयोगिनो न भवति इत्यमेवनष्यते ॥ ३५८ ॥

कुतति चेदाह,—

तिपहीणसेढिछेदणमेत्तो रज्जुच्छिदी हवे गच्छो ।
जंबूदीवच्छिदिणा छरूपजुत्तेण परिहीणा ॥ ३५९ ॥

त्रिपहीनश्रेणिच्छेदनमात्र रज्जुच्छेदं भवेत् गच्छ ।
जम्बूद्वीपच्छेदेन षड्रूपयुक्तेन परिहीन ॥ ३५९ ॥

तिप । त्रिहीनश्रेणिच्छेदनमात्रो रज्जुच्छेद तस्मिन् जम्बूद्वीपस्याभ्यन्तरे बहिश्च पञ्चाशत्पञ्चाशत्सहस्राणि इति मिलित्वा एकलक्षयोजनानि तेषां छेदान् १७ तदङ्गुल ७६८००० छेदान् १९ मेरुमध्येकच्छेद च मेलयित्वा तत् सर्वमेकसंख्यात कृत्वा तेन सहितसूच्यङ्गुलच्छेदान् अपनयनत्रैराशिक विधिना अपनीते द्वीपसमुद्राणा सख्या भवति । कथमपनयनत्रैराशिकविधिरितिचेत् । एतावत् । प्र—छे छे २ गुणकार प्रदर्श्य यदि गुण्ये छे । एक फल=१ रूपमपनीयते एतावत् ३ छे छे गुणकार प्रदर्श्य कियदपनीयते इति त्रैराशिकेन फलगुणितामिच्छा प्रमाणेन विभज्य गुणकार छे छे भागहारयो छे छे २ पल्य छेदवर्ग पल्यच्छेदवर्गेण सदृश प्रदर्श्य अधस्तनं छे छे २ यावद्भागेनैक उपरितन छे छे ! तावद्भागेन साधिकैकमित्यपवर्त्य ३ एतद्रज्जुच्छेदस्य गुण्ये छे छे छे २ अपनयेत् । इदमेव द्वीपसमुद्राणा संख्या भवति । इदानीं प्रकृतमनुसधयति । जम्बूद्वीपच्छेदेन षड्रूपयुक्तेन छ छे परिहीनो रज्जुच्छेद एव समस्तद्वीपसमुद्रगतचन्द्रादित्यप्रमाणानयन गच्छो भवति ॥ ३५९ ॥

अथ ज्योतिर्बिम्बसंख्यानयनगच्छस्याद्रिमाह,—

पुक्खररसिंधुभयधण चउघणगुणसयछहत्तरीपभओ।
चउगुणपचआ रिणमवि अटकदिमुरमुवरि दुगुणकम

पुष्करसिंधूभयधन चतुर्घनगुणशतषट्सप्तति प्रभव ।
चतुर्गुणप्रचय ऋणमपि अष्टकृतिमुरसमुपरि द्विगुणक्रमं ॥ ३६० ॥

पुक्खरर । पुष्करसमुद्रस्याद्युत्तरधनमानेतव्य । कथमितिचेत् । आदी आदीदो दुगुण दुगुण कमे इति न्यायेन पुष्करोत्तरार्धस्यादित १४४ पुष्करसिंधोरादिर्द्विगुणा १४४।२ भवति । त मुखं कृत्वा पद ३२ हत मुखं १४४।२।३२ मुखस्थितन द्विकेन २ पद ३२ गुणयित्वा स्थापिते १४४।६४ आदिधन स्यात् । व्येकपद ३१ अथ १/२ प्रचय ४ गुणो गच्छ ३१/२।८।३२ अत्रापवर्तनद्विकमुपरितनचतुष्केनापवर्त्य अवशिष्ट द्विकेन पद गुणित एव ३१।६४ अस्मिन्नुत्तरधने ऋणनिक्षेपार्थं उत्तरधन गतगुणकारस्य ३१।६४ ऋण १।६४ गुणकार ६४ सदृश मदर्थ १।६४ आत्मप्रमाणैकरूप ऋण निक्षिप्य ३२।६४ इदमप्यादिधने १४४।६४ तथा सादृश्य प्रक्षेप्य षट्सप्तत्युत्तरचत्वारिंशच्छतरूपे १४४।६४ आदिधन गुण्ये द्वात्रिंशद्रूपोत्तरधनगतगुण्ये ३२।६४ मिलिते सति चतुर्धनगुणित षट्सप्तत्युत्तरशतस्य १७६।६४ पुष्करसिंधूभयधनमेव ज्योतिर्बिम्बानयन गच्छस्य प्रभव स्यात् । एवमुत्तरत्र वारुणिवरद्वीपादिषु सर्वत्र मादनादित १४४।२ द्विगुणक्रमेण स्थित मुख १४४।२।२ पदहत कृत्वा १४४।२।२। ६४ द्विकद्वयमन्योन्य सगुण्य चतुःषष्टिरूपे स्थापिते आदिधन १४४। ६४।४।१ व्येकपदेत्यादिना उत्तरधनमप्यानीय ६३/२।४।६४। तन्निरपव- र्तितद्विक चतुःषष्टिश्च सस्थाप्य ६३।६४।२ अत्रैतद्गुणकारगुणितैकरूपं ऋण ६४।२ निक्षिप्य सर्वत्र चउघणगुणसयछहत्तरीणा भवितव्यमि त्येतदर्थ द्वात्रिंशदवशिष्यते यथा तथा सर्वेषु तन्द्विकेन पूर्वद्विक सगुण्य

३२।६४।४ आदिधन १४४६४।८ उत्तरधनयो ३२।८४।४ मेलने १७६।२४।८ चतुर्गुणप्रचयो भवतीति ज्ञातव्य । एव सर्वत्र धन चतुर्गुणोत्तरक्रमेण गच्छति । ऋणमपि अङ्गुलकृतिमुख उपर्युपरि द्विगुणोत्तरक्रम च स्यात् ॥ ३२० ॥

अथैवमादि १७८।६४ उत्तर ४ गच्छ छे छे २ मानीय तत्संकलितधनमानयन् सर्वज्योतिर्बिंबानयनप्रकारमाह,—

आणिय गुणसकलिद किंचूण पचठाणसठविद ।
घद्दादिगुण मिळिदे जोइसबिंबाणि सव्वाणि ॥ ३६१ ॥

आनाय्य गुणसङ्कलित किञ्चिदून पञ्चस्थानसंस्थापितम् ।
घन्नादिगुण मिलिते ज्योतिष्कबिंबानि सर्वाणि ॥ ३६१ ॥

आणिय । पद्मेत्ते गुणयारे इत्यादिना पद्मतोपरितनराशी छे छे २ मानगुणकारप्रमाणद्विके २।२ अन्योन्य गुणिते सति 'सम्मेतगुणे गुणे रासी' इति न्यायेन श्रेणिर्भवति । तन्मात्रगुणकारापरद्विके गुणिते अपरा श्रेणिर्भवति । पद्गतावधस्तनराशी हे गतैकलक्षयोजनछेद १७ मात्रद्विकद्वये परस्पर गुणिते लक्षवर्गो भवति १ ल । १ ल, तन्नताङ्गुल ७६८००० छेद १९ मात्रद्विकद्वये अन्योन्य गुणिते अङ्गुलवर्गो भवति ७६८०००। ७६८०००। सूच्यङ्गुलछेदमात्रद्विकद्वये अन्योन्यं गुणिते प्रतराङ्गुलवर्गो भवति ६५।८६५।तदनन्तरिकमात्रद्विकद्वये अन्योन्य गुणिते सप्तवर्गो भवति ७ ७ पद्मात्रगुणकारान्तराशावेकस्मिन्नूरे अपनीयते रूपपूनगुणकारेण २ हते मुखेन १७८।६४ गुणिते च संकलितधन भवतीति ४।३।१।८ । ७६८००० । १ ल १ ल ६५।६५।७।७ २ एवमेव ज्ञातसंकलितधनमप्याने तव्यं । १।८ । १ ल ३।६५।२ संकलितधनराशिरुपरितनपद्मप्रमित १० अधस्तनचतुष्ट्य ६४ सह चाड्गानिम्नतनीयं । उपरि तनचतुष्ट्य ६४ अधस्तनचतुष्ट्य ६४ सह तावन्तः ६४ घा-

सप्त । अङ्गुलगणयद्धान्यानि एकपल्यद्धान्ये सह षोडशशून्यानि पृथक् कृत्वा स्थापयेत् । अगुलोकस्य विधि समेव वेसद्धुप्पण्णवर्गमूलयोर्न्ये गुणिते यन्मात्रा स्यात् । अधस्तनविकलपद्धयोर्ण्य गुणयित्वा २७ तेन सामर्थ्य ४९ संगुण्य १३२३ अवशिष्टचतुष्केण गुणयित्वा तस्मिन् तानि शून्यानि मेलयेत् ३ । ३११५२९२०००००००० ००००००० एव मानाये गुणाकारिते न्यूनं पाइाल्य " दो दो बार्गि " इत्यापन्ने । चेद्रा यक सर्व २।८।१२।४२।७५ मेलयित्वा १३२ तस्मिन् पुनः पुष्करीसार्धे स्तवद्रागां संकलितधनं " पद्मेगेण विर्णिं ■ दुमाजिदं ँ उत्तरेण सगुणिदं ँ । ४ अपचस्य १५ पमप १४४ जुदं १५८ पद ८ गुणिदे १२ ६८ इत्यानीय मेलयित्वा १३९६ इदं ऋणसंकलितधनेन समच्छेदं कृत्वा सू १३९६ सू ७७६८००० । १ ह ।६४।७।१।७६८०००।१ ल ६४।७।१ एतत्सर्वं सरयात सूच्यगुलं कृत्वा सू २ । ऋणस्य ऋण ।।शे धनं भवतीति न्यायेन ऋणसंकलितधनक्षेपणीय पु ३ । ६४ । ७६८००० १ ह । ७।६४।१ एवमुक्तऋणसंकलितधनैकक्षेप्या सह ऋणमहितधनसंकलितं समानच्छेदं कृत्वा सू २।८४।७६८०००।१ ल ७।६४।१।८।७६८०००।७६८०००।१ ह । १ ■ ।७।७।६४।६४।२ अस्य सूच्यगुलस्य प्रतिनियतगुणकारं सर्वं संख्यातं कृत्वा तत्संख्यातसूच्य गुण्यगुणकारश्रेणी सू २ । संकलितधनैकक्षेप्या साम्यं मद्रर्यं तमेवापरस्यां श्रेण्यामपनीते किंचिन्न्यूनं भवति २ । १ । ११ । ४ । ६५=५११२।१६ एतत्पञ्चसु स्थानेषु संस्थाप्य चन्द्रादिप्रमाणेन गुणयित्वा २।१।११।१।८।६५। ५११७।१६।१।११।८।६५=५२१३।१६।२।११।८८।४।६५=५२११। १६।२।११।२८।८।६५=११३२।१६।२।११।६६९७५।१४।४।६५= ५११२।१६ समिलिते $\frac{७३६७७५}{४६५५२११}$ ——— $\frac{१२१८}{}$ ——— अत्र स्थान सहस्रापवर्तनन्यायेन विंशतिस्थानान्यपनेष्यते । इदं मनसि कृत्य " वेसद्- उप्पण्णगुलकदिहिदपदरस्स इत्याद्युक्तं । एतदेव असंख्यातद्वीपसमुद्र- गतसर्वज्योतिर्बिम्बप्रमाणं स्यात् ॥ ६१ ॥

अट्ठसीदट्ठावीसा गहरिक्खा तार कोडकोडीण ।
छावट्ठिसहस्साणि य णवसयपणत्तरिगि चंदे ॥ ३६२ ॥

अष्टाशीत्यष्टाविंशति ग्रहऋक्षयोस्तारा कोटिकोटीनाम् ।
षट्षष्टिसहस्राणि च नवशतपंचसप्ततिरेकस्मिन् चन्द्रे ॥ ३६२ ॥

अट्ठ । अष्टाशीत्यष्टाविंशति ८८।२८ ग्रहनक्षत्रयो तारकाणा प्रमा॰ षट्षष्टिसहस्राणि नवशतपंचसप्ततिकोटीकोट्य एकस्मिन् चन्द्रे परिवार॰ ३

अथाष्टाशीतिग्रहाणां नामान्यष्टाभिर्गाथाभिर्निरूपयति;—

कालविकालो लोहिदणामो कणयक्ख कणयसंठाणा ।
अंतरदो तो कचयव दुंदुभि रत्तणिहरूवणिब्भासो॥३६३॥

कालविकालो लोहितनामा कनकाख्य कनकसंस्थान ।
अन्तरदस्तत कचयव दुन्दुभि रत्ननिभ रूपनिर्भास ॥ ३६३ ॥

काल॰ । छायामात्रमेवार्थ ॥ ३६३ ॥

णीलो णीलब्भासो अस्सस्सट्ठाण कोस कसादि ।
वण्णा कसो सखादिमपरिमाणो य सखवण्णोवि॥३६४॥

नीलो नीलाभासोऽश्वोऽश्वस्थान कोश कसादि ।
वर्णे कस शखादिपरिमाण च शखवर्णोऽपि ॥ ३६४ ॥

णीलो । कसादि वर्ण॰ कसवर्ण॰ शखादिपरिमाण॰ शखपरिमाण इत्यर्थ । शेष छायामात्र ॥ ३६४ ॥

तो उदय पचवण्णा तिलो य तिलपुच्छ छाररासीओ ।
तो धूम धूमकेदुगिसठाणण्णो कलेवरो वियडो ॥३६५॥

तत उदय पंचवर्णस्तिलश्च तिलपुच्छ क्षारराशि ।
ततो धूमो धूमकेतु एकसस्थान अक्ष कलेवरो विकट ॥३६५॥

तो उदय । छायामात्रमेवार्थ ॥ ३६५ ॥

इट भिण्णसंधि गंठी माण चउप्पाय विज्जुजिब्भणभा।
तो सरिस णिलय कालय कालादीकेउ अणयक्खा ३६६

इष्टाभिन्नसंधि ग्रंथि मानश्चतुष्पादो विद्युज्जिह्वो नभ।
तत सदृशो निलय कालश्च कालादिकेतुरनयाख्य ॥ ३६६॥

इट्ठ। छायामात्रमेवार्थ। कालादि केउ कालकेतु ॥ ३६६॥

सिंहाउ विउल काला महकालो रुद्दणाम महरुद्दा।
संताणसंभवक्खा सव्वट्ठि दिसाय संति वत्थूणो ॥३६७॥

सिंहायुर्विपुल कालो महाकालो रुद्रनामा महारुद्र।
संतान संभवाख्य सर्वार्थी दिशा शान्तिर्वस्तून ॥ ३६७॥

सिंहाउ। छायामात्रमेवार्थ (१२) ॥ ३६७॥

णिच्चलपलंमणिब्भतज्जोदिमता सयंपहो होदि।
भासुर विरजा णामो णिद्दुक्खो वीदसोगो य ॥ ३६८॥

निश्चल प्रलम्भो निर्मन्त्रो ज्योतिष्मान् स्वयंप्रभो भवति।
भासुरो विरजानामो निर्दुःखो वीतशोकश्च ॥ ३६८॥

णिच्चल। छायामात्रमेवार्थ (९) ॥ ३६८॥

सीमंकर खेमभयंकर विजयादिचउ विमलतत्था य।
विजयिण्हु वीयसो करिकट्ठिगिजडिअग्गिजालजलकेदू॥

सीमंकर क्षेमभयंकर विजयादिचर विमलस्त्रस्तश्च।
विजयिष्णु विकस करिकाष्ठ एकजटिग्निज्वाल जलकेतु ।३६९।

सीमंकर। सीमंकर क्षेमंकर अभयंकर विजयो वैजयंतो जयंतो अपराजित इति चत्वार। विमलस्त्रस्तश्च विजयिष्णुर्विकस करिकाष्ठ एकजटिरग्निज्वाल ज्वलकेतु १५ ॥ ३६९ ॥

केदुगीरिमउप्पलणा गाढ् महगहा य मावगहो ।
कुजमणि सुहसुक्कगुरू महाण णामाणि अट्ठसीदी ३७०

केतु क्षीरिम अप नागा राहु महाग्रहश्च भावग्रह ।
कुज शनि बुध शुक्र गुरु महानां नामानि अष्टाशीतिः ॥ ३७० ॥

केदु । इति क्षीण । ८८ । छायामात्रमर्थः ॥ ३७० ॥

अथ जम्बूद्वीपभरतादिक्षेत्रगतानां तारा गाथाद्वयेन विभजति,—

णउदिसयभजिदतारा सगदुगुण दुगुणसलसमव्या ।
भरहादि विदेहाति पतारा वस्से य वस्सधरे ॥ ३७१ ॥

नवतिशतभक्तताराः स्वकद्विगुणद्विगुणशलाकासमभ्यस्ताः ।
भरतादिविदेहान्तं च तारा वर्षे च वर्षधरे ॥ ३७१ ॥

णउदि । नवत्युत्तरशतशलाकानां १९० चेद्भवतारापेक्षा १०३९५।
१५ भरतादिनियमाणरूपैकशलाकादीनां १।२।४।८।१६।३२।६४।३२।
१६।८।४।२।१ कियत्यस्तारा स्युरिति त्रैराशिकविधिनानवतिमक्ताराः
७०५।१४ स्वकीयस्वकीयद्विगुणद्विगुणशलाकासमभ्यस्ता भरतादिविदेह-
पर्यंत वर्ष क्षेत्रे वर्षधर पर्वते च तारा भवति ॥ ३७१ ॥

अथ तत्संख्यामुच्चारयति;—

पणुत्तरसत्तसया कोडाकोडी य भरहताराओ ।
दुगुणा दु विदेहोत्ति य तेणपर दलिददलिदकमा ३७२

पचोत्तरसप्तशतकोटिकोट्य च भरततारा ।
द्विगुणाहि विदेहात च तेन पर दलितदलितक्रम ॥ ३७२ ॥

पणुत्तर । पचोत्तरसप्तशतकोटिकोट्य ७०५।१४ भरततारा स्यु ।
द्विगुणद्विगुणा सन्त् विदेहपर्यंत हिमवति पर्वते १४१।१५ हैमवतक्षेत्रे

२८२।१५ महाहिमवति पर्वते ५६५।१५ हरिक्षेत्रे ११२८।१५ निषध पर्वते २२५६।१५ विदेहक्षेत्रे ४५१२।१५ तत उपरि दलितदलितक्रमो ज्ञातव्य । नीलपर्वते २२५६।१५ रम्यकक्षेत्रे ११२८।१५ रुक्मिपर्वते ५६४।१५ हैरण्यवतक्षेत्रे ५८२।१५ शिखरिपर्वते १४१।१५ ऐरावतक्षेत्रे ७०५।१४ ॥ ३७२ ॥

अथ लवणादिपुष्करार्धान्तस्थितचन्द्राकाणामन्तरमाह;—

सगरविदलविंबूणा लवणादी सगदिवायरद्धहिया ।
सूरंतर तु जगदीआसण्णपहंतर तु तस्स दल ॥ ३७३ ॥

स्वकरविदलविंबोन लवणादि स्वकदिवाकरार्धाधिकं ।
सूर्यांतर तु जगत्यासन्नपथान्तर तु तस्य दलम् ॥ ३७३ ॥

सगरविदल । स्वकीयस्वकीयाधि ४ प्रमाणार्ध २ गुणितरविबिंब $\frac{४८}{६१}$ प्रमाणेन $\frac{९६}{६१}$ न्यूनसमानच्छेदीकृतलवणादिव्यास २ ल । $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ द्वयोरंतरयो २ रेतावन्त्यंतरे $\frac{१२१९९९०४}{६१}$ एकस्य कियदंतरमिति त्रैराशिकेनाग-तस्वकीयदिवाकरा ४ र्ध २ हृतश्चेत् ९९९९९ वाधे $\frac{२६}{६१}$ द्वाभ्यामप-वर्तिते $\frac{१३}{६१}$ लवणसमुद्रगतसूर्यसूर्यान्तरं जगत्या आसन्नपथान्तरं पुनस्तस्य दलप्रमाणं स्यात् ४९९९९ विषमत्वाद्दलनं कथमिति चेत्, राशावेकमपनीय ९९९९८ दलित्वा ४९९९९ अपनीतैकं दलरूपेण संस्थाप्य $\frac{१}{२}$ मालन-शेषमपि $\frac{१३}{६१}$ तद्भाज्यशात्वाद्दलित्वा $\frac{१३}{६१}$।२ आसन्नपनीतदलरूपं समानच्छेदं कृत्वा $\frac{६१}{६१}$।२ मेलयित्वा $\frac{७४}{६१}$।२ द्वाभ्यामपवर्तिते $\frac{३७}{६१}$ जगत्यासन्नपथान्तरस्य राशो भवति । एवं धातकीसंडकालोदकसमुद्रपुष्करार्धस्थितसूर्यसूर्यान्तरं जगत्यासन्नपथान्तरं चानेतव्यं ॥ ३७३ ॥

इदानीं चारक्षेत्रमाह;—

दो द्दो चदरविं पडि एक्केक्क होदि चारखेत्त तु ।
पंचसय दससहिय रविबिंबहिय च चारमही ॥ ३७

द्वौ द्वौ चद्ररवी प्रति एकैकं भवति चारक्षेत्रं तु ।
पञ्चशतं दशसहितं रविबिम्बाधिकं च चारमही ॥ ३७४ ॥

दो दो। द्वौ द्वौ चद्ररवी प्रति एकैकं भवति चारक्षेत्रं। समस्तचारक्षेत्र पुन: कियदिति चेत्, पञ्चशतानि दशसहितानि रविबिम्बप्रमाणेनाधिकानि ५१०$\frac{48}{61}$ चारमहीप्रमाणं स्यात् ॥ ३७४ ॥

अथ तयोश्चारक्षेत्रविभागनियममाह,—

जंबुदीवे दीवे चरंति सीदिं सदं च अवसेसं ।
लवणे चरंति सेसा सगसगखेत्ते य य चरंति ॥ ३७५ ॥

जम्बूद्वीपे द्वीपे चरंति अशीतिशतं च अवशेषम् ।
लवणे चरंति शेषा स्वस्वकक्षेत्रे एव च चरंति ॥ ३७५ ॥

जंबू। जम्बूद्वीपस्थरवींदव अशीतिशतयोजनानि १८० द्वीपे चरंति अवशिष्टयोजनानि ३३०$\frac{48}{61}$ लवणसमुद्रे चरंति। शेषा पुष्करार्धपर्यंत-चन्द्रादित्याः स्वकीयस्वकीयक्षेत्रे एव चरंति ॥ ३७५ ॥

अथ तत्र सूर्याचन्द्रमसोर्वीथीप्रमाणं कथयति,—

पडिदिवसमेक्कवीथिं चंदाइच्चा चरंति हु कमेण ।
चंदस्स य पण्णरसा इणस्स चउसीदिसय वीथी ॥ ३७६ ॥

प्रतिदिवसं एकवीथिं चन्द्रादित्याः चरंति हि क्रमेण ।
चन्द्रस्य च पञ्चदश इनस्य चतुरशीतिशतं वीथ्यः ॥ ३७६ ॥

पडिदिवसं। द्वौ द्वौ मिलित्वा प्रतिदिवसमेकवीथीं चन्द्रादित्याश्चरंति खलु क्रमेण चन्द्रस्य पञ्चदश वीथ्यः इनस्य चतुरशीतिशतवीथ्यः स्युः ३७६

अथ वीथीनामंतरेण दिवसगतिं कथयति,—

पथवासपिंडहीणा चारक्खेत्ते णिरेयपथभजिदे ।
वीथीण विचालं सगबिंबजुदो दु दिवसगदी ॥ ३७७ ॥

पथ-व्यासपिंडहीना चारक्षेत्रे निरेकपथभक्ते।
वीथीनां विचाल स्वबिंबयुत तु दिनगतिः ॥ १७७ ॥

पथ। पथव्यासेन ४८/६१ गुणिता वीथ्य १८४ पथव्यासपिंडं ८८३२/६१ समन्तादेशीकृते दशोत्तरपञ्चशते ३११६८/६१ आदित्यबिंबे ४८/६१ मिलिते सति ३११५८/६१ चारक्षेत्रं स्यात्। अस्मिन् पथव्यासपिंडे ८८३२/६१ अपनीते सति एवं २२३२६/६१ अन्तरभागहार ६१ निरेकपथेन १८३ गुणयित्वा ११११६३ अनेन भागहारेण अपनीतव्यासपिंडे ११११६/६१ भक्ते सति २ वीथीनां विचाले अन्तराले स्यात्। एतत्स्वकीयबिंबं ४८/६१ युतं चेत् १७०/६१ प्रतिदिवस गमनक्षेत्रप्रमाणं स्यात्। एवमेव चंद्रस्य चारक्षेत्रे ३११५८/६१ पथव्यासपिंडं ५६/६१ वीथ्यन्तरालं ३५। २१४/४२७ दिवसगतिः ३६। १७९/४२७ आनेतव्यं ॥ १७७ ॥

एवमानीतदिवसगतिमाश्रित्य मेरोरारभ्य प्रतिमार्गमंतरं तत्परिधिं चाह;—

सुरगिरिचंदरवीणं मग्गं पडि अंतरं च परिहिं च।
दिणगदितप्परिहीण खेवादो साहए कमसो ॥ १७८ ॥

सुरगिरिचन्द्ररवीणां मार्गं प्रत्यंतरं च परिधिं च।
दिनगतितत्परिधाना क्षेपात् साधयेत् क्रमशः ॥ १७८ ॥

सुरगिरी। सुरगिरिचन्द्ररवीणां मार्गं प्रत्यंतरं च परिधिंचानेनव्यौ। कथमिति चेत्, जंबूद्वीपव्यासे एकस्मिन् लक्षे १ ल, तद्द्वीपाभ्यंतरोभयपार्श्वस्थचारक्षेत्रप्रमाणं (३६०) मपनीयते चेत् अभ्यन्तरवीथीविष्कंभ ९९६४० स्यात्। तदेव सूर्यमेर्वंतरं स्यात्। तत्र मेरुव्यासं १०००० मपनीय ८९६४० अर्धीकृते ४४८२० सुरगिर्यभ्यंतरवीथीस्थसूर्यांतरं स्यात्। तत्र दिवस २ ४८/६१, गतिक्षेपं कृते सति ४४८२२ ४८/६१ द्वितीयवीथीगतसूर्यसुरगिर्योरंतरं स्यात्। एवं प्राचीनप्राचीनसुरगिरिसूर्यांतरे

दिनगतिक्षेपे कृते उत्तरोत्तरसुरगिरिसूर्यांतरं स्यात् । अभ्यन्तरवीथीविष्कम्भे ९९६४० द्विगुणदिनगतिं $\frac{३४०}{६१}$ भक्त्वा ५।$\frac{३५}{६१}$ क्षेपे कृते ९९६४५।$\frac{३५}{६१}$ द्वितीयवीथीगतसूर्यसूर्ययोरंतरं स्यात् । एवं स्वस्वाभ्यन्तरे विष्कम्भे द्विगुणदिनगतिक्षेपं ५।$\frac{३५}{६१}$ कृत्वा उत्तरोत्तरसूर्यसूर्ययोरंतरं ज्ञातव्यं । विक्खंभे-त्यादिनाभ्यन्तरविष्कम्भस्य परिधिमानीय तस्मिन् अभ्यन्तरवीथीपरिधौ ३१५०८९ द्विगुणदिनगतिं $\frac{३४०}{६१}$ परिधिं विस्तम्भ $\frac{३४०}{६१}$ वर्गादशगुण $\frac{११५६००}{६१ \; ६१}$ करणी $\frac{१०७५}{६१}$ त्यादिनानीय निजहारेण भक्त्वा १७।$\frac{३८}{६१}$ निक्षिप्ते ३१५१०६।$\frac{३८}{६१}$ द्वितीयवीथीपरिधिः स्यात् । अमुमेव द्विगुणदिनगतिपरिधिं पूर्वपूर्वपरिधौ क्षेपे कृते उत्तरोत्तरवीथीपरिधिः स्यात् । एवमुक्तप्रकारेण दिनगतिक्षेपात् द्विगुणदिनगतिक्षेपात् द्विगुणदिनगतिपरिधिक्षेपाच्च सुरगिरिसूर्यांतरं परिधिं च साधयेत्क्रमशः ॥ ३७८ ॥

अथैवमुक्तपरिधौ परिभ्रमतः सूर्यस्य दिनरात्रिहेतुत्वं तयोः प्रमाणं च भागाश्रयेणाह,—

सूरादो दिणरत्ती अट्ठारस बारसा मुहुत्ताणं ।
अब्भंतरम्हि एदं विवरीयं बाहिरम्हि हवे ॥ ३७९ ॥

सूर्यात् दिनरात्री अष्टादश द्वादश मुहूर्तानाम् ।
अभ्यन्तरे एतत् विपरीतं बाह्ये भवेत् ॥ ३७९ ॥

सूरादो । सूर्यात् मुहूर्तानामष्टादश द्वादशसंख्ये द्वे यथासंख्यं दिनरात्री स्यातां । क्वेति चेत्, अभ्यन्तरपरिधौ एतदेव विपरीतं बाह्यपरिधौ भवेत् ॥ ३७९ ॥

अथ सूर्यस्यावस्थितिस्वरूपं दिनवृद्धिहानिचयं चाह,—

कक्कडमयरे सव्वब्भंतरबाहिरपहट्ठिओ होदि ।
मुहभूमीण विसेसे वीथीणंतरहिदे य चयं ॥ ३८० ॥

कर्कटमकरे सर्वाभ्यंतरबाह्यपथस्थितो भवति ।
मुहूर्ताभ्यां विशेषे वीथीनामंतराहिते च चय ॥ ३८० ॥

कक्काढ । कर्कटके मकरे च यथासंख्यं सर्वाभ्यन्तरपथस्थितो बाह्यपथस्थितश्च भवति सूर्यः । अथ तद्राशिसमाप्तिपर्यंतं किं तावन्तेव १८।१२ तिष्ठतीत्याशंक्य प्रतिदिने हानिचयोऽस्तीत्याह । मुहू १२ भूम्यो १८ विशेषे ६ व्यणीकृत १८३ वीथ्यंतराणां दिनरूपाणां षण्मुहूर्ता यदि एकवीथ्यन्तरस्य कियन्मुहूर्ता इति संगतेनाप्तेन वीथीनामन्तरेण १८३ इत $\frac{६}{१८३}$ भागाभावात् त्रिभिरपवर्तिते च $\frac{२}{६१}$ प्रतिदिने हानिचयो भवति ॥ ३८० ॥

अथैवमुक्तदिनरात्र्योस्तापतमसो वर्तमानकालत्वात् तत्तापक्षेत्रप्रमाणं निरूपयन् श्रावणमाघमासादीनां दक्षिणोत्तरायणं निरूपयति;—

सायणमाघे सव्वब्भंतरबाहिरपहट्ठिओ होदि ।
सूरट्ठियमासस्स य तावतमा सव्वपरिहीसु ॥ ३८१ ॥

श्रावणमाघे सर्वाभ्यन्तरबाह्यपथस्थितो भवति ।
सूर्यस्थितमासस्य च तापतमसी सर्वपरिधिषु ॥ ३८१ ॥

सायण । श्रावणमासे माघमासे यथासंख्यं सर्वाभ्यन्तरपथबाह्यपथस्थितो भवति सूर्यः । तस्य सूर्यस्थितमासस्य तापतमसी सर्वपरिधिष्वानेतव्ये । षण्णां मासानामेतावत्सु दिनेषु १८३ श्रावणादेकादिमासानां किमिति सपात्यापवर्तिते तत्तन्मासानां दिनसंख्या । श्रा $\frac{६}{}$ भा ६१ आ $\frac{}{}$ का १०२ मा पु १८३ मा $\frac{६}{}$ फा ६१ चै $\frac{१८}{}$ वै १०२ ज्ये आ १८३ इत्यादयेव दक्षिणायनोत्तरायणदिनानि स्युः ॥ ३८१ ॥

अथ सर्वपरिधिषु तापतमसोरानयनप्रकारमाह,—

गिरिअब्भतरमज्झिमबाहिरजलछट्ठभागपरिहिं तु ।
सट्ठिहिदे सूरट्ठियमुहुत्तगुणिदे दु तावतमा ॥ ३८२ ॥

गिर्यभ्यन्तरमध्यमबाह्यजलषष्ठभागपरिधिं तु ।
षष्टिहिते सूर्यस्थितमुहूर्तगुणिते तु तापतमसी ॥ ३८२ ॥

गिरि । गिरिविष्कम्भ १०० ० एतावानेव जम्बूद्वीपप्रमाणे १०००० द्वीपचारक्षेत्र १८० द्विगुणीकृत्य ३६० अपनीते अभ्यन्तरवीथीविष्कम्भ, ९९६४०, चारक्षेत्र ५१० मर्धीकृत्य २५५ अस्मिन् द्वीपचारक्षेत्र १८० मपनीय ७५ इदमुभयपार्श्वार्थं द्विगुणीकृत्य १५० जम्बूद्वीपे १ ल मिलिते १००१५० मध्यमवीथीविष्कम्भ, लवणसमुद्रचारक्षेत्र ३३० मुभयपार्श्वार्थं द्विगुणीकृत्य ६६० जम्बूद्वीपे १ ल मिलिते १००६६० बाह्यवीथीविष्कम्भ । लवणसमुद्रप्रमाण २ ल षड्भिर्भक्त्वैवं ३३३३३$\frac{१}{३}$ पार्श्वद्वयार्थं द्विगुणीकृत्य ६६६६६$\frac{२}{३}$ शेषमपवर्त्य $\frac{२}{३}$ ॥ जम्बूद्वीपे निक्षिप्ते १६६६६६$\frac{२}{३}$ जलषष्ठभागविष्कम्भ स्यात् । एतान् पञ्चविष्कम्भान् धृत्वा "विक्खम्भवग्ग" इत्यादिना गिरिपरिधिं ३१६२२ अभ्यन्तरपरिधिं ३१-५०८९ मध्यमपरिधि ३१६७०२ बाह्यपरिधि ३१८३१४ जलषष्ठभागपरिधिं ५२७०४६ चानीय एतेषां गिरिपरिध्यादीनां मध्ये विवक्षितपरिधिं ३१६२२ मुहूर्तषष्ट्या विभज्य ५२७$\frac{१}{३०}$ यस्मिन् मासे सूर्यस्तिष्ठति तन्मासदिनरात्रिमुहूर्ते १८।१७।१६।१५।१४।१३।१२ गुणिते ९४८६ शेषे ३६ षड्भिरपवर्तिते $\frac{६}{१०}$ च इत्थं तस्मिन् मासे तापतमसी विषयक्षेत्रमागच्छति । विवक्षितपरिधिं ३१६२२ मुहूर्तषष्ट्या ६० विभज्य मासं प्रति मुहूर्तवृद्ध्या गुणिते ५२७$\frac{१}{३०}$ मासं प्रति क्षयहानि चयमागच्छति । मासं प्रत्येकमुहूर्तवृद्धिरिति कथं ? एकस्मिन् दिने मुहूर्तस्य द्व्येकषष्टिभागमात्र $\frac{२}{६१}$ हानिश्चय एकषष्टिदिनद्वयाय $\frac{२}{६१}$ कियद्धानिश्चयमिति

दैर्घ्यात्सर्वावर्तिने एकमुहूर्ते एक० १ । एवं कृत्वा षष्टिमुहूर्तानामेतावति क्षेत्रे १ने ३१६९९ एक मुहूर्तस्य कियत् क्षेत्रमिति सपातयापवर्तिते ५२७ मिदं ५२७,१ मार्गं प्रति क्षेत्रहानिप्रय स्यात् । इदं दक्षिणायने तत्तन्मासे तापक्षेत्रे अपनयेत् तम क्षेत्रे युञ्ज्यात् । उत्तरायण तत्तन्मासतापक्षेत्रे युञ्ज्यात् तम क्षेत्रे अपनयेत् । एवं कृत विवक्षितमासे विवक्षितपरिधौ तापतमसोर्विषय क्षेत्रमागच्छति ॥ ३८२ ॥

अथैतयोर्नीततापतमसोर्वर्तनाभेदमाह,—

परिधिम्हि जम्हि चिट्ठदि सूरो तस्सेव तावमाणदलं ।
बिंबपुरदो पसप्पदि पच्छाभागे य सेसद्धं ॥ ३८३ ॥

परिधौ यस्मिन् तिष्ठति सूर्यः तस्यैव तापमानदलम् ।
बिम्बपुरतः प्रसरति पश्चाद्भागे च शेषार्धम् ॥ ३८३ ॥

परिधि । यस्मिन् परिधौ सूर्यस्तिष्ठति तस्यैव तापप्रमाणदलं बिंबपुरतः प्रसरति, शेषार्धं पश्चाद्भागे प्रसरति ॥ ३८३ ॥

इदानीं तापतमसोर्हानिवृद्धिमाह;—

पणपरिधीयो भजिदे दसगुणसूरंतरेण जल्लद्धं ।
सा होदि हाणिवड्ढी दिवसे दिवसे य तावतमे ॥३८४॥

पञ्चपरिधिषु भक्तेषु दशगुणसूर्यान्तरेण यल्लब्धम् ।
सा भवति हानिवृद्धिर्दिवसे दिवसे च तापतमसोः ॥ ३८४ ॥

पण । षष्टिमुहूर्तानां पञ्चपरिध्यन्यतरप्रमितेषु क्षेत्रेषु गतेषु द्व्येकषष्टि १६१ मुहूर्तानां कियत् क्षेत्रमिति सपातेन पञ्चपरिधिषु दशगुणसूर्यान्तरेण १८३० भक्तेषु यल्लब्धं १७। ३ सा भवति हानिवृद्धिर्दिवसे दिवसे च ताप-तमसोः ॥ ३८४ ॥

इगिवीसछदालसय साहियमागम्म णिसहउवरिमिणो ।
दिस्सदि अउज्झमज्झे तेणूणो णिसहपासभुजो ॥३९०॥

एकविंशतिषट्चत्वारिंशच्छत साधिक आगत्य निषधोपरि इन ।
दृश्यते अयोध्यामध्ये तेनोन निषधपार्श्वभुज ॥ ३९० ॥

इगिवीसा एकविंशत्युत्तरषट्चत्वारिंशच्छत साधिक १४६२१ किं तत्साधिक, अ वचापयो शप $\frac{?}{?}$ परस्पराहारेणाध उपरि गुणयित्वा $\frac{?}{?}$ शेषित $\frac{?}{?}$ एवमनन साधिकमित्युच्यते । एतावन्निषधस्योपर्यागत्य इनो दृश्यते अयोध्यामध्ये उत्कृष्टपुण्य । निषधपार्श्वभुज २०१९८ तेनागतक्षेत्रेण १४६२१ न्यून अग्रे वक्ष्यमाण भवति ॥ ३९० ॥

णिसहुवरि गदव्व पणसगवण्णास पच देसूणा ।
तेत्तियमेत्त गत्ता णिसहे अत्थ च जादि रवी ॥ ३९१ ॥

निषधोपरि गन्तव्य पञ्चसप्तपञ्चाशत् पञ्चदेशोना ।
तावन्मात्र गत्वा निषधे अस्त च याति रवि ॥ ३९१ ॥

णिसहु । निषधोपरि गन्तव्य ५ च सप्त पञ्चाशत् पञ्च देशोना ५५७५ एतावन्मात्रमेव निषधस्योपरि गत्वा रवि अस्त याति ॥ ३९१ ॥

इदानीं प्रकृतचापानयनार्थं तद्बाणानयनप्रकारमाह,—

जम्बूचारधरूणो हरिवस्ससरो य णिसहबाणो य ।
इह बाणाणिह पुण अब्भतरवीहिवित्थारो ॥ ३९२ ॥

जम्बूचारधरोन हरिवर्षशर च निषधबाणश्च ।
इह बाणवृत्त पुन अभ्यन्तरवीथीविस्तार ॥ ३९२ ॥

जम्बूचार। अन्तयणा १६ गणा २ गुणिय ३२ आदिविहीणं ३१ रूऊणु नरभाजिय $\frac{?}{?}$ इति भागहारानाय एतावच्छलाकानां १९० एतावति क्षेत्रे

१०५६०० एतावद्धरिवर्षशलाकानां ३१ निषधशलाकानां च ६३ किय त्क्षेत्र-मिति गुणयित्वा गुणिते हरिवर्षबाण [illegible] निषधबाण [illegible] — एतौ हरिवर्षनिषधबाणौ समानच्छेदीकृत [illegible] जम्बूचारधरा १८० न्यूनौ चेत् [illegible] स्वस्वबाणानयन बाणौ स्यातां [illegible] । [illegible] — तयोर्वृत्तविष्कम्भ पुन जम्बूद्वीप १ ल ट चारक्षेत्र १८० द्विगुणीकृत्य ३६० अपनीते अभ्यन्तरवीथीविस्तारः स्यात् ९९६४० अमु विष्कम्भ समच्छेदीकृत्य [illegible] अमुं [illegible] हीण विक्खम [illegible] चउगुणिदिसुणा [illegible] इ उ आवक्र [illegible] । [illegible] बाणकदि [illegible] छगुणिदे [illegible] तस्य जुदे धणुकदी होदी २५०[illegible] [illegible] तन्मूलं १५८[illegible] स्वहारेण भक्त चेत् ८३३७५[illegible] शेष हरिवर्षचाप स्यात्। निषधस्य तावत् समच्छेदीकृते सति ९९६४० अथ विक्खमे [illegible] इसु [illegible] हीण विक्खभं [illegible] चउगुणिदिसुणा [illegible] हदे इ जीवकदी [illegible] बाणकदि [illegible] छगुणिदे [illegible] — तस्य जुदे धणुकदी होदि [illegible] — तन्मूल [illegible] एतस्मिन् स्वहारेण १९ भक्ते १२३७६८ शेष [illegible] निषधगिरिचाप स्यात्॥ ३९२॥

अथैवमानीतयोश्चापयोः किं कृत्यमित्याह,—

हरिगिरिधणुसेसद्ध पासभुजो सत्तसगतितेसीदी।
हरिवस्स णिसहधणू अटछस्सगतीसयार च ॥ ३९३ ॥

हरिगिरिधनुः शेषार्थं पार्श्वभुजः सप्तसप्तत्रियशीतिः ।
हरिवर्षं निषधधनुः अष्टषट्सप्तत्रिंशदुद्वादश च ॥ ३९३ ॥

हरि। हरिक्षेत्रधनुः ८३३७५[illegible] निषधगिरिधनुषि १२३७६८[illegible] शोधिते ४० ३९३[illegible] सति तदर्धे शलाक १ सपनाथार्धीकृत २०१९५

मेलयेत् । मिलितेषु तत्र याम अत्र नागनिकेकषष्टिभागप्रमाणा सं-
र्णा भवति ४९/६१ एवं कृते अभ्यन्तरपथादारभ्य चतुःपञ्चाशत्
द्वीपगते पञ्चत्रिंशत्या एकषष्टिभागे ३५/६१ वेदिकान्तर्द्वात्रिंशता एकषष्टि-
भागैश्च ३२/६१ सिद्धा भवति । द्वीपवेदिका सर्वा सूर्यस्य चतुःपञ्चाशत्
भवतीति तात्पर्यं बोद्धव्यम्। अतः पुरस्तात् वेदिकायोजनद्वयं २ मध्यमति-
क्रम्य सूर्यस्य एकः पथा ४८/६१ तत पुरस्तात् द्वापञ्चाशदेकषष्टिभागा
अवशिष्टा अन्तरं वृथा । एवं द्वीपवेदिकाभ्यन्तरव्यासगतद्वात्रिंशदेक-
षष्टिभागेभ्यः ३२/६१ आरभ्य चतुर्योजनप्रमाणं वेदिकापथेन समाप्तम् ॥ अथ
लवणसमुद्रे एतावति क्षेत्रे १/६१ यद्यक उदयस्तदा बाह्यपथवर्जितसमुद्रक्षेत्रे
३३० एतावति कियन्त उदया इति सम्पात्यापवर्तिते लब्धोदया अष्टादशशत
११८ शेषोदयाः। सप्ततिशतभागा १/७० एतेषु पूर्वक्षेत्रीकृतेषु योजनांशा
सप्ततिरेकषष्टिभागा ७०/६१ एतान् वेदिकासम्बन्धि पथान्तरगतेषु द्विपञ्चाशदेक-
षष्टिभागेषु ५२/६१ प्रक्षेप्य एकषष्ट्या विभक्ते लब्धं योजनद्वयं सम्पूर्णमन्तरप्रमाणं
स्यात् । अतः परं रविबिम्बसहितान्तरप्रमाणदिनगतिशलाका चरमान्तर-
पर्यन्ता अष्टादशोत्तरशतप्रमिता १,८ सुगमा तन्नोदयाश्च तावन्त एव
११८ ततः पुरस्तात् बाह्यपथव्यासे एक उदयः मिलिते सर्वे मिलित्वा लवण-
समुद्रे एकान्नत्रिंशशतमुदया ११९ एवं दक्षिणायने समस्तोदया त्र्यशीत्यु-
त्तरशतं १८३ अथोत्तरायणे लवणसमुद्रे रविबिम्बाधिकचारक्षेत्रमिदं
३३०।४८/६१ समच्छेदीकृत्य युक्ते एवं २०१७८/६१ एतावत्क्षेत्रस्य १७१/६१ यद्येका
१ दिनगतिशलाका तदा एतावत्क्षेत्रस्य २०१७८/६१ कियन्त्यो दिनगतिशलाका
इति सम्पात्य भक्ते ११८ शेषे ११८/१७१ अत्र रूपोनदिनगतिशलाकामात्रोदया
११७ कृत बाह्यपथोदयस्य दक्षिणायनसम्बन्धित्वेनाग्रहणात् । शेषांशेषु
११८/१७१ क्षेत्रीकृतेषु ११८/६१ अष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागान् ४८/६१ पौरस्त्यपथव्यासे
दद्यात् । तत्र एक उदय एवं समस्तलवणसमुद्रे उत्तरायणे उदया अष्टाद-
शोत्तरं शतं अवशिष्टा सप्ततिरेकषष्टिभागा ७०/६१ पारस्त्य अन्तरे देया इति

समुद्रस्य तत्र समासम । वक्रिकायां प्राग्गतिर्व एक उदय चतुरशीति
कपदिभागा ९ ६६ तत्र भागेषु द्वापचारादवशेषभागा ८१ मतुना तदेवदा
एवं समदवक्रिता भाजनदय २ प्रमितश्च तो सम्पूर्ण भवति । ३ त एकस्यां
दिवाने वेद उदय अथ दिवसविभागैरवशेषभागा ८१ अथ तत्प्रत्याशोदया
एव चतुर्याम्नदधिके वक्रिता वेत्र समासम । अथ वैदिकाम्भिनदीपचारक्षेत्रे
१५६ अभ्यन्तरपथप्रमाण ६६ न्यूने ६१ एतावत्प्रमाणस्य ६१ यद
का दिनगतशलाका १ तदा एतावत्प्रमाणस्य ६१ कियन्त्यो दिनगतिश
लाका इति सम्पाद्य भक्त ६२ लब्ध ३६ लब्धदिनगतिशलाका । शेषांशेषु
पूर्वदृष्टेष्वेकत्रस्थेषु ६१ एकस्मिन्नवशेषभागा द्वापवक्रिकास्वधस्यासे
देया, एवं पूर्व गत्वा पाद सम्पूर्णो भवति । शेषं तु वदपगता भक्तेषु
लब्धं योजनद्वय पुरस्तादन्तरं भ ति । तत एव द्विषष्टिप्रमिता दिनगति
शलाका उदयाश्च त त एव । अभ्यन्तरपथ एक उदय । एवं वक्रिकावर्जिते
द्वीपचारे मण्डले येन सह चतुःपञ्चदशा । एवं निष्क्रिया उत्तरायण उदया
स्यापि पुनर्गत १८३ सूर्यस्य गत च । चन्द्रस्याप्ययनविभागमकृत्वा
सामान्येन द्वीपचारक्षेत्रे १८० पञ्चोदया समुद्रचारे त ३३०।६६, दशा
द्या समस्त निष्क्रिया पञ्चदशोदया १५ अथ वक्रिकायने पथ चाप
पिण्डहाण इत्यादिना आनीते एतावति चन्द्रस्य दिनगति ते ने १५।५३।१
चन्द्र १ उदयस्तदा एतावति द्वीपचारक्षेत्रे १८० कियन्त उदय
इति सम्पाद्य भक्त लब्धोदयाश्चत्वार ४ शेष १२।४१ एतस्मिन्
शोदयस्य एतावति क्षेत्रे सति १५।५३ एतावदुदयांशस्य १२।६१।६२ किय ते
प्रमिति सम्पाद्य नियतपद य १३६ अस्मिन् चन्द्रपथव्यासप्रमाणं
६१ सहितं समच्छेदीकृत ५ गृहीत्वा द्वीपचारमान्तरस्य पुरस्तात्
पति दय तत्र उभय इति पञ्चसूदयेषु मध्ये अभ्यन्तरपथोदयस्य उत्तरा
यणारम्भ ध उवागमनात द्वीप चत्वार उदया शेषमिद १३ ६१ अस्मि
मधुनहागण भक्त २ प , एव इद पुरस्तादन्तरं दय । अथ समस्त

चारक्षेत्रमिदं ३३० [illegible] समच्छेदीकृत्य मिलिते एवं [illegible] एतावति क्षेत्र [illegible] यद्येक उदयस्तदा एतावति क्षेत्रे [illegible] कियन्त उदया इति सम्पात्य एकपदस्याऽपवर्त्य ते सप्तभिर्गुणयित्वा [illegible] भक्ते लब्धा उदया नव ९ शेषमिदं [illegible] पूर्ववत्क्षेत्रीकृत्य [illegible] अस्मात् चन्द्रबिम्बप्रमाणं [illegible] सप्तभि समच्छेदीकृत्य [illegible] गृहीत्वा बाह्यपथे देयं। एवं सति लवणसमुद्रे चन्द्रस्य दशोदया शेषं [illegible] स्वहारेण भक्त्वा यो २ शेषं [illegible] इदं शकले पञ्चमेऽन्तरे द्वीपगतांश यो ३३ शेषे [illegible] देयं। एवमुभयांशमेलनात् यो ३५ [illegible] पञ्चममन्तरं सम्पूर्णं भवति। एवं चन्द्रस्य दक्षिणायने द्वीपोदधयोर्मिलित्वा चतुर्दशोदया। अथोत्तरायणे समुद्रचारक्षेत्रे ३३० [illegible] प्राक्प्रक्रियया आनीता उदया नव ९ शेषोदयांशः। [illegible] पूर्ववत्क्षेत्रीकृता [illegible] अस्माच्चन्द्रबिम्बप्रमाणं [illegible] सप्तभि समच्छेदीकृत [illegible] गृहीत्वा बाह्यपथान्तरादारभ्य नवमान्तरस्य पौरस्त्ये पथव्यासे देयं तस्मिन्नेक उदय इति समुद्रे दशसूदयेषु बाह्यपथोदयस्य दक्षिणायनसम्बन्धित्वेनाग्रहणान्नवोदया। शेषं भक्त्वा यो २ [illegible] इदं दशमे अन्तरे देयं। एवं कृते समुद्रचारक्षेत्रं समाप्तं। अथ द्वीपचारक्षेत्रे उदया ४ शेषं [illegible] पूर्ववत् क्षेत्रीकृत्य [illegible] अस्मात् यो ३३ शेषे [illegible] एतत्समच्छेदीकृत्य युक्तं [illegible] गृहीत्वा दशमे अन्तरे देयं। इत्थं दशममन्तरं परिपूर्णं भवति। अवशिष्टं [illegible] उपपथश्च सप्तभिरपवर्त्य [illegible] इदमभ्यन्तरपथव्यासे देयं अभिन्नेक उदय एवं द्वीपे चन्द्रस्य उत्तरायणे पञ्चोदया। अत्र सूर्यचन्द्रम उत्तरायणे उदयविभाग सूत्रकारैरनुक्तोऽपि दक्षिणायनोदयमार्गानुसारेण अभिव्युत्पन्नैर्व्याख्यातारैः कथितं ॥ ३९६ ॥

इदानीं दक्षिणोत्तरोभयावधेर्यु सूर्यातापस्य क्षेत्रविभागमाह,—

मन्दरगिरिमज्झादो जावय लवणुवहिछट्ठभागो दु।
हेट्ठा अट्ठरससया उवरि सयजोयणा ताओ ॥ ३९७ ॥

मन्दरगिरिमध्यात् यावत् लवणोदधिषष्ठभागस्तु ।
अधस्तनो अष्टादशशतानि उपरि शतयोजनानि ताप ॥ ३९७ ॥

मन्दर । अभ्यन्तरवीथी स्थितस्य सूर्यस्य जम्बूद्वीपार्द्धं ५०००० द्वीपचारक्षेत्र १८० मपनीत शेषं ४९८२० मन्दरमध्यादारभ्य अभ्यन्तरवीथी पर्यन्तं उत्तरताप विद्धि । लवणोदधिं २०००००, षड्भिर्भक्त्वा ३३३३३ शेष ⅓ अत्र द्वीपचारक्षेत्रे १८० मेलने ३३५१३ हो ⅓ अभ्यन्तरवीथ्या आरभ्य लवणसमुद्रषष्ठभागपर्यन्तं दक्षिणताप विद्धि । सूर्यबिम्बादधस्तात् अष्टादशशतानि १८०० योजनानि अधस्ताप विद्धि । तद्बिम्बस्योपरि शतयोजनानि ऊर्ध्वताप विद्धि ॥ ३९७ ॥

अथेदानीं चन्द्रादित्यग्रहाणां नक्षत्रभुक्तिं प्रतिपादयितुकामस्तावदेकैकनक्षत्रसम्बन्धिनीमाकाशखण्डमाह,—

अभिजिस्स गगणखंडा छस्सयतीस च अवरमज्झपरे ।
छप्पण्णरसे छच इगिदुतिगुणपणयुतसहस्सा ॥ ३९८ ॥

अभिजित् गगनखण्डानि षट्शतत्रिंशत् [illegible] अवरमध्यवराणि ।
षट्पञ्चदशे षट् एकद्वित्रिगुणपञ्चयुतसहस्राणि ॥ ३९८ ॥

अभिजिस्स । अभिजित गगनखण्डानि षट्शतत्रिंशत् ६३० जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्र यथाक्रम ष ६, द्वं पंचदश १५ षट् ६ प्रमाणे यथासंख्यं एकद्वित्रिगुणितपंचयुतसहस्रे गगनखण्डानि ज १००५ म २०१० उ २०१५ ॥ ३९८ ॥

अथ तानि जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणि गाथाद्वयेनाह,—

सदभिस भरणी अद्दा सादि असिलेस्स जेट्ठमवर वरा ।
रोहिणि विसा पुणव्वसु तिउत्तरा मज्झिमा सेसा ३९९

शतभिषा भरणी आर्द्रा स्वाति आश्लेषा ज्येष्ठा अवराणि वराणि।
रोहिणी विशाखा पुनर्वसु त्र्युत्तरा मध्यमा शेषा ॥ ३९९ ॥

सदभिस । शतभिषक् शतविशाखेत्यर्थः भरणी आर्द्रा स्वाति अश्लेषा ज्येष्ठा इत्यवरनक्षत्राणि ६ वराणि ३ रोहिणी विशाखा पुनर्वसु त्र्युत्तरा उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा उत्तरभाद्रपदेत्यर्थः शेषा तारा मध्यमा ॥३९९॥

अथ ता शेषा का इत्याह,—

अस्सिणिकित्तियमियसिर पुस्समहाहत्थ चित्त अणुराहा
पुव्वतिय मूल सवणा सधणिट्ठा रेवदी य मज्झिमया ४००

अश्विनी कृत्तिका मृगशीर्षा पुष्य मघा हस्त चित्रा अनुराधा।
पूर्वत्रिका मूल श्रवण धनिष्ठा रेवती च मध्यमा ॥ ४०० ॥

अस्सिणि । अश्विनी कृत्तिका मृगशीर्षा पुष्य मघा हस्त चित्रा अनुराधा पूर्वत्रिका पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदेत्यर्थः । मूल श्रवण धनिष्ठा रेवतीति मध्यमास्ताराः ॥ ४०० ॥

अथोक्तानि गगनखण्डानि पिण्डीकृत्य चन्द्रादित्यनक्षत्राणां परिभ्रमणकालमाह,—

दोचदाण मिलिदे अट्ठसय णवसहस्समिगिलक्खं ।
सगसगमुहुत्तगदिणभखंडाहिदे परिधिगमुहुत्ता ॥ ४०१ ॥

द्विचन्द्रयो मिलिते अष्टशतं नवसहस्र एकलक्षं।
स्वस्वमुहूर्तगतिनभखण्डहृते परिधिमुहूर्ताः ॥ ४०१ ॥

दोचदाण । जघन्यमध्यमोत्कृष्टनभखण्डानि ज१००५ म २०१० उ
[illegible]

एतानि रविमण्डलानि ७ त्रिनित्रण्ट६३० सहितानि तथापि मेरुदिशा ५४९००
चन्द्रप्राप्य द्विगुणीकृत्य मिलितानि समुदितानि अन्तर्गतं नवतः
देवस्य १०९८०० प्रमाणानि भवन्ति। एतेषु स्वकीयमुहूर्तगतिप्रमाण
मध्ये दवेषु सत्सु। कथं इत्यमिति चेदुच्यते। एतावता मण्डलानां गतौ
१७६८ एकस्मिन् मुहूर्ते इयता मण्डलानां गतौ १०९८०० किंयन्तो मुहूर्ता
इति त्रैराशिके कृते च लब्ध परिधिभ्रमणकाल मुह२ शेषं ३८१/१७६८ अपवर्तिते
१७/२२१ लब्धमुहूर्तांशाः। एवमादित्यस्य त्रैराशिकेन यथा १८३० फ १
इ १०९८०० लब्ध मु ६० अयमादित्यस्य परिभ्रमणकालः। यथा
१८३५ फ=मु १ इ १०९८०० लब्ध मु ५९ शे ३०७/३६७
पर्यन्तिर्वर्तिते ३०७/३६७ मुहूर्तांशाः अथ नक्षत्रस्य परिभ्रमणकाल
एवं सति परिधिगतमुहूर्ता भवन्ति ॥ ४०१ ॥

अथ ताः स्वकीयपर्ययमुहूर्तगतय का इत्याह —

अट्ठी सत्तरसयमिंदू छायाट्ठि पचअहियकम ।
गच्छन्ति सूरिरिक्खा णभखण्डाणिगिमुहुत्तेण ॥४०२॥

अष्टषष्टि सप्तदशशतानि इन्दु पञ्चषष्टि पञ्चाधिकक्रमाणि ।
गच्छन्ति सूर्यऋक्षाणि नभःखण्डानि एकमुहूर्तेन ॥ ४०२ ॥

अट्ठी। अष्टषष्टि सप्तदशशतगगनखण्डानि इन्दु १७६८ तान्येव
द्विषष्ट्या ६२ अधिकान्यादित्य १८३० तान्यत्र पुन पञ्चाधिकक्रमाणि
नभःखण्डानि नक्षत्राणि गच्छन्ति १८३५ एकमुहूर्तेन ॥ ४०२ ॥

अथ चन्द्रादित्यानामन्तरानां गमनादि विशेषस्वरूपमाह,—

चन्दा मंदा गमणे सूरो सिग्घो तदा गहा तत्तो ।
तत्तो रिक्खा सिग्घा सिग्घयरा तारया तत्तो ॥ ४०३ ॥

चद्रो मदो गमने सूर शीघ्र ततो ग्रहा तत ।
तत नक्षत्राणि शीघ्राणि शीघ्रतरा तारका तत ॥ ४०३ ॥

चदो मदो । चन्द्रो मन्दो गमने तत सूर्य शीघ्र ततो ग्रहा शीघ्रा ततो नक्षत्राणि शीघ्राणि तत शीघ्रतरास्तारका ॥४०३॥

अथ साम्प्रत चन्द्रादित्ययोर्नक्षत्रभुक्तिमाह,—

इदुरवीदो रिक्खा सत्तट्ठी पच गगणखडहिया ।
अहियहिदरिक्खखडा रिक्खे इदुरविअत्थणमुहुत्ता॥४०४

इदुरवित नक्षत्राणि सप्तषष्टि पच गगनखडाधिकानि ।
अधिकहितनक्षत्रखडानि नक्षत्रे इदुरविअस्तमनमुहूर्ता ॥ ४०४ ॥

इंदुरवी । इन्दुरविगमनखण्डेभ्य यथाक्रम १७६८ रवि १८३० नक्षत्राणि सप्तषष्टिगगनखण्डै ६७ पचगगनखडैरधिकानि१८३५ एकस्यां वेलायां गमनं प्रारभ्य चन्द्रो नक्षत्राणि च एकस्मिन् मुहूर्ते स्वस्वगमनखण्डसमाप्तिकरणे चन्द्रो नक्षत्राप्तसप्तषष्टिखण्डानि पुरभागे अपसरति एतदपसरणं धृत्वा एतावद धिकखण्डा ६७ पसरणे यद्येको मुहूर्तस्तदा एतावत् अभिजित्खण्डा ६३० पसरणे कियन्तो मुहूर्ता स्युरिति त्रैराशिकविधिना अधिकेन ६७ अभिजिदा दिजघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्रखण्डेषु अभिजित ६३० जघ १००५ म २०१० उ ३०१५ हतेषु तत्तन्नक्षत्रे इन्दुरव्यो आसन्नमुहूर्ता स्यु अभिजितो मु ९ भा २१/६७ ज १५ म ३० उ ४५ अथ चन्द्रनक्षत्रे त्रिंशन्मुहूर्तानाम कस्मिन् दिने इयन्तो १५ मुहूर्ताना किमिति संपात्य पंचदशाभिरपवर्तिते दृष्टवदिन १/२ म दिन १ उ=न=मु=४५ एतद्दिनं धृत्वा पंचदशाभिरपवर्तिते एव , एवमनादित्यस्य नक्षत्राणां भुक्तिकाला ज्ञातव्य । अभिजितः दि=४। मु ६ ज-दि ६ मु=२१ म-दि १३। मु १२। उ=दि २० मु ३ ॥४०४॥

अथ राहुगगनखण्डाभिधानद्वारेण तस्य नक्षत्रभुक्तिमाह,—

रविसंवच्छरादो बारसभागेण वज्जदे जद्दो राहू ।
तम्हा तत्तो दिवसा बारहिदिगिसट्ठिसट्ठहिया ॥४०५॥

रविसंवत्सरात् द्वादशभागेन मन्दानि यतो राहुः ।
तस्मात्ततः दिनानि द्वादशाहितैकषष्ठिषष्ठ्यधिकानि ॥ ४०५ ॥

रविगगनखण्डेभ्यः १८३० द्वादशभागे ६२ नैमाकखण्डानि १८२९ हो ६२ एकस्मिन्मुहूर्ते व्रजति राहुर्यत तस्मात् ततो राहुगगनखण्डेभ्यः १८२९ हो ६२ गमखण्डानि १८३५ द्वादशहतैकषष्टिखण्डाधिकानि ६२ । एतावदधिकं कथं ? राहुगगनखण्डानि १८२९ । ६२ नक्षत्रगगनखंडेषु १८३५ अपनीय शेषं ६ तच्छेदेन ६२ समच्छेदीकृत्य ६२ अत्र तच्छेद ६२ अप नीते सति अधिकखण्डस्य प्रमाणं भवति । ६२ एतदधिकं धृत्वा अधिकाधिक खिण्डखण्डरिति न्यायेन राहोरेतावन्तौ खण्डानां ६२ अपसरणे एकस्मिन्मुहूर्ते १ एतावन्नक्षत्रखण्डानां ६३० किमिति सम्पात्य ६२ हारस्य हारं १२ राशिगुणकारं कृत्वा ६२ तानेव मुहूर्तान् त्रिंशता भागेन दिनानि कृत्वा ६२ । ६२ पश्चात् द्वाषष्टिगता सम षष्ठभिरपवर्त्या ६२ । ये नैव पुन स्त्रिंशदुत्तरषट्छतानि पञ्चभि सर्वे पंचभिरपवर्त्य ६२ इद स्वगुणकारेण २ गुणयित्वा ६२ भक्ते लब्धदिनानि ५ भागे ६२ ६२ राहोरभिजिति भुक्ति । एवमेव अपजघन्यमध्यमोत्कृष्टेन त्रिषु राहोर्भुक्तिरानेतव्या । ज दि ६ भागे ६२ म दि १२ भा ६२ उ दि १९ । भाग ६२ ॥ ४०५ ॥

अथ प्रकारान्तरेण राहोर्नक्षत्रमाह —

णक्खत्तसूरजोगजमुहुत्तरासिं दुवेहि सगुणिय ।
एक्कट्ठिहिदे दिवसा हवंति णक्खत्तराहुजोगस्स ॥४०६॥

[illegible] ॥ ४०[illegible] ॥

[illegible] ॥ ४०[illegible] ॥

अभिजिदादि तिसीदिसय उत्तरअयणम्मि होति दिवसाणि
अधिकदिणाण तिण्णि य गद दिवसा होंति इगि अयणे॥

अभिजिदादि [illegible] उत्तरायणस्य भवन्ति दिवसानि ।
अधिकदिनानां त्रीणि च गतदिवसानि भवन्ति एकस्मिन् अयने ४०७

अभिजिदादि । अभिजिदादीनां पुष्यान्तानां जघन्यमध्यमोत्कृष्टनक्षत्राणां [illegible] १८३ पुनरुत्तरायणस्य भवन्ति दिवसानि तस्योपरि अधिकदिनानि ननु । त्रीणि च गतदिवसानि भवन्ति एकस्मिन् अयने ॥ ४०७ ॥

अथाधिकदिनानामुत्पत्तिमाह,—

एक्कपहल्लंघणं पडि जदि दिवसिगिसट्ठिभागमुवलद्धं ।
किं तेसीदिसदम्मि सदि गुणिदे ते होंति अहियदिणा॥४०८

एकपथलङ्घनं प्रति यदि दिवसैकषष्टिभाग उपलब्धः ।
किं त्र्यशीतिशतस्येति गुणिते ते भवन्ति अधिकदिनानि॥ ४०८ ॥

एक्कपह । एकपथलङ्घनं प्रति यदि दिवसैकषष्टि [illegible] भागः उपलभ्यते तदा त्र्यशीतिशत १८३ दिवसानां किमिति सम्पात्यैकषष्ट्या तियगपवर्त्य

र्ग २ ... र्यो ... १ २ भवति । एवं दक्षिणायने वर्षे ... ...दिना
से ... ... एवं ... ...ति ३ मिनि
... २० ... ... पुनरपि
... ... ३ मिनिति ... ...
... । एवं ... ... वर्षादिपुनर्वसुपर्यन्तानां ... ...
... ... १५ दिनानि ३०
... ... १५ ... ... ॥ ४०८ ॥

अथ पुष्यमुक्ति ... ... —

रतिप... ...दिवस पुष्ये गमियुत्तरायणमवसी ।
ससदक्षिणआर्द्रासायणपाटे यदि रविस्म पटगपदे ४०९

... ... पुष्य गत्वा उत्तरायणसमाप्ति ।
... दक्षिणादि श्रावणमनिवपि एव प्रथमपदे ॥ ४०९ ॥

... । ... ... चतुर्दिवसा ४ न पुष्ये गत्वा उत्तरायण
... ... दिनानानीय ... तस्य समन्ताद्
... ... उत्तरायणसमाप्तौ दत्वा ...
... ... दक्षिणायनप्रवर्तके ... सति
... श्रावणमास प्रतिपदि एव प्रथमपद दक्षिणायनस्यादि अवशिष्टदो-
... ... द्वितीयपादे ... । एवम् ... ...मादित्यभुक्ति-
मानीय तत्र तत्र न रवे ... ... । एवमभिजितश्च ... भुक्तिमानीय ...
तस्यैव ... ... समर्पिते
सर्वत्र ... ... जघन्योत्कृष्टानां पंचदशभिरपवस्य मध्य
मानां तु ... ... तत्र तत्र न रवे स्थापयेत् । पुष्यस्य तु आदि
त्यस्येतावद्भुक्त ... ... दिने तदा पुष्ये आदित्यस्यैतावद्भुक्तौ
... ... आगतो भति ... पुष्ये

स्थापयेत् । एवं दक्षिणायने कर्त्तव्यम् । एवं राहोरभिजिदादिपुनर्वस्वन्तानां भुक्तिमानीय तत्र तत्र नक्षत्रे स्थापयेत् । पुष्ये तु राहुभुक्तिं आदित्यस्यैवाद्भुक्तौ $\frac{६}{५}$ राहोर्यद्येतावन्ति दिनानि $\frac{८०४}{१}$ तदा पुष्ये आदित्यस्यैवाद्भुक्तौ $\frac{२३}{५}$ राहो कियद्भुक्तिरिति सम्पात्यापवर्त्यानीय $\frac{२७६}{६१}$ उत्तरायणसमाप्तौ पुष्ये स्थापयेत् । प्राग्वद्दक्षिणायने कर्त्तव्यम् । एवमानीतेषु चन्द्रस्य नक्षत्रभुक्तिदिनेषु सर्वेषु समच्छेदीकृत्य मिलितेषु अयनदिनानि १३ मा $\frac{३५}{६१}$ भवन्ति उभयायनमेलने वर्षदिनानि २७ मा $\frac{९}{६१}$ भवन्ति । एवमादित्यस्यायनदिनानि १८३ वर्षदिनानि च ३६६ आनेतव्यानि । एवं राहोरयनदिनानि १८० वर्षं ४ दिनानि च ३६० आनेतव्यानि ॥ ४०९ ॥

अथाधिकमासप्रकारप्रतिपादनायमाह,—

इगिमासे दिणवड्ढी वस्से बारह दुवस्सगे सदले ।
अहिओ मासो पचयवासप्पजुगे दुमासहिया ॥ ४१० ॥

एकस्मिन् मासे दिनवृद्धिः वर्षे द्वादश द्विवर्षके सदले ।
अधिको मासः पञ्चवर्षात्मकयुगे द्विमासौ अधिकौ ॥ ४१० ॥

इगिमासे । एकस्मिन् मासे दिनैकवृद्धिः एकस्मिन्वर्षे द्वादशदिनवृद्धिः दलसहिते द्विवर्षे एकमासोऽधिकः पञ्चवर्षात्मके युगे द्वौ मासौ अधिकौ एक १ वर्षस्य द्वादश १२ दिनवृद्धौ सत्यां सदलद्विवर्षस्य $\frac{५}{२}$ कियन्ति दिनानि वर्द्धन्ते इति सम्पात्यापवर्त्तिते लब्धदिनानि ३० । एवं युगेऽपि द्रष्टव्यम् ।

प्राक्तनगाथार्थमेव गाथाष्टकेन विवृणोति,—

आसाढपुण्णमीए जुगणिप्पत्ती दु सावणे किण्हे ।
अभिजिम्हि चंदजोगे पाडिवदिवसम्हि पारम्भो ॥ ४११ ॥

आषाढपूर्णिमायां युगनिष्पत्तिः तु श्रावणे कृष्णे ।
अभिजिति चन्द्रयोगे प्रतिपद्दिवसे प्रारम्भः ॥ ४११ ॥

आसाढपुण्ण । आषाढमासि पूर्णिमापराह्णे उत्तरायणसमाप्तौ पत्रवर्षा स्मकयुगनिष्पत्ति तु पुन श्रावणमासकृष्णपक्षे अभिजिति चन्द्रयोगे प्रति पद्दिवसे दक्षिणायनप्रारम्भ स्यात् ॥ ४११ ॥

अथ कस्यां वीथ्यो कस्यायनस्य प्रारम्भ इति चेत्;—

पढमंतिमवीहीदो दक्खिणउत्तरदिगयणपारंभो ।
आउट्टी एगादी दुगुत्तरा दक्खिणाउट्टी ॥ ४१२ ॥

प्रथमान्तिमवीथीतः दक्षिणोत्तरदिगयनप्रारम्भः ।
आवृत्तिः एकादि द्विकोत्तरा दक्षिणावृत्तिः ॥ ४१२ ॥

पढमंतिम । प्रथमान्तिमवीथीतो यथासङ्ख्यं दक्षिणोत्तरा दिक् अयन प्रारम्भ ॥ एव दक्षिणायनस्योत्तरायनस्य च प्रथमा आवृत्ति स्यात् । तत्र एकाद्युत्तरा दक्षिणावृत्ति स्यात् ॥ ४१२ ॥

उत्तरायणावृत्ति कथमिति चेत्,—

उत्तरगा य दुआदी दुचया उभयत्थ पचयं गच्छो ।
विदिआउट्टी दु हवे तेरसि किण्हेसु मियसीसे ॥४१३ ॥

उत्तरगा च द्व्यादि द्विचया उभयत्र पञ्चकं गच्छ ।
द्वितीयावृत्ति तु भवेत् त्रयोदश्या कृष्णेषु मृगशीर्षायाम् ॥४१३॥

उत्तरगा । उत्तरावृत्ति द्व्यादि द्विचया स्यात् उभयत्र पञ्चक गच्छ द्वितीयावृत्तिस्तु भवेत् । कृष्णपक्षे त्रयोदश्यां मृगशीर्षायां ॥ ४१३ ॥

तृतीयायावृत्ति कथेति चेत्,—

सुक्कदसमीविसाहे तदिया सचमिगकिण्हरेवदिए ।
तुरिया दु पचमी पुण सुक्कचउत्थीए पुव्वफग्गुणिये ४१४

[illegible]

[illegible] ॥ २१४ ॥

[illegible]

[illegible]

दक्खिणअयण पंचमु [illegible] ।
[illegible] ॥ २१५ ॥

दक्षिणायने पंचम् [illegible] ।
[illegible] सुलग्न ॥ २१५ ॥

दक्खिणअयण । दक्षिणायने पंचम् [illegible] सूर्यस्य [illegible] ॥ २१५ ॥

उत्तरावृत्ति कथयति चेत्,—

माघे सत्तमि किण्ह हत्थे विणिवित्तिपदि दक्खिणअो।
विदिया सदभिसपुस्से चोत्थीए होदि तदिया दु ॥२१६॥

मघे सप्तम्यां कृष्णा हस्ते विनिवृत्ति पति दक्षिणतः ।
द्वितीया शतभिषि पुष्ये चतुर्थ्यां भवति तृतीया तु ॥ २१६ ॥

माघे सत्तमि । माघमास सप्तम्यां तिथौ कृष्णपक्ष हस्तनक्षत्रे विनि-
वृत्तिरिति दक्षिणायनन द्वितीयावृत्ति शतभिषानक्षत्र पुष्ये चतुर्थी
तिथौ भवति तृतीया स्वावृत्ति ॥ २१६ ॥

कथमिति चेत् —

पडिवदि किण्हे पुस्से चोत्थी मूले य किण्हतेरसिए ।
किसियरिक्खे सुक्के दसमीए पंचमी होदि ॥ ४१७ ॥

प्रतिपदि कृष्णे पुष्ये चतुर्थी मूले च कृष्णत्रयोदश्याम् ।
कृत्तिकायां शुक्ले दशम्यां पंचमी भवति ॥ ४१७ ॥

पडिवदि । कृष्णपक्षे प्रतिपदि तिथौ पुष्यनक्षत्रे स्यात् चतुर्थ्यावृत्तिः कृष्णत्रयोदश्यां मूलनक्षत्रे स्यात्, शुक्लपक्षे दशम्यां कृत्तिकायां तत्र पंचम्यावृत्तिर्भवति ॥ ४१७ ॥

उत्तरार्थं स्पष्टयति,—

ताओ उत्तरअयणे पणसु वासेसु माघमासेसु ।
आउट्टीओ भणिदा सूरस्सिह पुव्वसूरीहिं ॥ ४१८ ॥

ताः उत्तरायणे पञ्चसु वर्षेषु माघमासेषु ।
आवृत्तयः भणिताः सूर्यस्येह पूर्वसूरिभिः ॥ ४१८ ॥

ताओ उत्तर । ता एता आवृत्तय उत्तरायणे पञ्चसु वर्षेषु माघमासेषु पूर्वसूरिभिरिह सूर्यस्य भणिताः । उक्तगाथयोः स्थानोद्धारविधानमुच्यते । पञ्चवर्षात्मकयुगप्रारम्भस्य दक्षिणायनस्य पञ्चसु श्रावणमासेषु उक्ता एकत्रिंशत्तिथयस्तत्र तत्र संस्थाप्य प्रथमश्रावणे कृष्ण १५ शु १५ कृ १ द्वि=श्रा=कृष्ण =१ शु १५ कृ १३ तृ=श्रा=शु ६ कृ १५ शु १० । च=श्रा=कृ=९ शु १५ [illegible] ७ । पं=श्रा=शु=१२ कृ=१५ शु=४ उत्तरायणस्य पंचसु माघमासेषु एकत्रिंशत्तिथीः उक्तक्रमेण तत्र तत्र संस्थाप्य प्रथममाघमासे कृ=९ शु १५ कृ ७ द्वि=मा=शु=१४ कृ=१५ शु=४ । तृ=मा=कृ १५ शु=१५ कृ १। च=मा=कृ २ शु-१५ कृ-१ प-मा=शु १४ कृ=१५ शु=४ त=मा=

कृ=१५ शु=१५ कृ १। च=मा=कृ ३ शु=१५ कृ=१३। प=मा=शु=६ कृ=१५ शु=१० दक्षिणायने मध्ये माद्रपदादिमासेषु उत्तरायण मध्ये फाल्गुनादिमासेषु आद्यावेकहीनक्रमेण १४।१३।१२ अन्ये एकोत्तरक्रमेन २।३।४।५ एकत्रिंशत्तिथिषु स्थापितासु तस्मिन्मासे तत्र तत्रायने चाधिकदिनान्यागच्छन्ति। एवं क्रमेण पञ्चवर्षात्मके युगे द्वावधिकमासौ भवत ॥४१८॥

अथ दक्षिणोत्तरायणप्रारम्भेषु नक्षत्रानयनप्रकारमाह;—

रूऊणाउट्टिगुण इगिसीदिसद तु सहिद इगिवीस।
तियणहिदे अवसेसा अस्सिणिपहुदीणि रिक्खाणि४१९

रूपोनावृत्तिगुण एकाशीतिशतं तु सहितं एकविंशत्या।
त्रिनवहृते अवशेषाणि अश्विनीप्रभृतीनि ऋक्षाणि ॥ ४१९ ॥

रूऊणा। रूप १ न्यूनावृत्त्या गुणितं यथैकाशीत्युत्तरशतं १८१ एकस्मिन्नेकहीने शून्यमवशिष्यत इति तेन गुणितं सामिति शून्यमेव भवति। एकविंशत्या सहितं २१ एतस्मिन् त्रिनवेन २७ हृते सति अवशेषं अश्विनीप्रभृतितः गुण्यमानं दक्षिणायनप्रारम्भे श्रावणमासे नक्षत्रं भवति। दक्षिणायने इतरचतुर्षु श्रावणेषु उत्तरायणे पञ्चसु माघेषु तत्र तत्र नक्षत्राण्यानेतव्यानि ॥ ४१९ ॥

अथ दक्षिणोत्तरायणानां पर्वतिथ्यानयनसूत्रमाह,—

वेगाउट्टिगुण तेसीदिसद सहिद तिगुणगुणरूवे।
पण्णरभजिदे पव्वा सेसा तिहिमाणमयणस्स ॥४२०॥

व्येकावृत्तिगुणं त्र्यशीतिशतं सहितं त्रिगुणगुणरूपेण।
पञ्चदशभक्ते पर्वाणि शेषं तिथिमानं अयनस्य ॥ ४२० ॥

वेगाउट्टी। विगतैकावृत्त्या गुणितं त्र्यशीतिशतं त्रिगुणगुणकारेण प्रथमे शून्येन द्वितीयादौ त्रिगुणितावेकैकावृत्त्या सहितमित्यत्र रूपेण च सहितं

यत्तस्मिन् पञ्चदशभिर्भेदे सति ऊर्ध्वं पर्वाणि। अत्र भागाभावात्पर्वाभाव अवशेष १=तिथिप्रमाण दक्षिणोत्तरायणस्य ॥ ४२० ॥

अथ समानदिनरात्रिलक्षणे विषुपे पर्वतिथिनक्षत्राणि गाथापट्केन दर्शयन्नेवाह,—

छम्मासद्धगयाणं जोइसयाणं समाणदिणरत्ती।
तं इसुप पढमं छसु पव्वसु तीदेसु तदियरोहिणिए ॥

षण्मासार्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री।
तत् विषुपं प्रथमं षट्सु पर्वसु अतीतेषु तृतीयारोहिण्याम् ॥ ४२१॥

छम्मासद्ध। अयनलक्षणषण्मासार्द्धगतानां ज्योतिष्काणां समानदिनरात्री भवतः। तदेव विषुवमित्युच्यते। तत्र प्रथमं विषुवं षट्सु पर्वसु अतीतेषु तृतीयायां तिथौ रोहिणीनक्षत्रे भवति ॥ ४२१ ॥

विगुण णव पव्वऽतीदे णवमीए बिदियगं धणिट्ठाए।
इगितीसमदे तदियं सादीये पण्णरसमहिं ॥ ४२२ ॥

द्विगुणनवपर्वातीतेषु नवम्यां द्वितीयकं धनिष्ठायाम्।
एकत्रिंशद्गते तृतीयं स्वातौ पंचदश्याम् ॥ ४२२ ॥

विगुण। द्विगुणनव १८ पर्वस्वतीतेषु नवम्यां द्वितीयं विषुवं धनिष्ठायां स्यात्, एकत्रिंशत्पर्वस्वतीतेषु तृतीयं विषुवं स्वातिनक्षत्रे पंचदशतिथौ स्यात्। कृष्णपक्षसम्बन्धपञ्चदश्याममावास्यायामेवेत्यर्थ ॥ ४२२ ॥

तेदालगदे तुरियं छट्ठिपुणव्वसुगयं तु पंचमयं।
पणवण्णपव्वतीदे बारसिए उत्तराभद्दे ॥ ४२३ ॥

त्रिचत्वारिंशद्गतेषु तुरीयं षष्ठीपुनर्वसुगतं तु पंचमम्।
पंचपंचाशत्पर्वातीतेषु द्वादश्यां उत्तराभाद्रे ॥ ४२३ ॥

पणवण्णमव्व । त्रिचत्वारिंशत्पर्वस्वतीतेषु तुर्यं विषुप पञ्चम्यां तिथौ पुनर्वसुनक्षत्रगतं स्यात् । पञ्चमं विषुप पञ्चोत्तरपञ्चाशत्पर्वस्वतीतेषु द्वादश्या मुत्तराभाद्रपदे नक्षत्रे स्यात् ॥ ४२३ ॥

अडसट्ठिगदे तदिए मित्ते छट्ठं असीदिपव्वगदे ।
णवमिमघाए सत्तममिह तेणउदिगदे दु अट्ठमयं ॥४२४॥

अष्टषष्टिगतेषु तृतीयाया मैत्रे षष्ठं अशीतिपर्वगतेषु ।
नवमीमघाया सप्तम इह त्रिनवतिगतेषु तु अष्टमम् ॥ ४२४ ॥

अडसट्ठि । अष्टषष्टिपर्वसु गतेषु तृतीयाया तिथौ मैत्रे अनुराधायां षष्ठं विषुपं स्यात् । अशीतिपर्वसु गतेषु नवम्यां तिथौ मघानक्षत्रे सप्तमं विषुपं स्यात् । इह त्रिनवतिपर्वसु गतेषु अष्टमं विषुपम् ॥ ४२४ ॥

अस्सिणि पुण्णे पव्वे णवमं पुण पचजुदसए पव्वे ।
तीदे छट्ठितिहीए णक्खत्ते उत्तरासाढे ॥ ४२५ ॥

अश्विनी पूर्णे पर्वणि नवमं पुन पञ्चयुतशतेषु पर्वसु ।
अतीतेषु षष्ठीतिथौ नक्षत्रे उत्तराषाढे ॥ ४२५ ॥

अस्सिणि । अश्विनिनक्षत्रे अमावास्यायां पर्वणि स्यात् नवमं विषुपं पुन पञ्चयुतशतपर्वस्वतीतेषु षष्ठ्यां तिथौ उत्तराषाढे नक्षत्रे स्यात् ॥४२५॥

चरिमं दसमं विसुपं सत्तरसुत्तरसएसु पव्वेसु ।
तीदेसु बारसीए जायदि उत्तरगफग्गुणिए ॥ ४२६ ॥

चरमं दशमं विषुपं सप्तदशोत्तरशतेषु पर्वसु ।
अतीतेषु द्वादश्यां जायते उत्तराफाल्गुन्याम् ॥ ४२६ ॥

चरिमं दसमं । चरमं दशमं विषुपं सप्तदशोत्तरशतपर्वस्वतीतेषु द्वादश्यां तिथौ उत्तराफाल्गुन्यां नक्षत्रे जायते ॥ ४२६ ॥

अथ विषुपे पर्वतिथ्यानयनसूत्रमाह,—

बिगुणे सगिट्ठइसुपे रूऊणे छग्गुणे हवे पव्व ।
तप्पव्वद्दल तु तिथी पवट्टमाणस्स इसुपस्स ॥ ४२७ ॥

द्विगुणे स्वेष्टविषुपे रूपोने षड्गुणे भवेत् पर्व ।
तत्पर्वदलं तु तिथिः प्रवर्तमानस्य विषुपस्य ॥ ४२७ ॥

बिगुणे । द्विगुण स्वकीयेष्टविषुपे रूपोने षड्भिर्गुणिते सति पर्वसंख्या भवेत् । तत्पर्वदलप्रमाणे तु प्रवर्तमानस्य विषुपस्य तिथिः स्यात् । तस्मिन्पर्वदले पंचदशभ्य अधिके सति तैर्भक्त्वा लब्ध पर्वाणि मेलयेत् । अवशिष्टं तिथिप्रमाणं स्यात् ॥ ४२७ ॥

अथावृत्तिविषुपयोस्तिथिसंख्यामाह,—

वेगपद छग्गुणं इगितिजुद आउट्टिइसुपतिहिसंखा ।
विसमतिहीए किण्हो समतिथिमाणा हवे सुक्को ॥४२८॥

वेकपदं षड्गुणं एकत्रियुतं आवृत्तिविषुपतिथिसंख्या ।
विषमतिथौ कृष्णः समतिथिमानो भवेत् शुक्लः ॥ ४२८ ॥

वेगपद । एकहीनावृत्तिपदं षड्भिर्गुणयित्वा उभयत्र स्थाप्य तत्रैकस्मिन्नेकयुते सति अपरस्मिन् त्रियुते सति यथासंख्यमावृत्तिविषुपयोः तिथिसंख्या स्यात् । तयोर्मध्ये विषमतिथौ सत्यां कृष्णपक्षः स्यात् । समतिथिप्रमाणे शुक्लपक्षो भवति ॥ ४२८ ॥

विषुपे नक्षत्रं सर्वतिथीनां चानयनप्रकारमाह —

आउट्टिलद्धरिक्खं दहजुद छट्ठपदसमगेण ।
इसुपे रिक्खा पण्णरगुणपव्वाजुदतिही दिवसा ॥४२९

आवृत्तिऽव्धनक्षत्र दशायुत पद्माष्टदशमके एकोन ।
विषुपे नक्षत्राणि पचदशगुणपर्वयुततिथय दिवसानि ॥ ४२९ ॥

आउट्टि । आवृत्तौ लब्धनक्षत्र दशयुत कृत्वा तत्र पद्माष्टमदशमावृत्तौ एकेनोन चेत् विषुपे नक्षत्र स्यात् । पचदशभिर्गुणितानि आवृत्तिविषुपयो पर्वाणि तत्तत्तिथियुतानि चेत् यथासख्यमावृत्तिविषुपयो समस्तदिनानि भवन्ति ॥ ४२९ ॥

विषुपे नक्षत्रानयन प्रकारान्तरेण गाथाद्वयेनाह,—

आउट्टिरिक्खमस्सिणिपहुदीदो गणिय तत्थ अट्ठजुदे।
इसुपेसु होंति रिक्खा इह गणणा कित्तियादीदो॥४३०

आवृत्तिनक्षत्र अश्विनीप्रभृतित गणयित्वा तत्र अष्टयुते ।
विषुपेषु भवति नक्षत्राणि इह गणना कृत्तिकादित ॥ ४३० ॥

आउट्टि । आवृत्तिनक्षत्रमश्विनीप्रभृतित गणयित्वा तत्र अष्टयुते सति विषुपेषु नक्षत्राणि भवन्ति । इह लब्धे गणनां कृत्तिकादित कुर्यात् अष्टयुतराशिरधिकश्चेत् ॥ ४३० ॥

अहियकादडवीसं छड्डेज्जो विदियपचमट्ठाणे ।
एक्क णिक्खिव छट्ठे दसमे विय एक्कमवणिज्जो ॥४३१॥

अधिकात्कादष्टविंशं त्याज्या द्वितीयपचमस्थाने ।
एक निक्षिप षष्ठे दशमेपि च एकमपनेयम् ॥ ४३१ ॥

अहियं । अधिकात्कादष्टविंशतिस्त्याज्या । द्वितीयपचमावृत्तिस्थाने एकं निक्षिप षष्ठ दशमेऽपि चावृत्तिस्थाने एकमपनेयं ॥ ४३१ ॥

गाथाद्वयेन नक्षत्रनामान्याह,—

कित्तियरोहिणिमिगसिर अद्दपुणव्वसुसपुस्सअसिलेस्सा।
मह पुव्वुत्तर हत्था चित्ता सादी विसाह अणुराहा ॥

कृत्तिका रोहिणी मृगशीर्षा आर्द्रा पुनर्वसु सपुष्य आश्लेषा ।
मघा पूर्वा उत्तरा हस्त चित्रा स्वाति विशाखा अनुराधा ४३२

कित्तिय । कृत्तिका रोहिणी मृगशीर्षा आर्द्रा पुनर्वसु पुष्य आश्लेषा मघा पूर्वा उत्तरा हस्त चित्रा स्वाति विशाखा अनुराधा ॥ ४३२ ॥

जेट्ठा मूल पुव्वुत्तर आसाढा अभिजिसवणसधणिट्ठा ।
सो सदभिसपुव्वुत्तरभद्दपदा रेवदस्सिणी भरणी ॥४३३॥

ज्येष्ठा मूल पूर्वोत्तरी आषाढे अभिजित् श्रवण सधनिष्ठा ।
सह शतभिषा पूर्वोत्तरभाद्रपदा रेवती अश्विनी भरणी ॥ ४३३ ॥

जेट्ठा मूल । ज्येष्ठा मूलं पूर्वाषाढ उत्तराषाढ अभिजित् श्रवण धनिष्ठा सह शतभिषक् पूर्वाभाद्रपदा उत्तराभाद्रपदा रेवती अश्विनी भरणि ४३३

नक्षत्राणामधिदेवता गाथाद्वयेनाह,—

अग्गि पयावदि सोमोरुद्दो दिति देवमंति सप्पो य ।
पिदुभगअज्जमदिणयरतोट्ठाणिलिंदग्गिमित्तिंदा ॥४३४॥

अग्नि प्रजापति सोम रुद्र अदिति देवमन्त्री सर्पश्च ।
पितामग अर्यमा दिनकर त्वष्टा अनिलेन्द्राग्निमित्रेन्द्रा ॥ ४३४ ॥

अग्गि । अग्नि प्रजापति सोमो रुद्रोऽदिति देवमन्त्री सर्पश्च पिता भग । अर्यमा दिनकर त्वष्टा अनिल इन्द्राग्नि मित्र इन्द्र ॥ ४३४ ॥

तो णेरिदि जल विस्सो बह्मा विण्हू वसू य वरुणअजा।
अहिवड्ढि पूसण अस्सा जमो वि अहिदेवदा कमसो ४३५

तत नैर्ऋति जल विश्व ब्रह्मा विष्णु वसुश्च वरुण अज ।
अभिवृद्धि पूषा अश्व यमोऽपि अधिदेवता क्रमशः ॥ ४३५ ॥

अहिवड्ढि । ततो नैर्ऋति जलो विश्वो ब्रह्मा विष्णु वसुश्च वरुण अज अभिवृद्धि पूषा अश्व यमोप्येते कृतिकादीनां अधिदेवता क्रमशः ॥ ४३५ ॥

नक्षत्राणां स्थितिविशेषविधानमाह,—

कित्तियपडतिसमये अट्ठम मघारिक्खमेदि मज्झण्हं।
अणुराहारिक्खुदओ एव सेसे वि भासिज्जो ॥ ४३६ ॥

कृत्तिकापतनसमये अष्टम मघाऋक्षं एति मध्याह्नम्।
अनुराधाऋक्षोदय एवं शेषेषु अपि भाषणीयम् ॥ ४३६ ॥

कित्तिय । कृत्तिकापतनसमयेऽस्तसमये इत्यर्थः । तस्याष्टमं मघाऋक्षं मध्याह्नमेति तस्या मघाया सकाशात् अष्टममनुराधानक्षत्रमुदयमेति । एवं शेषेषु रोहिण्यादिषु अस्तमितनक्षत्रादष्टमनक्षत्रं मध्याह्नमेति । तस्मादष्टमं नक्षत्रमुदयमेतीति भाषणीयम् ॥ ४३६ ॥

चन्द्रस्य पञ्चदशमार्गेषु अस्मिन्नस्मिन् मार्गे एतान्येतानि नक्षत्राणि तिष्ठन्तीति गाथात्रयेणाह,—

अभिजिणव सादिपुव्वुत्तरो य चंदस्स पढममग्गम्हि ।
तदिए मघापुणव्वसु सत्तमिए रोहिणी चित्ता ॥४३७॥

अभिजिन्नव स्वाति पूर्वोत्तरा च चन्द्रस्य प्रथममार्गे ।
तृतीये मघापुनर्वसू सप्तमे रोहिणी चित्रा ॥ ४३७ ॥

अभिजिण। अभिजिदादि नव स्वाति पूर्वा उत्तरचन्द्रस्य प्रथममार्गो-परित्तप्रदेशे चरन्ति। तृतीये मार्गे मघापुनर्वसू चरतः। सप्तमे मार्गे रोहिणी चित्रा च चरतः ॥ ४३७ ॥

छट्ठट्ठमदसमेयारसमे किंत्तिय विसाह अणुराहा
जेट्ठा कमेण सेसा पण्णारसमम्हि अट्ठेव ॥ ४३८ ॥

षष्ठाष्टमदशमैकादशे कृत्तिका विशाखा अनुराधा।
ज्येष्ठा क्रमेण शेषाणि पञ्चदशे अष्टैव ॥ ४३८ ॥

छट्ठट्ठमदसमे। षष्ठाष्टमदशमैकादशे मार्गे कृत्तिका विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा क्रमेण चरन्ति। शेषाण्यष्टैव नक्षत्राणि पञ्चदशे मार्गे चरन्ति ॥४३८॥

शेषनक्षत्राणि कानीति चेत्,—

हत्थ मूलतियं विय मियसिरदुगपुस्सदोण्णि अट्ठेव।
अट्ठपहे पक्खत्ता तिट्ठंति हु बारसादीया ॥ ४३९ ॥

हस्तः मूलत्रयं अपि मृगशीर्षद्विकं पुष्यद्वयं अष्टैव।
अष्टपथे नक्षत्राणि तिष्ठंति हि द्वादशादीनि ॥ ४३९ ॥

हत्थ मूल। हस्तः मूलत्रयं मूलपूर्वाषाढोत्तराषाढमित्यर्थः। मृगशीर्षद्विकं मृगशीर्षार्द्रमित्यर्थः। पुष्यद्वयं पुष्याश्लेषेत्यर्थः। इत्यष्टैव एतानि नक्षत्राणि प्रथमादिपथेषु द्वादशादीनि अष्टसु पथेषु तिष्ठन्ति ॥ ४३९ ॥

नक्षत्राणां तारासंख्यां गाथाद्वयेनाह,—

किंत्तिय पहुदिसु तारा छप्पण तियएक्क छत्ति छक्क चऊ।
दोदो पचेकेक्कं चउ छत्तियणवचउक्क चऊ ॥ ४४० ॥

कृत्तिकाप्रभृतिषु तारा षट् पंच तिस्र एका षट् त्रिषट्चतु।
द्वे द्वे पंच एकैका चतुःषट् त्रिनवचतुष्क चतस्र ॥ ४४० ॥

किंनिय । कृत्तिकाप्रभृतिषु तारा षट् पंच त्रिग एका षट् त्रिग षट् चतस्र द्वे द्वे पंच एकैका चतस्र षट् त्रिग नव चतुष्कायाम्र ॥ ४४० ॥

तिय तिय पंचेक्कारसहियसय दो दो कमेण बत्तीसा ।
पंच य तिण्णि य तारा अट्ठावीसाण रिक्खाणं ॥४४१॥

तिस्र तिस्र पंचैकादशाधिकशतं द्वे द्वे क्रमेण द्वात्रिंशत् ।
पंच च तिस्र च तारा अष्टाविंशानां ऋक्षाणाम् ॥ ४४१ ॥

तिय तिय। तिस्रस्तिस्र पंचैकादशाधिकशतं द्वे द्वे द्वात्रिंशत् पंच तिस्र इत्येतास्तारा क्रमेणाष्टाविंशतिनक्षत्राणां भवन्ति ॥ ४४१ ॥

तासां ताराणामाकारविशेषं गाथात्रयेणाह,—

वीयणसयडुद्धीए मियसिरदीवे य तोरणे छत्ते ।
वम्मियगोमुत्ते विय सरजुगहत्थुप्पले दीवे ॥ ४४२ ॥

वीजनशकटोद्धिका मृगशिरदीपे च तोरणे छत्रे ।
वल्मीकगोमूत्रे अपि शरयुगहस्तोत्पले दीपे ॥ ४४२ ॥

वीयण । वीजननिभा शकटोद्धिकानिभा मृगशिरोनिभा दीपनिभा तोरणनिभा छत्रनिभा वल्मीकनिभा गोमूत्रनिभा शरयुगनिभे हस्तनिभा उत्पलनिभा दीपनिभा ॥ ४४२ ॥

अधियरणे वरहारे वीणासिंगे य विच्छिए सरिसा ।
दुक्कयवावीहरिगजकुंभे मुरवे पततपक्खीए ॥ ४४३ ॥

अधिकरणे वरहारे वीणाशृंगे च वृश्चिकेन सदृशा ।
दुष्कृतवापीहरिगजकुंभेन मुरजेन पतत्पक्षिणा ॥ ४४३ ॥

अधियरणो। आधिकरणनिभा वराहारनिभा, वीणाशृङ्गनिभा वृश्चिकसदृशा दुष्कृतवापीनिभा हरिकुम्भनिभा गजकुम्भनिभा मुरजनिभा पतत्पक्षिनिभा ॥ ४४३ ॥

सेणागयपुव्वावरगत्ते णावा हयस्स सिरसरिसा ।
चुल्लीपासाणणिमा कित्तियआदीणि रिक्खाणि॥४४४॥

सेनागजपूर्वापरगात्र नावा हयस्य शिरसा सदृशा ।
चुल्लीपाषाणनिभा कृत्तिकादीनि ऋक्षाणि ॥ ४४४ ॥

सेणोगय । सेनानिभा गजपूर्वगात्रनिभा गजापरगात्रनिभा नावानिभा हयस्य शिर सदृशा चुल्लीपाषाणनिभास्तारा कृत्तिकादीनि नक्षत्राणि भवन्ति ॥ ४४४ ॥

कृत्तिकादीनां परिवारतारा आह,—

एक्कारसयसहस्सं सगसगतारापमाणसंगुणिदं ।
परिवारतारसंखा कित्तियणक्खत्तपहुदीणं ॥ ४४५ ॥

एकादशशतसहस्रं स्वकस्वकतारापमाणसंगुणितम् ।
परिवारतारासंख्या कृत्तिकानक्षत्रप्रभृतीनाम् ॥ ४४५ ॥

एक्कारसय । एकादशोत्तरशताधिकसहस्रं ११११ स्वकीयस्वकीयताराप्रमाणसंगुणितं चेत् कृत्तिकानक्षत्रप्रभृतीनां परिवारतारासंख्याप्रमाणं स्यात् ॥ ४४५ ॥

पंचप्रकाराणां ज्योतिष्कदेवानामायुःप्रमाणमाह;—

इंदिणसुक्कगुरिदरे लक्खसहस्सा सयं च सहपल्लं ।
पल्लं दलं तु तारे वराबरं पादपादद्धं ॥ ४४६ ॥

नवानुदिशविमानानां पञ्चानुत्तरविमानानां च नामानि गाथाद्वयेनाह;—

अच्चीय अच्चिमालिणि वइरे वइरोयणा अणुद्दिसगा ।
सोमो य सोमरूवे अंके फलिके य आइच्चे ॥ ४५६ ॥

अर्चि अर्चिमालिनी वैरो वैरोचनानि अनुदिशकानि ।
सोमश्च सोमरूप अङ्क स्फटिक च आदित्य ॥ ४५६ ॥

अच्चीय । अर्चिरर्चिमालिनी वैरा वैरोचनाख्यानि चत्वारि श्रेणीबद्धानि दिग्गतानि । सोमसोमरूपाङ्कस्फटिकाख्यानि चत्वारि विदिग्गतानि प्रकीर्णकानि । आदित्य मध्येन्द्रक एतानि नवानुदिशाख्यानि ॥ ४५६ ॥

विजयो दु वेजयंतो जयंत अवराजिदो य पुव्वाई ।
सव्वट्ठसिद्धिणामा मज्झम्मि अणुत्तरा पंच ॥ ४५७ ॥

विजयस्तु वैजयन्त जयन्त अपराजितश्च पूर्वादय ।
सर्वार्थसिद्धिनामा मध्ये अनुत्तरा पंच ॥ ४५७ ॥

विजयो दु । विजयो वैजयन्तो जयन्त अपराजितश्च पूर्वादिदिग्गतविमानाख्या मध्ये सर्वार्थसिद्धिनामेन्द्रक । एते पंच अनुत्तरविमाना ॥ ४५७ ॥

अथोक्तकल्पकल्पातीतविमानानामवस्थानमाह,—

मेरुतलादु दिवड्ढ दिवड्ढदलछक्कएक्करज्जुम्हि ।
कप्पाणमट्ठजुगला गेवेज्जादी य होंति कमे ॥ ४५८ ॥

मेरुतलात् द्व्यर्धं द्व्यर्धदलषट्कैकरज्जौ ।
कल्पानां अष्टयुगलानि ग्रैवेयादयश्च भवन्ति क्रमेण ॥ ४५८ ॥

मेरुतला । मेरुतलादु द्वितीय द[illegible] । द्वितीयाद्[illegible] द्व्यर्द्धरज्जौ च

कल्पानामष्टयुगलानि क्रमेण भवति । एकस्यां रज्जौ नवग्रैवेयकादीनि क्रमेण भवति ॥ ४५८ ॥

साम्प्रतं सौधर्मादिषु विमानसंख्यां गाथात्रयेण कथयति –

बत्तीसट्ठावीसं बारस अट्ठेव होंति लक्खाणि ।
सोहम्मादिचउक्के लक्खचउक्कं तु बम्हदुगे ॥ ४५९ ॥

द्वात्रिंशदष्टाविंशतिः द्वादश अष्टैव भवन्ति लक्षाणि ।
सौधर्मादिचतुष्के लक्षचतुष्कं तु ब्रह्मद्विके ॥ ४५९ ॥

बत्तीसट्ठा । द्वात्रिंशल्लक्षाष्टाविंशतिलक्षद्वादशलक्षाष्टलक्षाण्येव यथासंख्यं सौधर्मादिचतुष्के विमानानि भवन्ति । ब्रह्मब्रह्मोत्तरे मिलित्वा लक्षचतुष्कप्रमितानि विमानानि भवन्ति ॥ ४५९ ॥

तत्तो जुम्माण तिए पण्णास चाल छस्सहस्साणि ।
सत्तसयाणि य आणदकप्पचउक्केसु पिंडेण ॥ ४६० ॥

ततो युग्मानां त्रये पञ्चाशत् चत्वारिंशत् षट्सहस्राणि ।
सप्तशतानि च आनतकल्पचतुष्केषु पिण्डेन ॥ ४६० ॥

तत्तो जुम्मा । ततो लान्तवादियुग्मत्रये यथासंख्यं पञ्चाशत्सहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि षट्सहस्राणि विमानानि आनतादिकल्पचतुष्के पिण्डेन सप्तशतानि भवन्ति ॥ ४६० ॥

एक्कारसत्तसमहियसयमेक्काणउदी णव य पंचेव ।
गेवज्जाण तितिसु अणुदिसाणुत्तरे होंति ॥ ४६१ ॥

एकादशसप्तसमधिकशतं एकनवतिः नव च पञ्चैव ।
ग्रैवेयकाणां त्रित्रिषु अनुदिशानुत्तरे भवन्ति ॥ ४६१ ॥

पञ्चारसत्त। एकादशमधिकशत सप्तसप्तधिकशत एकनवति नव च पञ्चैव यथासंख्य अधस्तनादिग्रैवेयकाणा त्रिषु अनुदिशायामनुत्तरे च विमानानि भवन्ति ॥ ४६१ ॥

इदानीं प्रथमादिस्वर्गेषु प्रतरसंख्याप्रतिपादनार्थमिन्द्रकाणा प्रमाणं निरूपयति,—

इगितीससत्त चत्तारि दोण्णि एकेक्क छक्क चदुकप्पे।
तित्तिय एक्केक्किंदियणामा उडुआदितेवट्ठी ॥ ४६२ ॥

एकत्रिंशत्सप्त चत्वारि द्वे एकमेकं षट् चतु कल्पे।
त्रीणि त्रीणि एकमेकं इन्द्रकनामानि ऋत्वादित्रिषष्टि ॥ ४६२ ॥

इगितीस। सौधर्मयुग्मे एकत्रिंशदिन्द्रकाणि सनत्कुमारयुग्मे सप्तेन्द्रकाणि ब्रह्मयुग्मे चत्वारीन्द्रकाणि लान्तवयुग्मे द्वीन्द्रके शुक्रयुग्मे एकमिन्द्रकं शतारयुग्मे एकमिन्द्रकं आनतादिचतुर्षु कल्पेषु षडिन्द्रकाणि। अधस्तनादिषु ग्रैवेयकेषु प्रत्येकं त्रीणि त्रीणीन्द्रकाणि नवानुदिशायामेकमिन्द्रकं पञ्चानुत्तरे चैकमिन्द्रकं। एतेषां तु विमानानामिन्द्रकाणां नामानि च त्रिषष्टिर्भवन्ति ॥ ४६२ ॥

एतेषामिन्द्रकाणामुद्धान्तरं तन्नामावतारं चाह,—

एक्केक्कइंदयस्स य विच्चालमसंखजोयणपमाणं।
एदाण णामाणं वोच्छामो आणुपुव्वीओ ॥ ४६३ ॥

एकैकमिन्द्रकस्य च विचाल असंख्यातयोजनप्रमाणं।
एतेषां नामानि वक्ष्याम आनुपूर्व्या ॥ ४६३ ॥

एक्केक्क। एकैकमिन्द्रकस्य तदन्तरं च तयान्तरं स्यात्। एतेषामिन्द्रकाणां नामानि च वक्ष्यामि व याह ॥ ४६३ ॥

उक्तेन्द्रकाणां नामानि गाथाषट्केनाह,—

उडुविमलचंदवग्गू वीररुण णंदण च णलिणं च ।
कंचण रोहिद चंच मरुद रिद्धिसय वेलुरियं ॥ ४६४ ॥

ऋतुविमलचन्द्रवल्गुवीरारुणनन्दन च नलिन च ।
काञ्चन रोहित चञ्चत् मरुत् ऋद्धीश वैडूर्य ॥ ४६४ ॥

उडुविमल । ऋतु विमल चन्द्र वल्गु वीर अरुण नंदनं च नलिनं च कांचनं रोहित चञ्चत् मरुत् ऋद्धीश वैडूर्य ॥ ४६४ ॥

रुचग रुचिरंक फलिह तवणिय मेघमब्भ हारिद्द ।
पउम लोहिद वज्ज णंदावत्त पहंकरय ॥ ४६५ ॥

रुचक रुचिर अंक स्फटिक तपनीय मेघ अभ्र हारिद्र ।
पद्म लोहित वज्र नंद्यावर्त प्रभंकर ॥ ४६५ ॥

रुचग । रुचक रुचिर अंक स्फटिक तपनीय मेघ अभ्रं हारिद्रं पद्मं लोहित वज्रं नंद्यावर्त प्रभंकर ॥ ४६५ ॥

पिट्ठक गजमित्तपहा अंजण वणमाल णाग गरुडं च ।
लंगल वलभद्द च य चक्क चरिमं च अडतीसो ॥४६६॥

पृष्ठकं गज मित्र प्रभ अंजन वनमालं नागं गरुडं च ।
लांगल बलभद्र च चक्र चरम च अष्टात्रिंशत् ॥ ४६६ ॥

पिट्ठक । पृष्ठकं गजं मित्रं प्रभं अंजन वनमालं नागं गरुडं च लाङ्गलं बलभद्रं च चरमेन्द्रकं चक्रं इति सौधर्मादिचतुष्के पिण्डनाष्टात्रिंशदिन्द्रकनामानि ॥ ४६६ ॥

रिट्ठसुरसमिदिबह्म बह्मुत्तरबह्महिदयलांतवयं ।
सुक्क खलु सुक्कदुग सदरविमाणं तु सदरदुगे ॥ ४६७ ॥

एकाग्गमन । एकाग्रगामिकानां गमनमिकानां एकानी न व दशेः मध्यान्तरे अवसानादिदेवकाणां त्रिषु अनुदिशा अनुत्तरे च विमानानि भवन्ति ॥ ४६१ ॥

इदानीं प्रथमादिकल्पेषु प्रासमन्यमानीं इन्द्रकमिन्द्रकाणां प्रमाणं निरूपयति,—

इगितीसमसत्त चत्तारि दोण्णि एक्केक्क छक्क चदुकप्पे ।
तित्तिय एक्केक्किदियणामा उडुआदितेवट्ठी ॥ ४६२ ॥

एकत्रिंशत्सप्त चत्वारि द्वे एकमेक षट् चतुःकल्पे ।
त्रीणि त्रीणि एकमेक इन्द्रकनामानि ऋत्वादित्रिषष्टि ॥ ४६२ ॥

इगितीस । सौधर्मयुग्मे एकत्रिंशदिन्द्रकाणि सनत्कुमारयुग्मे सप्तेन्द्रकाणि ब्रह्मयुग्मे चत्वारीन्द्रकाणि लान्तवयुग्मे द्वीन्द्रके शुक्रयुग्मे एकमिन्द्रकं शतारयुग्मे एकमिन्द्रकं आनतादिचतुष्कल्पेषु षडिन्द्रकाणि । अधस्तनादिषु ग्रैवेयकेषु प्रत्येकं त्रीणि त्रीणीन्द्रकाणि नवानुदिशायामेकमिन्द्रकं पञ्चानुत्तरे चैकमिन्द्रकं । एतेषां तु विमानादीन्द्रकाणां नामानि च त्रिषष्टिर्भवन्ति ॥ ४६२ ॥

एतेषामिन्द्रकाणामन्तरं तन्नामावतारं चाह,—

एक्केक्कइंदयस्स य विच्चालमसंखजोयणपमाणं ।
एदाणं णामाणं वोच्छामो आणुपुव्वीओ ॥ ४६३ ॥

एकैकमिन्द्रकस्य च विचालं असंख्यातयोजनप्रमाणं ।
एतेषां नामानि वक्ष्यामः आनुपूर्व्या ॥ ४६३ ॥

एक्केक्क । एकैकमिन्द्रकस्यान्तरालमसंख्यातयोजनं स्यात् । एतेषामिन्द्रकाणां नामानि चानुपूर्व्या वक्ष्यामः ॥ ४६३ ॥

नाभिगिरिचूलिकोपरि बालाग्रान्तरे स्थित हि ऋतुविंद्रः ।
सिद्धित अध द्वादशयोजनमाने सर्वार्थ ॥ ४७० ॥

णाभिगिरि । नाभिगिरिचूलिकोपरि बालाग्रान्तरे स्थित खलु ऋतिवन्द्रकः सिद्धक्षेत्रादधो द्वादशयोजनप्रमाणेन सर्वार्थसिद्धिस्तिष्ठति ॥ ४७० ॥

कल्पानामितरेषां च त्रिदिवादीनां सीमानमाह,—

सगसगचरिमिंदयधयदंड कप्पावणीणमंत खु ।
कप्पादीदवणिस्स य अंत लोयंतयं होदि ॥ ४७१ ॥

स्वकस्वकचरमेंद्रकध्वजदंड कल्पावनीना अंत खलु ।
कल्पातीतावनेश्च अंत लोकान्तं भवति ॥ ४७१ ॥

सगसग । स्वकीयस्वकीयचरमेन्द्रकध्वजदंड कल्पावनीनामन्तः खलु स्यात् । कल्पातीतावनेरन्तो लोकस्यान्तो भवति ॥ ४७१ ॥

अथेन्द्रकानां विस्तारमाह,—

माणुसखित्तपमाणं उडु सव्वट्ठं तु जंबुदीवसमं ।
उभयविसेसे रूऊणिंदयभजिदे दु हाणिचयं ॥४७२॥

मानुषक्षेत्रप्रमाणं ऋतु सर्वार्थं तु जंबुद्वीपसमं ।
उभयविशेषे रूपोनेंद्रकभक्ते तु हानिचयः ॥ ४७२ ॥

माणुसखित्त। मानुषक्षेत्रप्रमाणं ४५०००००० ऋतिवन्द्रकं सर्वार्थसिद्धीन्द्रकं तु जम्बुद्वीपसमं १ लक्ष उभयोर्विशेषे शोधिते ४४ लक्षरूपोनेन्द्रकै ६२ भक्ते ७०९६७ हो $\frac{६}{३१}$ ऋत्विन्द्रकं प्रति हानिचयः स्यात् अस्य विवरणं पंचचत्वारिंशल्लक्षेषु अस्मिन् ७०९६७ हो $\frac{६}{३१}$ अपनीते ४४२९०३२। $\frac{२५}{३१}$ द्वितीयेन्द्रकप्रमाणं स्यात् । एवं पापटेक-लक्षमवतिष्ठते तावदपनीते तत्तदनन्तरेन्द्रकप्रमाणं स्यात् ॥ ४७२ ॥

अरिष्टसुरसमिति ब्रह्म ब्रह्मोत्तरलान्तवक्र ।
शुक्र खलु शुक्रद्विके शतारविमान तु शतारयुगे ॥ ४६७ ॥

रिट्ठसुरस । अरिष्टसुरसमिति ब्रह्मब्रह्मोत्तरनामानीन्द्रकाणि ब्रह्मयुगे ब्रह्मद्वय लान्तवकमिति द्वय लान्तवयुगे शुक्रयुगे खलु शुक्रेन्द्रक शतारद्विके शतारविमानेन्द्रकम् ॥ ४६७ ॥

आणद पाणदपुप्फय सातक तह आरणच्चुदवसाणे ।
तो गेवेज्ज सुदरिसण अमोह तह सुप्पबुद्ध च ॥४६८॥

आनतप्राणतपुष्पक शातक तथा आरणाच्युतावसाने ।
तत ग्रैवेयके सुदर्शन अमोघ तथा सुप्रबुद्ध च ॥ ४६८ ॥

आणद । आनत प्राणतपुष्पक शातक तथा आरणाच्युतमितीन्द्रकनामानि आनताद्यच्युतावसाने स्यु । ततो ग्रैवेयकेषु सुदर्शन अमोघ तथा सुप्रबुद्ध च ॥ ४६८ ॥

जसहर सुभद्दणामा सुविसाल सुमणस च सोमणस ।
पीदिंकरमाइच्च चरिमे सव्वट्ठसिद्धी दु ॥ ४६९ ॥

यशोधर सुभद्रनाम सुविशाल सुमनस च सौमनस ।
प्रीतिंकर आदित्य चरमे सर्वार्थसिद्धिस्तु ॥ ४६९ ॥

जसहर । यशोधर सुभद्रनाम सुविशाल सुमनस च सौमनस प्रीतिंकर नवानुदिशायामादित्य इन्द्रक चरमे सर्वार्थसिद्धीन्द्रक ॥ ४६९ ॥

मेरुतलाद् दिवड्ढमित्यादिगाथोक्तार्थ सर्वत्र विमानानि तिष्ठन्ति किमिति प्रश्न परिहारमाह,—

णाभिगिरिचूलिगुवरिं वालग्गतर ट्ठियो हु उड्डु इदो ।
सिद्धिंदो धो बारह जोयणमाणम्हि सव्वट्ठं ॥ ४७० ॥

३। मा १ । उपरि सर्वत्र चतस्र ४ उत्तरा । गच्छस्तु स्वस्वपटलप्रमाण स्यात् सनत्कुमारादौ ७।४।२।१।१।६।३।३।३।१ इत्यमाद्युत्तरगच्छं ज्ञात्वा तत्तद्धनं उपर्युपरि दक्षिणोत्तरे द्रष्टव्यमेवमानेतव्य ॥ ४७३ ॥

अथ तत्र प्रथमेन्द्रकस्य श्रेणीबद्धानामत्रस्थितप्रदेशकमुपदिशति,—

उडुसेढीबद्धदलं सयंभुरमणुदहिपणिधिभागम्हि ।
आइल्लतिण्णि दीवे तिण्णि समुद्दे य सेसा [illegible] ॥ ४७४ ॥

ऋतुश्रेणीबद्धार्द्धं स्वयंभुरमणोदधिप्रणिधिभागे ।
आदिमत्रिषु द्वीपेषु त्रिषु समुद्रेषु च शेषं हि ॥ ४७४ ॥

उडुसेढी । ऋतुइन्द्रकश्रेणीबद्धार्द्धं २१ स्वयंभूरमणोदधिप्रणिधिभागे तिष्ठति । शेषार्द्धं तु २१ स्वयम्भूरमणसमुद्रादर्वाचीनेषु स्वयम्भूरमणादिषु त्रिषु द्वीपेषु त्रिषु समुद्रेषु च १५।८।४।२।१।१ तिष्ठति ॥ ४७४ ॥

अथ प्रकीर्णकानां स्वरूपं प्रमाणं चाह,—

सेढीण विच्चाले पुप्फपइण्णग इव ट्ठियविमाणा ।
होंति पइण्णयणामा सेढिंदयहीणरासिसमा ॥४७५॥

श्रेणीनां विचाले पुष्पप्रकीर्णकानि इव स्थितविमानानि ।
भवति प्रकीर्णकनामानि श्रेणीन्द्रकहीनराशिसमानि ॥ ४७५ ॥

सेढीणं । श्रेणीबद्धानां विच्चाले अन्तराले पुष्पाणि प्रकीर्णकानि इव स्थितानि विमानानि प्रकीर्णकनामानि भवन्ति । तानि श्रेणीन्द्रकहीनराशिसमानानि । तत्कथं ? बत्तीसट्ठावीसमित्याद्युक्तसौधर्मादिराशिभ्यः श्रेणीन्द्रकेष्वपनीतेषु यो राशिरवशिष्यते तत्समानानि ॥ ४७५ ॥

अथ दक्षिणोत्तरेन्द्राधारि इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकविमानं प्ररूपयति,—

उत्तरसेढीबद्धा वायव्वीसाणकोणगपइण्णा ।
उत्तरइंदाणिबद्धा सेसा दक्खिणदिसिंदपडिबद्धा ४७६

इत श्रेणीबद्धानामवस्थितस्वरूपं निरूपयति;—

बासट्ठी सेढिगया पढमिंदे चउदिसासु पत्तेयं ।
पडिदिसमेक्केकोण अणुद्दिसाणुत्तरेक्कोत्ति ॥ ४७३ ॥

द्वाषष्टिः श्रेणिगतानि प्रथमेन्द्रे चतुर्दिशासु प्रत्येकं ।
प्रतिदिशमेकैकोन अनुदिशानुत्तरे एकमिति ॥ ४७३ ॥

बासट्ठी । प्रथमेन्द्रके चतुर्दिक्षु प्रत्येकं श्रेणीबद्धविमानानि द्वाषष्टिः सन्ति । [illegible] उपरि द्वितीयपटलादौ प्रतिदिशमेकैकोनं यावत् उपर्युपरिमश्रेणीबद्धप्रमाणानि । यावदनुदिशायामनुत्तरे चैकमेवावशिष्यते । अत्र [illegible] विमानेषु सङ्कलितधनानयनविधानमुच्यते । सौधर्मादेरेकदिक्श्रेणीबद्धानि ६२ दिक्त्रय त्रिभिर्गुणितानि १८६ आदि उत्तर ३ गच्छ ३१ अत्र सङ्कलितमानीय धनमानीयते । पद ३१ [illegible] विहीनं । ३० दलित १५ उत्तर ३ गुणित ४५ इदं [illegible] प्रभव १८६ मिलित प्रभव [illegible] ४५ [illegible] २३१ पद ३१ गुणिते ७१६१ इदं सौधर्मश्रेणीबद्धप्रमाणं स्यात् । अत्र इदं ३१ [illegible] कृतधनं ४८०१ । [illegible] आदि ६२ उत्तर १ गच्छ ३१ [illegible] सङ्कलितधनमानेतव्यम् १४५७ ईशाने [illegible] [illegible] उत्तर [illegible] । सौधर्मैशानयोः [illegible] [illegible] ६० [illegible] ३१ [illegible] ३१ [illegible] कुमारादि [illegible] [illegible] श्रेणीबद्धप्रमाणं स्यात् । [illegible] ३१ [illegible] ७ [illegible] [illegible] श्रेणीबद्धप्रमाणं [illegible] ६२ [illegible] ३१ । [illegible] । [illegible] । ४० [illegible] । १८ [illegible] । १७ । [illegible] । १० । [illegible] १० । [illegible] ७ । [illegible] ८ । [illegible] १ । [illegible] श्रेणीबद्धप्रमाणं [illegible] [illegible] । [illegible] आदि । [illegible] ६२ [illegible] ३१ । [illegible] ८७ । [illegible] । [illegible] ८ । [illegible] [illegible] ८ । [illegible] १० । [illegible] ८ [illegible]

स्वस्वस्वरसंख्येयोना स्वस्वश्रेणिराशय असंख्यव्यासगता ।
अथवा पञ्चमभाग चतुर्गुणिते भवति कल्पेषु ॥ ४७९ ॥

सगसग । स्वकीयस्वकीयसंख्यातयोजनविमानसंख्यो ६४०००० ना-स्वकीयस्वकीयश्रेणीसाद्विराशय ४५६०००० । असंख्यातयोजनव्यास-विमानानि । अथवा राशे ३२ ल‌‌क्ष=पञ्चमभागसंख्या ६४०००० चतुर्भिर्गुणिता २५६०००० कल्पेष्वसंख्यातयोजनव्यासविमानसंख्या भवन्ति ॥ ४७९ ॥

अथ तेषां विमानानां बाहुल्यमाह,—

छज्जुगल सेसकप्पे तितिसु सेसे विमाणतलबहलं ।
इगिवीसेयारसयं णवणउदिरिणकमा हाणि ॥ ४८० ॥

षड्युगलेषु शेषकल्पेषु त्रित्रिषु शेषे विमानतलबहलं ।
एकविंशत्येकादशशतानि नवनवतिऋणक्रमा भवति ॥ ४८० ॥

छज्जुगल । सौधर्मादिषु षट्सु युगलेषु आनतादिषु कल्पेषु अधोग्रैवेय-कादिषु त्रिषु त्रिषु उपरितनेषु मिलित्वैकादशसु स्थानेषु विमानतलबाहुल्य यथासंख्यं आद्यावेकविंशत्यधिकैकादशशतं ११२१ उपरि सर्वत्र नवनवतिऋणक्रमा भवन्ति ॥ ४८० ॥

अथ तेषां विमानानां वर्णक्रमं प्ररूपयति,—

दोद्दो चउचउकप्पे पचयवण्णा हु किण्णवज्जा हु ।
णीलूणा रत्तूणा विमाणवण्णा तदो सुक्का ॥ ४८१ ॥

द्वयो द्वयो चतुश्चतु कल्पेषु पञ्चवर्णा हि कृष्णवर्जा हि ।
नीलोना रक्तोना विमानवर्णा तत शुक्ला ॥ ४८१ ॥

उत्तरश्रेणिबद्धा वायव्यैशानकोणगप्रकीर्णानि ।
उत्तरेन्द्रनिबद्धानि शेषाणि दक्षिणदिगिन्द्रप्रतिबद्धानि ॥ ४७६ ॥

उत्तरसेढी । उत्तरश्रेणीबद्धा वायव्यैशानकोणगतप्रकीर्णकानि च उत्तरेन्द्रनिबद्धानि । शेषाणि सर्वविमानानि दक्षिणदिगिन्द्रप्रतिबद्धानि ४७६

इदानीमिन्द्रकादीनां व्यासं निरूपयति,—

इंदयसेढीबद्धपइण्णयाण कमेण वित्थारा ।
संखेज्जमसंखेज्जं उभयं च य जोयणाण तु ॥ ४७७ ॥

इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्ताराः ।
संख्येयं असंख्येयं उभयं च योजनानां तु ॥ ४७७ ॥

इंदयसे । इन्द्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकानां क्रमेण विस्ताराः संख्येययोजनानि असंख्येययोजनानि संख्येयासंख्येययोजनानि भवेयुः ॥ ४७७ ॥

अथ सौधर्मादिषु संख्यातासंख्यातविस्तारविमानसंख्यां गाथाद्वयेनाह,—

कप्पेसु रासिपंचमभागं संखेज्जवित्थडा होंति ।
तत्तो तिण्णट्ठारस सत्तरसेक्केक्कयं कमसो ॥ ४७८ ॥

कल्पेषु राशिपञ्चमभागाः संख्येयविस्तारा भवन्ति ।
ततः त्रीण्यष्टादश सप्तदशैकैकं क्रमशः ॥ ४७८ ॥

कप्पेसु । कल्पेषु बत्तीसट्ठावीसमित्यादि उक्तराशीनां ३२ ल पंचमभागप्रमाणं ६४०००० संख्यातयोजनविस्तारविमानानि भवन्ति । तत कल्पस्य परतः नवग्रैवेयकादिषु त्रीणि अष्टादश सप्तदशैकमेकं च क्रमशः संख्यातयोजनविस्तृतानि भवन्ति ॥ ४७८ ॥

सगसगरासिम्मूणा सगसगरासी असंखवित्थडया ।
अहवा पंचमभागं चउगुणिदं होंति कप्पेसु ॥ ४७९ ॥

अथ तेषां विमाननामानि गाथाद्वये कथयति,—

इदंट्ठिय विमाण सगसगकप्प तु तस्स चउपासे ।
वेलुरियरजतसोक मिसक्कसारं तु पुव्वादी ॥ ४८४ ॥

इन्द्रस्थित विमान स्वकस्वकल्पं तु तस्य चतुःपार्श्वे ।
वैडूर्यरजताशोक मृषत्कसारं तु पूर्वादिषु ॥ ४८४ ॥

इदंट्ठियं । इन्द्रस्थित विमान स्वकीयस्वकीयकल्पाख्यकं ॥ पुनः तस्य चतुःपार्श्वे वैडूर्यरजताशोकमृषत्कसाराख्यविमानानि पूर्वादिदिक्षु तिष्ठन्ति । अथ विधि सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणां ॥ ४८४ ॥

रुचकं मंदरसोक सत्तच्छदणामय विमाण तु ।
सव्वुत्तरइंदाण विमाणपासेसु होंति कमे ॥ ४८५ ॥

रुचक मन्दराशोक सप्तच्छदनामक विमान तु ।
सर्वोत्तरेन्द्राणां विमानपार्श्वेषु भवन्ति क्रमेण ॥ ४८५ ॥

रुचक । रुचकमन्दराशोकसप्तच्छदनामानि विमानानि सर्वोत्तरेन्द्राणां स्वस्वविमानचतुःपार्श्वे क्रमेण भवन्ति ॥ ४८५ ॥

अथ सौधर्मादिदेवानां मुकुटचिह्नानि गाथाद्वयेनाह,—

सोहम्मादीचारस साणदआरणगजुगवि कमा ।
देवाण मउलचिह्न वराहमयमहिसमच्छावि ॥ ४८६ ॥

सौधर्मादिद्वादशसु आनतारणयुगेपि क्रमात् ।
देवाना मौलिचिह्न वराहमृगमहिषमत्स्या अपि ।

सौधम्मादी । सौधर्मादि द्वादशकल्प... ... /१
क्रमात् देवाना मौलिचिह्नानि वराहमृगमहिषमत्स्या ...

दोद्दो । सौधर्मादिषु द्वयोर्द्वयोः कल्पयोः ब्रह्मादिषु चतुर्षु चतुर्षु कल्पेषु मिलित्वा चतुर्षु स्थानेषु यथासंख्यं पञ्चवर्णाः खलु कृष्णवर्णेनचतुर्वर्णाः नीलेनत्रिवर्णाः रक्तेनद्विवर्णाः तत आनतादिषु सर्वेषु शुक्लैकवर्णविमानानि स्युः ॥ ४८१ ॥

इदानीं विमानाधारस्थानं निरूपयति;—

दुसु दुसु अट्ठसु कप्पे जलवादुभये पइट्ठियविमाणा ।
सेसविमाणा सव्वे आगासपइट्ठया होंति ॥ ४८२ ॥

द्वयोः द्वयोः अष्टसु कल्पेषु जलवातोभये प्रतिष्ठितविमानाः ।
शेषविमानाः सर्वे आकाशप्रतिष्ठिता भवन्ति ॥ ४८२ ॥

दुसु दुसु । द्वयोर्द्वयोः कल्पयोर्ब्रह्मादिष्वष्टसु कल्पेषु मिलित्वा त्रिस्थानेषु यथासंख्यं जलप्रतिष्ठितविमानाः वातप्रतिष्ठितविमानाः उभयप्रतिष्ठितविमानाः शेषविमानाः सर्वे आकाशप्रतिष्ठिता भवन्ति ॥ ४८२ ॥

अथेन्द्रस्थितं विमानं कथयति,—

छज्जुगलसेसकप्पे अट्ठारसमम्हि सेढिबद्धम्हि ।
दोहीणकम दक्खिणउत्तरभागम्हि देविंदा ॥ ४८३ ॥

षड्युगलशेषकल्पेषु अष्टादशमे श्रेणीबद्धे ।
द्विहीनक्रमं दक्षिणोत्तरभागे देवेन्द्राः ॥ ४८३ ॥

छज्जुगल । षट्सु युगलेषु शेषकल्पे च यथासंख्यं प्रथमयुगले स्वकीयेन्द्रकसम्बन्धे अष्टादशमे श्रेणीबद्धे द्वितीयादौ च द्विहीनक्रमेण श्रेणीबद्धे १८।१६।१४।१२।१०।८। दक्षिणभागे दक्षिणेन्द्राः उत्तरभागे उत्तरेन्द्राः

अथ तेषां विमाननामानि गाथाद्वये कथयति,—

इंदट्ठिय विमाणं सगसगकप्प तु तस्स चउपासे ।
वेलुरियरजतसोक मिसक्कसारं तु पुव्वादी ॥ ४८४ ॥

इन्द्रस्थित विमान स्वस्वकल्प तु तस्य चतु पार्श्वे ।
वैडूर्यरजताशोक मृषत्कसार तु पूर्वादिषु ॥ ४८४ ॥

इंदट्ठियं । इन्द्रस्थित विमान स्वकीयस्वकीयकल्पाख्यक तु पुन तस्य चतु पार्श्वं वैडूर्यरजताशोकमृषत्कसाराख्यविमानानि पूर्वादिदिक्षु तिष्ठन्ति । अथ विधि सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणां ॥ ४८४ ॥

रुचक मदरसोक सत्तच्छदणामय विमाण तु ।
सव्वुत्तरइंदाणं विमाणपासेसु होंति कमे ॥ ४८५ ॥

रुचक मन्दराशोक सप्तच्छदनामक विमान तु ।
सर्वोत्तरेन्द्राणा विमानपार्श्वेषु भवति क्रमेण ॥ ४८५ ॥

रुचक । रुचकमन्दराशोकसप्तच्छदनामानि विमानानि सर्वोत्तरेन्द्राणां स्वस्वविमानचतुःपार्श्वे क्रमेण भवति ॥ ४८५ ॥

अथ सौधर्मादिदेवानां मुकुटचिह्नानि गाथाद्वयेनाह,—

सोहम्मादीबारस साणदआरणगजुगवि कमा ।
देवाण मउलचिह्न वराहमयमहिसमच्छादि ॥ ४८६ ॥

सौधर्मादिद्वादशसु आनतारणयुगेपि क्रमात् ।
देवाना मौलिचिह्न वराहमृगमहिषमत्स्या अपि ॥ ४८६ ॥

सोहम्मादी । सौधर्मादिषु द्वादशकल्पेषु आनतयुगले आरणयुगले क्रमात् देवानां मौलिचिह्नानि वराहमृगमहिषमत्स्या अपि ॥ ४८६ ॥

कुम्मो दद्दुरतुरया तो कुंजर चंद सप्प खग्गी य।
छगला वसहो तत्तो चोद्दसमो होदि कप्पतरू ॥ ४८७॥

कूर्मो दर्दुरस्तुरगस्ततः कुंजरः चंद्रः सर्पः खड्गी च।
छगलो वृषभः ततः चतुर्दशमो भवति कल्पतरुः ॥ ४८७ ॥

कुम्मो। छायामात्रमेवार्थः ॥ ४८७ ॥

साम्प्रतमिन्द्राणां नगरस्थानं विस्तारं च गाथाद्वयेनाह,—

सोहम्मादिचउक्के जुम्मचउक्के य सेसकप्पे य।
सगदेविजुदिंदाणं णयराणि हवंति णवयपदे ॥ ४८८ ॥

सौधर्मादिचतुष्के युग्मचतुष्के च शेषकल्पे च।
स्वकदेवीयुतेंद्राणां नगराणि भवंति नवकपदे ॥ ४८८ ॥

सोहम्मादि। सौधर्मादिचतुष्के ब्रह्मादियुग्मचतुष्के आनतादीनां नगरेषु प्रत्येकं विंशतिसहस्रयोजनव्यासासाधारणात्कल्पचतुष्टयमेकं स्थलं कृतं इति नवसु स्थानेषु स्वस्वदेवीयुतेन्द्राणां नगराणि भवन्ति ॥ ४८८ ॥

चुलसीदीं असीदी विहत्तरी सत्तरिय जोयणगा।
जावय वीससहस्सं समचउरस्साणि रम्माणि ॥४८९॥

चतुरशीतिः अशीतिः द्वासप्ततिः सप्ततिश्च योजनानि।
यावद्विंशसहस्रं समचतुरस्राणि रम्याणि ॥ ४८९ ॥

चुलसी। चतुरशीतिसहस्राणि अशीतिसहस्राणि द्वासप्ततिसहस्राणि सप्ततिसहस्राणि योजनानि यावद्विंशतिसहस्रं तावच्चतुःसहस्रोनैः कथंचं तत्कव्यासयुतानि नगराणि समचतुरस्राणि रम्याणि ॥ ४८९ ॥

अथ उक्तनगरप्राकारं गाथाद्वयेनाह —

छज्जुगलसेसकप्पे तप्पायारुदय जोयणं तिसयं।
पणणाउदि पदरं [illegible] उवरि वीसूणं ॥ ४९० ॥

पद्युगलशेषकल्पे तत्प्राकारोऽन्य योजन त्रिशत ।
पचाशदून पचमे त्रिशदून उपरि विंशोनम् ॥ ४९० ॥

उज्जुगल। पद्युगले शेषकल्पे चेति सप्तस्थाने तन्नगरप्राकारोदय आदौ योजनानां त्रिशत उपरि पचाशदून पचमस्थाने त्रिशदून तत उपरि विशत्यूनं ज्ञातव्य ॥ ४९० ॥

अथ तत्प्राकारगाधविस्तारावाह,—

गाढो विरथारा विय पण्णास दलकम तु पचमगे ।
चत्तारि तिय छट्ठे चरिमे दुगमद्धसजुत्त ॥ ४९१ ॥

गाधो विस्तार अपि पचाशत् दलक्रमस्तु पचमके ।
चत्वारि त्रीणि षष्ठे चरमे द्विकमर्धसयुक्तम् ॥ ४९१ ॥

गाढावि। तत्प्राकारगाधो मूलतोऽस्य इत्यर्थ । तद्विस्तारोऽपि चादौ पचाशद्योजनानि उपर्युपरि अर्द्धार्द्धक्रम । तु पुन पचमस्थाने चत्वारि योजनानि षष्ठस्थाने त्रीणियोजनानि चरमस्थाने अर्द्धयोजनसयुत योजनद्वयं ज्ञातव्य ॥ ४९१ ॥

अथ तत्प्राकाराणां गोपुरस्वरूप गाथाद्वयेनाह,—

पडिदिस गोउरसखा तेसिं उदओवि चउतिदोण्णिसया ।
सत्तो दुगुणागीढी वीसविहीण तदो होदि ॥ ४९२ ॥

प्रतिदिशा गोपुरसख्या तेषा उदयोऽपि चतुस्त्रिद्विशतानि ।
शत द्विगुणानि विंशतिविहीन तत भवति ॥४९२॥

पडिदिस गो। प्रतिदिशं तत्प्राकाराणां गोपुरसख्या तद्गोपुरोदयोऽपि पूर्व- सप्तसु स्थानेषु यथ सख्य चतु शतयोजनानि त्रिशतयोजनानि तत पर द्विशतयोजनानि तत पर विंशत्या हीनक्रमो भवति ॥ ४९२ ॥

गोउरवासो कमसो सयजोयणगाणि तिसु य दसहीण
वीसूण पचमगे तत्तो सव्वत्थ दसहीण ॥ ४९३ ॥

गोपुरव्यासः क्रमश शतयोजनानि त्रिषु च दशहीन ।
विंशोन पचमके तत सर्वत्र दशहीनम् ॥ ४९३ ॥

गोउर । गोपुरव्यास क्रमश शतयोजनानि तत उपरि त्रिषु स्था
दशहीन योजनानि पचमस्थाने विंशत्यूनयोजनानि । तत पर सर्वत्र दश
नयोजनानि ॥ ४९३ ॥

अथ प्रागुक्तनगरव्यासाश्रयेण सामानिकतनुरक्षानीकदेवानां प्र
गाथाद्वयेनाह,—

णयरपदे तस्सखा समाणिया चउगुणा य तणुरक्खा
वसहतुरगरथेभपदातीगधव्वणच्चणी चेदि ॥ ४९४ ॥

नगरपदे तत्सख्या सामानिका चतुर्गुणाश्च तनुरक्षा ।
वृषभतुरगरथेभपदातिगधर्वनर्तकी चेति ॥ ४९४ ॥

णयरपदे । सोहम्मादिचउके इति गाथोक्तेषु नगराणा नवसु स्था
मुलसीदियेति गाथोक्ततत्प्रगरविस्तारसख्येव सामानिकसख्येति ज्ञातव्यं
चतुर्गुणिता तनुरक्षकसख्या वृषभतुरगरथेभपदातिगधर्वनर्तकी चेति ॥ ४९

सत्तेव य आणीया पत्तेय सत्तसत्तकक्खजुदा ।
पढम ससमाणसम तद्दुगुण चरिमकक्खोत्ति ॥ ४९५ ॥

सप्तैव च आनीकानि प्रत्येक सप्तसप्तकक्षयुतानि ।
प्रथम स्वसमानसम तद्द्विगुण चरमकक्षान्तम् ॥ ४९५ ॥

सत्तेव य । सप्तैव आनीकानि तानि प्रत्येक सप्तसप्तकक्षयुतानि ।

प्रथमकक्ष्य स्वस्य स्वस्य सामानिकसमं तत उपरि तस्माद् द्विगुणं चरमकक्षपर्यन्तम् ॥ ४९५ ॥

अथ दक्षिणोत्तरेन्द्राणामानीकनायकान् गाथाद्वयेनाह,—

दामेट्ठी हरिदामा मादलि अइरावदा महत्तरया।
वाउअरिट्ठजसा णीलंजणया दक्खिणिंदाण ॥ ४९६ ॥

दामयष्टि हरिदामा मातलि ऐरावतो महत्तर।
वायु अरिष्टयशा नीलाञ्जना दक्षिणेन्द्राणाम् ॥ ४९६ ॥

दामेट्ठी। दामयष्टिहरिदामा मातलिरैरावतो महत्तरश्च वायुररिष्टयशा इत्येते पुरुषा नीलाञ्जनेति स्त्री एते दक्षिणेन्द्राणां सेनामुख्या ॥ ४९६ ॥

महदामेट्ठि मिदगदी रहमथण पुप्फदंत इदि कमसो।
सलघु परक्कमगीदरदि महासुसेणा य उत्तरिंदाण॥४९७॥

महद्दामयष्टि अमितगति रथमथन पुष्पदन्त इति क्रमशः।
सलघुः पराक्रमो गीतरति महासुसेना चोत्तरेन्द्राणाम् ॥४९७॥

महदामे। महद्दामयष्टिरमितगति रथमथन पुष्पदन्त इति क्रमशः स लघुः पराक्रमः गीतरतिरित्येते पुरुषा महासेनेति स्त्री एते उत्तरेन्द्राणां सेनामुख्या ॥ ४९७ ॥

अथ परिषत्त्रयसंख्यामाह,—

बारस चोद्दस सोलस सहस्स अब्भंतरादिपारिसाओ।
तत्थ सहस्सदुउण्णा दुसहस्सादी अद्धद्ध ॥ ४९८ ॥

द्वादश चतुर्दशषोडशसहस्राणि अभ्यन्तरादिपारिषदः।
तत्र सहस्रोना द्विसहस्रात् हि अर्धार्धम् ॥ ४९८ ॥

गोउरयामो कमसो सयजोयणगाणि तिसु य दसहीणं ।
तीसूणं पणमग तत्तो मज्झत्थ दसहीणं ॥ ४९३ ॥

गोपुरव्याम क्रमशः शतयोजनानि त्रिषु च दशहीनं ।
त्रिंशोन पञ्चमके ततः मध्य दशहीनम् ॥ ४९३ ॥

गोउर । गोपुरव्यासं क्रमशः शतयोजनानि तत उपरि त्रिषु स्थानेषु दशहीने यानानि पञ्चमस्थाने त्रिंशदूनयोजनानि । तत परं मध्ये दशहीनयोजनानि ॥ ४९३ ॥

अथ प्रागुक्तनगरव्यासाभिदेश सामानिकतनुरक्षानीकदेवानां प्रमाणं गाथाद्वयेनाह,—

णयरपदे तस्सरसा समाणिया चउगुणा य तणुरक्खा ।
वसहतुरगरथेभपदातीगंधव्वणच्चणी चेदि ॥ ४९४ ॥

नगरपदे तत्संख्या सामानिकाः चतुर्गुणाश्च तनुरक्षाः ।
वृषभतुरगरथेभपदातिगन्धर्वनर्तक्यः चेति ॥ ४९४ ॥

णयरपदे । सोहम्मादिचउक्के इति गाथोक्तेषु नगराणां नवसु स्थानेषु चुलसीदियेति गाथोक्ततत्तनगरविस्तारसंख्येव सामानिकसंख्येति ज्ञातव्यं तेच चतुर्गुणिता तनुरक्षकसंख्या वृषभतुरगरथेभपदातिगन्धर्वनर्तक्यः चेति ॥ ४९४ ॥

सत्तेव य आणीया पत्तेय सत्तसत्तकक्खजुदा ।
पढम ससमाणसम तद्दुगुण चरिमकक्खोत्ति ॥ ४९५ ॥

सप्तैव च आनीकानि प्रत्येकं सप्तसप्तकक्ष्ययुतानि ।
प्रथम स्वसमानसम तद्द्विगुण चरमकक्ष्यान्तम् ॥ ४९५ ॥

सत्तेव य । सप्तैवानीकानि तानि प्रत्येकं सप्तसप्तकक्ष्ययुतानि । तत्र

आरोहिकाभियोग्यकिल्बिषिकादयश्च योग्यप्रासादे।
गत्वा ततः एकदलं नन्दनमिति तद्विशेषनामानि ॥ ५०१ ॥

आरोहिया। आरोहिकाभियोग्यकिल्बिषिकादयश्च स्वस्वयोग्यप्रासादे तिष्ठन्ति। ततः परं एकदलयोजनानि गत्वा नन्दनवनमस्तीति हेतोस्तद्विशेषनामानि वक्ष्यति ॥ ५०१ ॥

कथमिति चेत्,—

सुरपुरदहिं असोयं सत्तच्छदचंपचूदवणसण्डा।
पउमद्दहसममाणा पत्तेयं चेत्तरुक्खजुदा ॥ ५०२ ॥

सुरपुरबहि अशोक सप्तच्छदचम्पचूतवनखण्डा।
पद्महृदसममाना प्रत्येकं चैत्यवृक्षयुता ॥ ५०२ ॥

सुरपुर। सुरपुराद्बहि पूर्वादिदिक्षु अशोकवनखण्डं सप्तच्छदवनखण्डं चम्पकवनखण्डं चूतवनखण्डं पद्महृदसमप्रमाणाः सहस्रयोजनायामास्तदर्द्धव्यासाः इत्यर्थः। प्रत्येकमेकैकचैत्यवृक्षयुताः ॥ ५०२ ॥

अथ तद्वनमध्यस्थचैत्यवृक्षस्वरूपं निरूपयन् तच्चैत्यनमस्कारमाह,—

चउचेत्तदुमा जंबूमाणा कप्पेसु ताण चउपासे।
पल्लंकगजिणपडिमा पत्तेयं ताणि वंदामि ॥ ५०३ ॥

चतुश्चैत्यद्रुमा जम्बूमाना कल्पेषु तेषां चतुःपार्श्वेषु।
पल्यङ्कगजिनप्रतिमा प्रत्येकं तानि वन्दामि ॥ ५०३ ॥

चउचेत्त। चत्वारश्चैत्यद्रुमा जम्बूवृक्षप्रमाणाः सौधर्मादिषु कल्पेषु तेषां चतुर्षु पार्श्वेषु पल्यङ्कजिनप्रतिमाः प्रत्येकं तानि वन्दामि ॥ ५०३ ॥

इदानीं लोकपालानां नगरस्वरूपमाह,—

तत्तो बहुजोयणयं गंतूण दिसासु लोगवालाणं।
णयराणि अजुदसगुणपणघणवित्थारजुत्ताणि ॥ ५०४ ॥

बारस। ... पुष्करद्वीपस्थितेषु अष्टौ अञ्जनगिरिषु [illegible] स्थापयन्ति द्वादशसहस्राणि चतुर्दिक्सहस्राणि षोडशसहस्राणि [illegible] उपरि तत्र पृथक् पृथक् सहस्रदेवाङ्गनाः स्युः। द्वितीयादि[illegible] प्राकारक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ४९८ ॥

स प्रथमप्राकारमध्ये तदन्तरं प्रमाणं चाह,—

णयराणं बिदियादीपायारा पंचमोत्ति तम्मज्झे।
तेसट्ठि अट्ठसट्ठी चुलसीदी लक्खाणि गंतूण ॥ ४९९ ॥

नगराणां द्वितीयादिप्राकाराः पञ्चमान्तं तन्मध्ये।
त्रिषष्टिं अष्टषष्टिं चतुरशीतिं लक्षाणि गत्वा ॥ ४९९॥

णयराणं। नगराणां द्वितीयादिप्राकाराः पञ्चमपर्यन्तं यथासंख्यं प्रथमे[illegible] दश लक्षाणि त्रिषष्टिलक्षाणि अष्टषष्टिलक्षाणि चतुरशीतिलक्षाणि योजनानि गत्वा गत्वा तिष्ठन्ति ॥ ४९९ ॥

अथ तदन्तरालस्थदेवान् गाथाद्वयेनाह,—

सेण्णावइतणुरक्खा पढमे बिदियंतरे दु परिसतियं।
सामाणियदेवा पुण तदिए णिवसंति तुरिए दु ॥ ५०० ॥

सेनापतितनुरक्षाः प्रथमे द्वितीयान्तरे तु पारिषत्त्रयम्।
सामानिकदेवाः पुनः तृतीये निवसन्ति तुरीये तु ॥ ५०० ॥

सेण्णा। सेनापतयस्तनुरक्षाश्च प्रथमेऽन्तराले तिष्ठन्ति। द्वितीयान्तरे तु पारिषद्त्रयमस्ति। तृतीयान्तरे तु पुनः सामानिकदेवा वसन्ति। तुर्येऽन्तरे तु ॥ ५०० ॥

आरोहियाभियोग्गगकिब्भिसियादी य जोग्गपासादे।
गमिय तदो लक्खदलं णंदणमिदि तांव्विसेसणामाणि॥

आरोहिकाभियोग्यकिल्विषिकादयश्च योग्यप्रासादे ।
गत्वा तत लक्षदल नन्दनमिति तद्विशेषनामानि ॥ ५०१ ॥

आरोहिया । आरोहिकाभियोग्यकिल्विषिकादयश्च स्वस्वयोग्यप्रासादे तिष्ठन्ति । तत पर लक्षदलयोजनानि गत्वा नन्दनवनमस्तीति हेतोस्तद्विशेष नामानि वक्ष्यति ॥ ५०१ ॥

कथमिति चेत्,—

सुरपुरयहि असोय सत्तच्छदचपचूदवणसण्डा ।
पउमद्दहसममाणा पत्तय चेत्तरुक्खजुदा ॥ ५०२ ॥

सुरपुरबहि अशोक सप्तच्छदचपचूतवनखण्डा ।
पद्मह्रदसममाना प्रत्येक चैत्यवृक्षयुता ॥ ५०२ ॥

सुरपुर । सुरपुराद्बहि पूर्वादिदिशु अशोकवनखण्ड सप्तच्छदवनखण्डा चपकवनखण्डाश्चूतवनखण्डा पद्मह्रदसमप्रमाणा सहस्रयोजनायामास्तदर्द्ध व्यासा इत्यर्थ । प्रत्येकमकैकचैत्यवृक्षयुता ॥ ५०२ ॥

अथ तद्वनप्रत्यस्यचैत्यवृक्षस्वरूप निरूपयन् तच्चैत्यनमस्कारमाह,—

चउचेत्तदुमा जंबमाणा कप्पेसु ताण चउपासे ।
पल्लकगजिणपडिमा पत्तय ताणि वदामि ॥ ५०३ ॥

चतुश्चैत्यद्रुमा जम्बूमाना कल्पेषु तेषा चतु पार्श्वेषु ।
पल्यकगजिनप्रतिमा प्रत्येक तानि वन्दामि ॥ ५०३ ॥

चउचेत्त । चत्वारश्चैत्यद्रुमा जम्बूवृक्षप्रमाणा सौधर्मादिषु कल्पेषु तेषा चतुर्षु पार्श्वेषु पल्यकजिनप्रतिमा प्रत्येक तानि वन्दामि ॥ ५०३ ॥

इदानी लोकपालाना नगरस्वरूपमाह,—

सत्ता धट्ठजायणय गतूण दिसासु लोगवालाण ।
णयराणि अजुदसगुणपणाधणवित्थारजुत्ताणि ॥ ५०४ ॥

तत्तो बहुजोयणमध गन्ता दिशासु लोकपालानाम् ।
नगराणि अयुतमगुणितवचनानिस्तारयुतानि ॥ ५०४ ॥

तत्तो बहु । ततो बहुयोजनानि गत्वा दिशासु लोकपालानां नगराणि अयुत १०००० सगुणितवचनविस्तारयुतानि ॥ ५०४ ॥

तत्रैव गणिकामहत्तरीणां पुराण्याह;—

गणिकामहत्तरीण पुराणि तत्थेव अग्गिपहुदीसु ।
विदिसासु लक्खजोयणवित्थारायामसहियाणि ॥५०५॥

गणिकामहत्तरीणां पुराणि तत्रैव अग्निप्रभृतिषु ।
विदिशासु लक्षयोजनविस्तारायामसहितानि ॥ ५०५ ॥

गणिका । गणिकामहत्तरीणां पुराणि तत्रैव स्थाने अग्निप्रभृतिषु विदिक्षु लक्षयोजनानि विस्तारायामसहितानि सन्ति ॥ ५०५ ॥

तासां नामान्याह;—

ताओ चउरो सग्गे कामा कामिणि य पउमगधा य ।
तो होदि अलबुसा सव्विंदपुराणमेस कमो ॥ ५०६ ॥

ताः चतस्रः स्वर्गे कामा कामिनी च पद्मगंधा च ।
ततो भवति अलम्बुषा सर्वेंद्रपुराणामेष क्रमः ॥ ५०६ ॥

ताओ चउ । सौधर्मादिस्वर्गे कामा कामिनी च पद्मगंधा ततोऽलम्बूषेति ताश्चतस्रो भवन्ति सर्वेन्द्रपुराणामेष एव क्रमो ज्ञातव्यः ॥ ५०६ ॥

अथ सौधर्मादिषु गृहोत्सेधं प्रतिपादयति,—

छज्जुगलसेसकप्पे तित्तिसु य अणुद्दिसे अणुत्तरगे ।
गेहुदओ छप्पणसय पण्णास रिण दल चारिमे ॥५०७॥

षट्युगकल्पेषु कल्पेषु त्रिषु च अनुदिशी अनुत्तरे ।
गेहोदय षट्पंचशतं पंचाशद्दलं चरमे ॥ ५०७ ॥

छज्जुगल० । षट्सु युगलेषु शेषकल्पे च त्रिषु ग्रैवेयकेषु अनुदिशायां अनुत्तरे चेति द्वादशस्थानेषु गेहा च षट्शतयोजनानि पंचशतयोजनानि तत उपरि पंचाशद्दलं कर्तव्यं । चरमे स्थाने उपात्यार्द्धं ज्ञातव्यम ॥ ५०७ ॥

अथ देवीनां गेहोत्सेधेन सहनतानां विस्तारायामौ कथयति;—

सत्तपदे देवीण गेहोदय पणसय तु पण्णरिण ।
सव्वगिहद्दिग्घवास उदयस्स य पंचम दसम ॥ ५०८ ॥

सप्तपदे देवीनां गेहोदय पंचशत तु पंचाशद्दलं ।
सर्वगृहदैर्घ्यव्यासौ उदयस्य च पंचमो दशम ॥ ५०८ ॥

सत्तपद । षड्युगलेष्वानते सप्तपदे देवीनां गृहोदय आदौ पंचशत योजनानि उपर्युपरि पंचाशत्पंचाशद्दलं कर्तव्यं । सर्वेषां देवानां देवीनां गृहदैर्घ्यव्यासौ यथासंख्यं उदयस्य पंचमभागो दशमभागश्च ॥ ५०८ ॥

कल्पजमहादेवीनां तत्परिवारदेवीनां च प्रमाणमाह,—

सत्तपदे अट्ठट्ठमहादेवीओ पुधादि मेक्किस्से ।
सगसम सोलसहस्सा देवीओ उवरि अद्धद्धो ॥ ५०९ ॥

सप्तपदेषु अष्टाष्टमहादेव्य पृथक् आदिमे एकस्य ।
स्वसम षोडशसहस्रा दे य उपरि अर्धार्धा ॥ ५०९ ॥

सत्तपदे । सप्तसु पदेष्वष्टाष्टमहादेव्य । पृथक् प्रत्येकमादिमे प्रथमयुगले एकैकस्या देव्या स्वेन सम षोडशसहस्रपरिवारदेव्य उपर्युपर्यर्द्धार्द्धप्रमिता ८ ॥ ५०९ ॥

अथ तासामग्रदेवीनां नामानि गाथाद्वयेनाह,—

सचिपउम सिवसियामा कालिंदीसुलसअज्जुकाणाम
माणुत्ति जेट्ठदेवी सव्वेसिं दक्खिणिंदाण ॥ ५१० ॥

शचि पद्मा शिवा श्यामा कालिन्दी सुलसा अज्जुकानामा ।
भानुरिति ज्येष्ठादेव्यः सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणाम् ॥ ५१० ॥

सचिपउम । शचि पद्मा शिवा श्यामा कालिंदी सुलसा अज्जु
नामा भानुरित्येता ज्येष्ठदेव्यः सर्वेषां दक्षिणेन्द्राणां ॥ ५१० ॥

सिरिमति रामसुसीमा पभावदि जयसेण णामय सुसेण
वसुमित्त वसुधर वरदेवीओ उत्तरिंदाण ॥ ५११ ॥

श्रीमती रामा सुसीमा प्रभावती जयसेना नामा सुषेणा ।
वसुमित्रा वसुधरा वरदेव्यः उत्तरेन्द्राणाम् ॥ ५११ ॥

सिरिमति । श्रीमती रामा सुसीमा प्रभावती जयसेनाख्या सुषेणा । वसु
मित्रा वसुधरेति वरदेव्यः उत्तरेन्द्राणाम् ॥ ५११ ॥

अथ तासामग्रदेवीनां विक्रियाप्रमाणं निरूपयति,—

अट्ठह्न देवीणं पुधपुध सोलससहस्सविक्किरिया ।
मूलसरीरेण सम सेसे दुगुणा मुणेदव्वा ॥ ५१२ ॥

अष्टानां देवीनां पृथक् पृथक् षोडशसहस्रविक्रिया ।
मूलशरीरेण सम शेषे द्विगुणा मन्तव्या ॥ ५१२ ॥

अट्ठह्न सक्सु स्थानेषु आद्यानामष्टानां देवीनां पृथक्पृथक् मूलशरीरेण सम
षोडशसहस्रविक्रिया इत्य... द्विगुणद्विगुणा द्रष्टव्या ज्ञातव्या ॥५१२

इदानीं दक्षिणेन्द्रेषु वल्लभिकाप्रमाणं निरूपयति,—

सदरदु वल्लभिया बत्तीसट्ठेव दो सहस्साइं ।
पयदस अद्धद्धं तेसट्ठी होंति सत्तमगे ॥ ५१३ ॥

सदरद्वेषु वल्लभिका द्वात्रिंशदेव द्वे सहस्राणि ।
पञ्चदशानि अर्धार्धं त्रिषष्टिः भवन्ति सप्तमके ॥ ५१३ ॥

सदरदु । सदरदु द्वयेषु वल्लभिका द्वात्रिंशत्सहस्राणि अष्टसहस्राणि द्विसहस्राणि पञ्चशतानि उपर्यर्धार्धं सप्तमे स्थाने त्रिषष्टिवल्लभिका भवन्ति ॥ ५१३ ॥

तासां वल्लभिकानां प्रासादोत्सेधं तत्प्रासादावस्थानदिशं चाह,—

देवीपासादुदया वल्लभियाणं तु वीसअहियं खु ।
इदरत्थमणिगिहादो वल्लभियावासया पुव्वे ॥ ५१४ ॥

देवीप्रासादोत्सेधात् वल्लभिकानां तु विंशत्यधिकः खलु ।
इन्द्रस्थमणिगृहात् वल्लभिकावासकाः पूर्वस्याम् ॥ ५१४ ॥

देवीपासा । देवीनां प्रासादोत्सेधाद्वल्लभिकानां प्रासादोत्सेधस्तु विंशतियोजनाधिकः खलु । इन्द्रप्रासादात् पूर्वस्यां दिशि वल्लभिकाप्रासादास्तिष्ठन्ति ॥ ५१४ ॥

इन्द्रप्रासादस्य नाभ्यावस्थानमाह,—

अमरावइदिपुरमज्झे थंभगिहासाणदो सुधम्मसहा ।
अट्ठाणमण्डव सयनहल्दाहद्द मेडुमयदुग उदयं ॥ ५१५ ॥

अमरावत्यादिपुरमध्ये स्तम्भगृहेशानतः सुधर्मासभा ।
आस्थानमण्डपः शतनन्दार्धं तु मयूरव उदयः ॥ ५१५ ॥

अमरावत्यादि । अमरावत्यादिपुरमध्ये इन्द्रस्थानगृहादीशानतः सुधर्मासभा

मास्थानमण्डप अस्ति । तस्य दीर्घव्यासौ शतयोजनतद्दलौ तयोर्मिलितयोर्दल उत्सेध स्यात् ॥ ५१५ ॥

अथ आस्थानमण्डपद्वार तदन्तस्थपदार्थान् गाथात्रयेणाह,—

पुव्वुत्तरदक्खिणदिसि तद्दारा अट्ठवास सोलुदया ।
मज्झे हरिसिंहासणमट्ठदेवीणासण पुरदो ॥ ५१६ ॥

पूर्वोत्तरदक्षिणदिशि तद्द्वाराणि अष्टव्यास षोडशोदया ।
मध्ये हरिसिंहासन अष्टदेवीनामासनानि पुरत ॥ ५१६ ॥

पुव्वुत्तर । तस्यास्थानमण्डपस्य पूर्वोत्तरदक्षिणदिशि द्वाराणि सन्ति । तस्य व्यास अष्टयोजनानि उत्सेधस्तु षोडशयोजनानि तन्मध्ये स्थाने हरिसिंहासन । तत्सिंहासनात्पुरत अष्टदेवीनामासनानि स्यु ॥ ५१६ ॥

तव्वाहिं पुव्वादिसु सलोयवालाण परिसतिदयस्स ।
अग्गिजमणेरिदीए तत्तीसाण तु णेरिदिए ॥ ५१७ ॥

तद्बहि पूर्वादिषु स्वलोकपालाना परिषत्त्रितयस्य ।
अग्नियमनैऋत्या त्रयस्त्रिंशना तु नैऋत्याम् ॥ ५१७ ॥

तव्वाहिं । तासा देवीनामासनाद्बहि पूर्वादिषु दिक्षु लोकपालानां सोमयमवरुणकुबेराणा आसनानि सन्ति परिषत्त्रयस्यासनानि १२० ०।१४००० १६००० इन्द्रासनस्य आग्नेययमनैऋत्या दिशि सन्ति त्रायस्त्रिंशद्देवानामासनानि अपि ३३ नैऋत्या दिश्यत्र सन्ति ॥ ५१७ ॥

सेणावइणमवरे समाणियाण तु पवणइसाणे ।
तणुरक्खाण भद्दासणाणि चउदिसगयाण वाहिं॥५१८॥

सेनापतीनामपरस्या सामानिकाना तु पवनैशान्ये ।
तनुरक्षाणा भद्रासनानि चतुर्दिशागतानि बहि ॥ ५१८ ॥

सेणावईण । सेनापतीनां ७ भासनान्यपरस्यां दिशि सन्ति । सामानिकानामासनानि वायव्यां दिशि ४२००० ऐशान्यां दिशि ४२००० एतस्मादीशे तनुरक्षाणां भद्रासनानि चतुर्दिग्गतानि सन्ति ८४०००।८४०००।८४०००।८४००० ॥ ५१८ ॥

तन्मण्डपाग्रस्थमानस्तम्भस्वरूपमाह,—

तस्साग्गा इगिवासो छत्तीसुदओ सपीढ वज्जमओ ।
माणत्थम्भो गोरुदविस्थारय धारकोडिजुदो ॥ ५१९ ॥

तस्याग्रे एकव्यास: द्वात्रिंशदुदय: सपीठ: वज्रमय: ।
मानस्तम्भ: क्रोशविस्तार: द्वादशकोटियुत: ॥ ५१९ ॥

तस्साग्गा । तन्मण्डपस्याग्रे एकयोजनव्यासः षट्त्रिंशद्योजनोदयः पीठसहितो वज्रमयः क्रोशविस्तारो द्वादशधारायुतो मानस्तम्भोऽस्ति ॥ ५१९ ॥

अथ तन्मानस्तम्भकरण्डकस्वरूपं गाथाद्वयेनाह,—

चिट्ठंति तत्थ गोरुदचउत्थविस्थार कोसदीहजुदा ।
तित्थयराभरणचिदा करण्डया रयणसिक्कधिया ॥५२०॥

तिष्ठन्ति तत्र क्रोशचतुर्थविस्तारा: क्रोशदैर्घ्ययुता: ।
तीर्थकराभरणचिता: करण्डका: रत्नशिक्यधृता: ॥ ५२० ॥

चिट्ठंति । तत्र मानस्तम्भे क्रोशचतुर्थांशविस्तारा: क्रोशदैर्घ्ययुता: तीर्थकराभरणचिता रत्नशिक्यधृता: करण्डकास्तिष्ठन्ति ॥ ५२० ॥

तुरियजुदविजुदछज्जोयणाणि उवरिं अधोवि ण करण्डा ।
सोहम्मदुगे भरहेरावदतित्थयरपडिबद्धा ॥ ५२१ ॥

तुरीययुतवियुतषड्योजनानि उपरि अधोऽपि न करण्डा: ।
सौधर्मद्विके भरतैरावततीर्थकरप्रतिबद्धा: ॥ ५२१ ॥

तुरिय । तन्मानस्तम्भस्योपरि योजनचतुर्थांशयुक्त ¼ षड्योजनेषु २५/४ तस्याधश्च योजनचतुर्थांश ¼ विमुक्तषड्योजनेषु २३/४ करण्डा न सन्ति । सौधर्मद्विके तौ मानस्तम्भौ भरतैरावततीर्थकरप्रतिबद्धौ स्याताम् ॥ ५२१ ॥

साणक्कुमारजुगले पुव्ववरविदेहतित्थयरभूसा ।
ठविदच्चिदा सुरेहिं कोडीपरिणाह बारसो ॥ ५२२ ॥

सानत्कुमारयुगले पूर्वापरविदेहतीर्थकरभूषा ।
स्थापितार्चिता। सुरैः कोटिपरिणाह द्वादशांश ॥ ५२२ ॥

साणक्कुमार । सनत्कुमारयुगले मानस्तम्भयो पूर्वापरविदेहतीर्थकरभूषा स्थापितार्चिता सुरैः [illegible] परिधिर्द्वादशांशो भवति ॥ ५२२ ॥

अथ इन्द्रोत्पत्तिगृहस्वरूपमाह,–

पासे उववादगिहं हरिस्स अडवास दीहउदयजुदे ।
दुगरयणसयण मज्झे वरजिणगेहं बहुकूडं ॥ ५२३ ॥

पार्श्वे उपपादगृहं हरेः अष्टव्यासदैर्घ्योदययुतम् ।
द्विरत्नशयनं मध्ये वरजिनगेहं बहुकूटम् ॥ ५२३ ॥

पास । तन्मानस्तम्भस्य पार्श्वे अष्टयोजनव्यासदैर्घ्योदययुतं मध्ये द्विरत्नशयनयुतं [illegible] । तत्पार्श्वे बहुकूटं वरजिनगेहं [illegible] ॥ ५२३ ॥

[illegible] गाथाद्वयेन च,–

दक्खिणउत्तरइंदा सोहम्मीसाण एव जायंते ।
तहिं इन्दस्सदिसहिया छच्चउलक्खं विमाणाणं ॥ ५२४ ॥

[illegible] जायेते ।
[illegible] विमानानाम् ॥ ५२४ ॥

दक्षिणेन्द्र-दक्षिणोत्तरकल्पस्थदेवानां देव्य सौधर्मैशान एव जायन्ते। तत्र सौधर्मद्वये शुद्धदेवीसहिता षट्लक्षवतुरलक्षविमाना सन्ति॥ ५२४॥

तद्देवीओ पच्छा उवरिमदेवा णयंति सगठाणं।
सेसविमाणा छच्चदुवीसलक्खा देवदेविसम्मिस्सा॥५२५॥

तद्देवी पश्चादुपरिमदेवा नयंति स्वकस्थानं।
शेषविमाना षट्चतुर्विंशल्लक्षा देवदेविसंमिश्रा॥ ५२५॥

तद्देवीओ। तास्तु देवी पश्चादुपरिमदेवा नयंति स्वकीयस्वकीयस्थानं शेषविमाना षडिशतिलक्षा चतुर्विंशतिलक्षा देवदेवीसम्मिश्रा भवति५२५

इदानीं कल्पवासिनां प्रविचारं विचारयति,—

दुसु दुसु तिचउक्केसु य काये फास य रूव सद्दे य।
चित्तेवि य पडिचारा अप्पडिचारा हु अहमिंदा॥५२६

द्वयोर्द्वयो त्रिचतुष्केषु च काये स्पर्शे च रूपे शब्दे च।
चित्तेपि च प्रवीचारा अप्रतिचारा हि अहमिंद्रा॥ ५२६॥

दुसु दुसु। सौधर्मादिद्वयो २ र्द्वयो २ स्त्रिचतुष्केषु च १२ देवदेवीनां यथासंख्यं काये स्पर्शे रूपे शब्दे चित्तेऽपि च प्रवीचारा। तत उपरि अहमिन्द्रा अप्रवीचारा एव॥ ५२६॥

अनन्तरं वैमानिकदेवानां विक्रियाशक्तिज्ञानविषयं च गाथाद्वयेनाह,—

दुसु दुसु तिचउक्केसु य णवचोद्दसगे विगुणव्वणा सत्ती।
पढमखिदीदो सत्तमखिदिपेरंतो त्ति अवही य॥ ५२७॥

द्वयोर्द्वयो त्रिचतुष्केषु च नवचतुर्दशसु विकुर्वणा शक्ति।
प्रथमक्षितित सप्तमक्षितिपर्यंत इति अवधिश्च॥ ५२७॥

दुसु दुसु । द्वयो २ द्वयो २ त्रिचतुष्केषु च १२ ग्रैवेयकादिषु नवसु अनुदिशादिषु चतुर्दशविमानेषु सप्तस्थानेषु विकुर्वणाशक्तियथासंख्य प्रथम-पृथिवीत आरभ्य सप्तमाक्षितिपर्यन्त ज्ञातव्या अवधिज्ञान च तथा ज्ञातव्यम् । उपरि तद्ज्ञान कथमिति चेत् । देवा स्वकीयस्वकीयकल्पविमानध्वजदण्डा दुपरि न पश्यन्ति । नवानुत्तरविमानवासिदेवा आत्मीयात्मीयविमान-शिखरादधो यावदाद्य वातवलय तावत्किंचिन्न्यूनचतुर्दशरज्ज्वायामेकर ज्जुविस्तारा सर्वलोकनालि पश्यन्ति ॥ ५२७ ॥

सव्व च लोयणालि पस्सति अणुत्तरेसु जे देवा ।
सगखेत्ते य सकम्मे रूवगदमणतभागो य ॥ ५२८ ॥

सर्वा च लोकनालिं पश्यति अनुत्तरेषु ये देवा ।
स्वक्षेत्रे च स्वकर्म रूपगतमनतभाग च ॥ ५२८ ॥

सव्व च । पञ्चानुत्तरेषु ये देवास्ते सर्वा च लोकनालिं पश्यन्ति । अवधेर्क्षेत्रे प्रकार उच्यते । स्वक्षेत्रे एकप्रदेशोऽपनेतव्य । स्वकर्मणि एको ध्रुवभागहारो दातव्य यावत्प्रदेशसमाप्ति । अनेनावधिविषयद्रव्यभेद सूचित । एतदर्थं विशद करोति । कल्पसुराणा स्वस्वावधिक्षेत्र विगतविस्रसोपचयमवधिज्ञानावरणद्रव्य च सस्थाप्य $\frac{३}{१ ई १}$ स $\frac{३}{७}\frac{१}{४}\frac{१}{२}$ एकप्रदेशमपनीय एकेन ध्रुवहारेण भजेत् यत्स्वस्वावधिविज्ञानविषयद्रव्यप्रमाण भवति ॥ ५२८ ॥

अथ वैमानिकदेवानां जननमरणान्तर निरूपयति,—

दुगदुसु तिचउक्केसु य सेसे जणणतर तु चवणे य ।
सत्तदिण पक्ख मास दुगचदुछम्मासग होदि ॥५२९ ॥

द्वयोर्द्वयो त्रिचतुष्केषु च शेषे जननान्तर तु च्यवने च ।
सप्तदिनानि पक्ष मास द्विकचतु षण्मासक भवति ॥ ५२९ ॥

इगदुगदुग। दयोर्द्वयोस्त्रिचतुष्केषु शेषे चेति षट्सु स्थानेषु जननरहितान्तरकालो मरणरहितान्तरकालश्च यथासंख्यं सप्तदिनानि पक्ष मास द्विमास चतुर्मासं षण्मास भवति ॥ ५२९ ॥

अथ द्वादीनामुत्कृष्टान्तरमाह,—

वरविरह छम्मास इंदमहादेविलोयपालाण ।
चउ तेत्तीससुराण तणुरक्खसमाणपरिसाण ॥५३०॥

वरविरह षण्मास इन्द्रमहादेवीलोकपालानाम् ।
चतुः त्रयस्त्रिंशत्सुराणां तनुरक्षसमानपारिषदानाम् ॥ ५३० ॥

वरविरहं। इन्द्राणां तन्महादेवीनां लोकपालानां चोत्कृष्टेन विरहकालं षण्मासं जानीहि । त्रयस्त्रिंशत्सुराणां तनुरक्षाणां सामानिकानां पारिषदानां च चतुर्मासं विरहकालं जानीहि ॥ ५३ ॥

अथ देवविशेषाणां भवस्थानं प्रतिपादयति,—

ईसाणलांतवच्चुदकप्पोत्ति कमेण होंति कंदप्पा ।
किब्बिसिय आभिजोग्गा सगकप्पजहण्णठिदिसहिया ।
ईशानलान्तवाच्युतकल्पान्तं क्रमेण भवंति कंदर्पाः ।
किल्बिषिका आभियोग्या स्वकल्पजघन्यस्थितिसहिता ५३१

ईसाण । अत्र विटलम्भणकांदर्पपरिणामयुक्ताः स्वयोग्यशुभकर्मवशात् ईशानकल्पपर्यन्तं कंदर्पदेवा भूत्वा उत्पद्यन्ते न तत उपरि । अत्र गीतोपजीव लम्भणकैल्बिषिकपरिणामयुक्ताः स्वयोग्यशुभकर्मवशात् लांतवकल्पपर्यंत सवा [illegible] किल्बिषिका एवोत्पद्यन्ते न तत उपरि । अत्र स [illegible] स्वल्पव्यापा [illegible]भिया[illegible]भावनायुक्ता [illegible] अ [illegible] कल्पपर्यन्त [illegible] याभियोग्यदेवा भूत्वा [illegible] सब [illegible] स्थिति [illegible] सहिता [illegible] ॥ ५३१ ॥

अथ प्रथमादिषु स्थितिविशेषमाह,—

सोहम्म वर पल्लं वरमुवहिदुगं सत्त दस य चोद्दसयं ।
बावीसोत्ति दुवड्ढी एक्केक्कं जाव तेत्तीसं ॥ ५३२ ॥

सौधर्मे वरं पल्यं अवरं उदधिद्विकं सप्त दश च चतुर्दशकं ।
द्वाविंशतिरिति द्विवृद्धिः एकैकं यावत्त्रयस्त्रिंशत् ॥ ५३२ ॥

सोहम्म । सौधर्मयुगले जघन्यमायुः पल्यमुत्कृष्टं तु प्रत्येकं सागरोपमद्वयं । इत उपरि सप्तादिक्रमेण कथयति—सनत्कुमारयुगले प्रत्येकं सप्त सागरोपमाणि ब्रह्मयुगले प्रत्येकं दशसागरोपमाणि लान्तवयुगले प्रत्येकं चतुर्दशसागरोपमाणि इत उपरि युगलयुगलं प्रति प्रत्येकं द्वाविंशतिसागरोपमपर्यन्तं द्विसागरोपम वृद्धिर्ज्ञातव्या । इत अच्युतादुपरि यावत्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमं तावदेकैकवृद्धि र्ज्ञातव्या ॥ ५३२ ॥

अथ घातायुष्कसम्यग्दृष्टेः पटलं प्रति चोत्कृष्टायुष्यमाह,—

सम्मे घादेऊण सायरदलमहियमा सहस्सारा ।
जलहिदलमुडुवराऊ पडलं पडि जाण हाणिचयं ५३३

सम्यक्त्वे घातायुषि सागरदलमधिकमा सहस्रारात् ।
जलधिदलं ऋतुवरायुः पटलं प्रति जानीहि हानिचयम् ॥ ५३३ ॥

सम्म घा । सम्यग्दृष्टौ घातायुषि सति तस्य स्वकीयकल्पोत्कृष्टायुष सकाशादन्तर्मुहूर्तोन सागरदलमधिकं भवतीमा २ ॥ एवं सहस्रारपर्यन्तं ज्ञातव्य तत उपरि घातायुष्कस्योत्पत्तिर्नास्ति । सौधर्मयुगलस्य प्रथमपटले ऋत्विन्द्रके अर्धसागरोपमं उत्कृष्टायुः इति प्रथमचरमपटलयोरायुर्धृत्वा पटलं प्रति हानि चयं जानीहि तत्कथं । घातायुष्कं तावत् सौधर्मादियुगले आदौ

१। १। २१। ३१३। । । अत ५।१ ।२१।२ । ।३७।२ ।१२
२।२। २।२।२। । । २।२। ।२।२।२। ।०

पुद्वे $\frac{२।१ १।४।१।१।३।२}{१।२ १।१।१।१।१।१}$ ऋतुणन्द्वा २० सनत्कुमारादियुगलप्रानतकल्पच रमपटलस्यथास्थितत्र सत्र रूपयुने समादिरव ७।४।२।१।१।३।२ हिद्भिम्मि रूपिच्छदमिति कृते सौधर्मयुगले हानिचयमेतत् । $\frac{३}{१६}$ अद्धसागरोपम- स्योपरि समानछेदेन मेलयत् $\frac{३३}{१६}$ एतद्विमलं तस्योत्कृष्टायुः स्यात् । एवमुपरि सर्वत्र पटलं प्रत्यानेतव्यं । सनत्कुमारादिक हानिचयं $\frac{१}{१२}$ ब्रह्मयुग्मे $\frac{१}{२}$ लांतवयुगे १ शुक्रयुग्मे २ शतारद्वन्द्वे २ आनतद्वय $\frac{१}{३}$ आरणद्वय $\frac{१}{३}$ । एवं हानिचयं ज्ञात्वा तत्तत्पटलं प्रति आयुरानेतव्यं । अथातायुष्के तु आदि ३ अन्त २ विशेषे $\frac{१}{२}$ रूनणन्द्वा १० हिद्भिम्म हानिचय $\frac{१}{२०}$ त्रिभिरपवर्तित एव $\frac{१}{२०}$ एत द्धानिचयं अर्द्धसागरोपमस्योपरि स्वस्वरूपपटलपर्यन्तं मेलयेत् एव । सनत्कुमारा दारभ्याच्युतपर्यन्तं तत्तत्पटलायुर्हानिचय ज्ञातव्यं ॥ ५३३ ॥

अथ लौकान्तिकानां निवासस्थानमाह,—

णिवसंति बह्मलोयस्सते लोयंतिया सुरा अट्ठ ।
ईसाणादिसु अट्ठसु वट्टेसु पइण्णएसु कमा ॥ ५३४ ॥

निवसन्ति ब्रह्मलोकस्यान्ते लौकान्तिकाः सुरा अष्ट ।
ईशानादिषु अष्टसु वृत्तेषु प्रकीर्णकेषु क्रमात् ॥ ५३४ ॥

णिवसंति । ब्रह्मलोकस्यान्ते अष्टकुलाः लौकान्तिकाः सुरा ईशानादि- ष्वष्टदिक्षुवृत्तेषु प्रकीर्णकेषु यथाक्रमं निवसन्ति ॥ ५३४ ॥

अथ तदष्टकुलसंज्ञा संख्या च गाथाद्वयेनाह —

सारस्सद आइच्चा सत्तसया सगजुदा य वह्निरुणा ।
सगसगसहस्समुवरि दुसु दुसु दादुगसहस्सयाहिकमा ॥

सारस्वता आदित्या सप्तशतानि सप्तयुतानि च वह्न्यरुणा ।
सप्तसप्तसहस्रमुपरि द्वयोर्द्वयोः द्विद्विसहस्राधिकक्रमम् ॥ ५३५ ॥

उपरिद्व पल्यार्धं मधने ध्यतरादि क्रमेणाधिक ।
घातीनि मिश्रे घाते पल्यासंख्यं तु सर्वत्र ॥ ५४१ ॥

उवहि दलं । घातायुष्के सम्यग्दृष्टौ मधने व्यन्तरादिघातिस्कपोष यथाक्रमं तत्र तत्रोक्तायुषः सकाशादर्द्धसागरोपमं पल्यार्द्धं चाधिकं ज्ञातव्यम् । घातायुष्के मिथ्यादृष्टौ तु पल्यासंख्यातभागं तथाधिकं ज्ञेयं । एवं सर्वत्र कल्पेष्वपि ॥ ५४१ ॥

अथ कल्पस्त्रीणां स्थितिप्रमाणं कथयति,—

साहियपल्लं अवरं कप्पदुगित्थीण पणग पढमवरं ।
एक्कारसे चउक्के कप्पे दोसत्तपरिवड्ढी ॥ ५४२ ॥

साधिकपल्यं अवरं कल्पद्विके स्त्रीणां पंचकं प्रथमवरं ।
एकादशे चतुष्के कल्पे द्विसप्तपरिवृद्धिः ॥ ५४२ ॥

साहिय । सौधर्मकल्पद्विकस्त्रीणामवरमायुः साधिकपल्यं प्रथमे सौधर्मे वरमायुः पंचपल्यं । अथ ईशानाद्येकादशे कल्पे आनतादिचतुःकल्पे च यथासंख्यं सौधर्मोक्तपंचपल्यात् द्विवृद्धिः सप्तपरिवृद्धिश्च ज्ञातव्या ॥ ५४२ ॥

इदानीं देवानां शरीरोत्सेधमाह,—

दुसु दुसु चदु दुसु दुसु चउ तितिसु सेसेसु देहउस्सेहो ।
रयणीण सत्त छप्पणचत्तारि दलेण हीणकमा ॥५४३॥

द्वयोर्द्वयोः चतुर्षु द्वयोर्द्वयोः चतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेषु देहोत्सेधः ।
रत्नीनां सप्त षट् पंचचत्वारः दलेन हीनक्रमः ॥ ५४३ ॥

दुसु दुसु । द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेष्विति दशसु स्थानेषु देहोत्सेधो यथासंख्यं सप्त ७ षट् ६ पंच ५ चत्वारो ४ रत्नयः तत उपरि अर्द्धहस्तहीनक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ५४३ ॥

अथ तेषामुच्छ्वासाहारकालौ निरूपयति,—

पक्ख वाससहस्स सगसगसायरसलाहि सगुणियं।
उस्सासाहाराणं कमेण माण विमाणेसु ॥ ५४४ ॥

पक्षो वर्षसहस्र स्वकस्वकसागरशलाकाभि सगुणित ।
उच्छ्वासाहाराणा क्रमेण मान विमानेषु ॥ ५४४ ॥

पक्खं वास । पक्षो १५ वर्षसहस्र १००० सोहम्मदुर्ग पढ़ वरमुवहि विसत्तेस्यायुरुत्कस्वकीयस्वकीयसागरशलाकाभि संगुणित दिन ३० वर्ष २००० उच्छ्वासाहाराणां प्रमाण विमानेषु क्रमेण ज्ञातव्यम् ॥ ५४४ ॥

अथ गुणस्थानमाश्रित्य देवगतावुत्पद्यमानानां स्वरूप गाथात्रयेणाह,—

णरतिरिय देसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गथा।
ण य अयद देसमिच्छा गेवेज्जतोत्ति गच्छंति ॥ ५४५ ॥

नरतिर्यंच देशायता उत्कृष्टेनाच्युताव निर्ग्रन्था ।
न च अयता देशमिथ्या ग्रैवेयांत इति गच्छति ॥ ५४५ ॥

णरतिरिय । असयता देशसयता वा नरास्तिर्यञ्चश्चोत्कृष्टेनाच्युतपर्यन्त गच्छन्ति । द्रव्यनिर्ग्रन्था नरा भावेनासयता भावेन देशसयता भावेन मिथ्यादृष्टयो वा उपरिमग्रैवेयकपर्यन्त गच्छन्ति ॥ ५४५ ॥

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा।
सोहम्मदुग मिच्छा भवणतिय तावसा य वरं ॥५४६॥

सर्वार्थांत सुदृष्टि महाव्रती भोगभूमिजा सम्यञ्च ।
सौधर्मद्विक मिथ्या भवनत्रय तापसा च वर ॥ ५४६ ॥

सव्वट्ठा। सर्वार्थसिद्धिपर्यन्त सम्यग्दृष्टिर्द्रव्यभावरूपेण महाव्रती गच्छति। भोगभूमिजाः सम्यग्दृष्टय सौधर्म द्वय गच्छन्ति न तत उपरि । भोगभ

उपधिन्त्र पल्यार्धं भवने व्यन्तरद्विके क्रमेणाधिकं ।
सम्यक्त्वे मिथ्ये घाते पल्यासंख्य तु सर्वत्र ॥ ५४१ ॥

उवहिदल । घातायुष्के सम्यग्दृष्टौ भवने व्यन्तर ज्योतिष्कयोश्च यथाक्रम तत्र तत्रोक्तायुष सकाशादर्द्धसागरोपम पल्यार्द्ध चाधिक ज्ञातव्यम् । घातायुष्के मिथ्यादृष्टौ तु पल्यासंख्यातभाग तथाधिक ज्ञेय । एवं सर्वत्र कल्पेष्वपि ॥ ५४१ ॥

अथ कल्पस्त्रीणा स्थितिप्रमाण कथयति,—

साहियपल्ल अवर कप्पदुगित्थीण पणग पढमवर ।
एक्कारसे चउक्के कप्पे दोसत्तपरिवड्ढी ॥ ५४२ ॥

साधिकपल्य अवर कल्पद्विके स्त्रीणा पचक प्रथमवर ।
एकादशे चतुष्के कल्पे द्विसप्तपरिवृद्धि ॥ ५४२ ॥

साहिय । सौधर्मकल्पद्विकस्त्रीणामवरमायु साधिकपल्य प्रथमे सौधर्मे वरमायु पचपल्य । अथ ईशानाद्येकादश कल्पे आनतादिचतुष्कल्पे च यथासंख्य सौधर्मोक्तपचपल्यात् द्विवृद्धि सप्तपरिवृद्धिश्च ज्ञातव्या ॥ ५४२ ॥

इदानीं देवाना शरीरोत्सेधमाह,—

दुसु दुसु चदु दुसु दुसु चउ तितिसु सेसेसु देहउस्सेहो ।
रयणीण सत्त छप्पणचत्तारि दलेण हीणकमा ॥५४३॥

द्वयोर्द्वयो चतुर्षु द्वयोर्द्वयो चतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेषु देहोत्सेध ।
रत्नीना सप्त षट् पचचत्वार दलेन हानिक्रम ॥ ५४३ ॥

दुसु दुसु । द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु द्वयोर्द्वयोश्चतुर्षु त्रिस्त्रिषु शेषेष्विति दशसु स्थानेषु देहोत्सेधो यथासंख्यं सप्त ७ षट् ६ पच ५ चत्वारो ४ रत्नय तत उपरि अर्द्धहस्तहीनक्रमो ज्ञातव्य ॥ ५४३ ॥

नरतिर्यग्मतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवाः।
न लभन्ते ते पदवीं त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणाम्॥ ५४९॥

णरतिरिय। नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवास्ते त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीं न लभन्ते॥ ५४९॥

अथ देवानामुत्पत्तिस्वरूपमाह,—

सुहसयणग्गे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे।
अंतोमुहुत्त पुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा॥ ५५०॥

सुखशयनाग्रे देवा जायंते दिनकर इव पूर्वनगे।
अंतमुहूर्ते पूर्णा सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहा॥ ५५०॥

सुहसयण। पूर्वाचले दिनकर इवान्तर्मुहूर्त बर्द्धपर्याप्त्या पूर्णाः सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहास्ते देवाःसुखशयनाग्रे जायन्ते॥ ५५०॥

अथ तत्रोत्पन्नानां तदनंतरं कृत्यविशेषं गाथात्रयेणाह,—

आणदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ स पत्तं।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा॥ ५५१॥

आनन्दतूर्यजयस्तुतिरवेण जन्म विबुध्य स्वं प्राप्तं।
दृष्ट्वा सपरिवारं गतजन्म अवधिना ज्ञात्वा॥ ५५१॥

आनद। आनन्दतूर्यरवेण जयस्तुतिरवेण चेदं देवजन्मेति विबुध्य स्वं प्राप्तं स्वपरिवारं च दृष्ट्वा अवधिज्ञानेन गतजन्म च ज्ञात्वा॥ ५५१॥

धम्मं पससिदूण ण्हादूण दहे भिसेयलंकारं।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी॥ ५५२॥

धर्मं प्रशस्य स्नात्वा ह्रदे अभिषेकालङ्कारं।
लब्ध्वा जिनाभिषेकं पूजां कुर्वंति सद्दृष्टयः॥ ५५२॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] च [illegible] ।

[illegible] ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] न [illegible] ॥

नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवाः।
न लभन्ते ते पदवीं त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणाम् ॥ ५४९ ॥

णरतिरिय। नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवास्ते त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीं न लभन्ते ॥ ५४९ ॥

अथ देवानामुत्पत्तिस्वरूपमाह,—

सुहसयणगे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे।
अंतोमुहुत्त पुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥ ५५० ॥

सुखशयनाग्रे देवा जायन्ते दिनकर इव पूर्वनगे।
अन्तर्मुहूर्ते पूर्णाः सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहाः ॥ ५५० ॥

सुहसयण। पूर्वाचले दिनकर इवान्तर्मुहूर्ते षट्पर्याप्त्या पूर्णाः सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहास्ते देवास्सुखशयनाग्रे जायन्ते ॥ ५५० ॥

अथ तत्रोत्पन्नानां तदनंतर कृत्यविशेषं गाथात्रयेणाह,—

आणंदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ म पत्तं।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा ॥ ५५१ ॥

आनन्दतूर्यजयस्तुतिरवेण जन्म विबुध्य स्व प्राप्तं।
दृष्ट्वा सपरिवारं गतजन्म अवधिना ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

आनंद। आनन्दतूर्यरवेण जयस्तुतिरवेण चेदं देवजन्मेति विबुध्य स्वं प्राप्तं स्वपरिवारं च दृष्ट्वा अवधिज्ञानेन गतजन्म च ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

धम्मं पसंसिदूण ण्हादूण दहे भिसेयलंकारं।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी ॥ ५५२ ॥

धर्मं प्रशंस्य स्नात्वा ह्रदे अभिषेकालंकारं।
लब्ध्वा जिनाभिषेकं पूजां कुर्वंति सद्दृष्टयः ॥ ५५२ ॥

मिता मिथ्यादृष्टयो भवनत्रयं यान्ति न तत उपरि । दंशनाद्याचारविशिष्टाः
पणा उत्कृष्टेन भवनत्रयं यान्ति न तत उपरि ॥ ५४६ ॥

चरया य परिव्वाजा बम्होत्तरपदोत्ति आजीवा ।
अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जांति ॥ ५४७ ॥

चरकाश्च परिव्राजा ब्रह्मोत्तरपदान्तं आजीवाः ।
अनुदिशानुत्तरतश्च्युता न केशवपदं यान्ति ॥ ५४७ ॥

चरणाय । नग्नाण्डलक्षणाश्चरका एकदण्डित्रिदण्डिलक्षणाः परिव्राजकाः ब्रह्मकल्पपर्यन्तं यान्ति गच्छन्ति न तत उपरि। कञ्जिकादिभोजिन आजीवा अच्युतकल्पपर्यन्तं यान्ति न तत उपरि । साम्प्रतं दृश्यमानच्युतानामुत्पत्तिस्वरूपमाह—अनुदिशानुत्तरविमानेभ्यश्च्युताः केशवपदं वासुदेवप्रतिवासुदेवपदं न यान्ति ॥ ५४७ ॥

अथातश्च्युत्वा निर्वाणं गच्छतां नामान्याह,—

सोहम्मो वरदेवी सलोगपाला य दक्खिणमरिंदा ।
लोयंतिय सव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुदिं जांति ॥ ५४८ ॥

सौधर्मो वरदेवी सलोकपालाश्च दक्षिणामरेन्द्राः ।
लौकान्तिकाः सर्वार्थाः ततश्च्युता निर्वृत्तिं यान्ति ॥ ५४८ ॥

सोहम्मो । सौधर्मेन्द्रस्तस्य पट्टदेवी शची तस्य सोमादिलोकपाला दक्षिणामरेन्द्राः सर्वे लौकान्तिकाः सर्वे सर्वार्थसिद्धिजाः सर्वे ततो देवगतेश्च्युता नियमेन निर्वृतिं यान्ति ॥ ५४८ ॥

अथ त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीमप्राप्नुवतां नामान्याह,—

णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा ।
ण लहंते ते पदवि तेवट्ठिसलागपुरिसाण ॥ ५४९ ॥

नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवाः ।
न लभन्ते ते पदवीं त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणाम् ॥ ५४९ ॥

णरतिरिय । नरतिर्यग्गतिभ्यां भवनत्रयाच्च निर्गता जीवास्ते त्रिषष्टिशलाकापुरुषाणां पदवीं न लभन्ते ॥ ५४९ ॥

अथ देवानामुत्पत्तिस्वरूपमाह,—

उववादगिहे देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे ।
अंतोमुहुत्त पुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥ ५५० ॥

सुखशयनगृहे देवा जायन्ते दिनकर इव पूर्वनगे ।
अन्तर्मुहूर्ते पूर्णा सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहाः ॥ ५५० ॥

सुहसयण । पूर्वाचले दिनकर इवान्तर्मुहूर्ते बह्पर्याप्त्या पूर्णाः सुगन्धिसुखस्पर्शशुचिदेहास्ते देवाःसुखशयनगृहे जायन्ते ॥ ५५० ॥

अथ तत्रोत्पन्नानां तदनंतरं कृत्यविशेषं गाथात्रयेणाह,—

आणदतुरजयथुदिरवेण जम्मं वियुज्झ स पत्त ।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा ॥ ५५१ ॥

आनन्दतूर्यजयस्तुतिरवेण जन्म विबुध्य स्वं प्राप्तं ।
दृष्ट्वा सपरिवारं गतजन्म अवधिना ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

आनद । आनन्दतूर्यरवेण जयस्तुतिरवेण च स्वं जन्मप्राप्तिं विबुध्य स्वं प्राप्तं स्वपरिवारं च दृष्ट्वा अवधिज्ञानेन गतजन्म च ज्ञात्वा ॥ ५५१ ॥

धम्मं पसंसिदूण ण्हादूण दहे मिसेयलंकारं ।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी ॥ ५५२ ॥

धर्मं प्रशस्य स्नात्वा ह्रदे अभिषेकालंकारं ।
लब्ध्वा जिनाभिषेकं पूजां कुर्वन्ति सद्दृष्टयः ॥ ५५२ ॥

धम्म पसत्ति। धर्मं प्रशस्य ह्रदे स्नात्वा पट्टाभिषेकमलंकारं च लब्ध्वा सहृदय स्वयमेव जिनाभिषेक पूजा च कुर्वंति ॥ ५५२ ॥

सुरबोहियावि मिच्छा पच्छा जिणपूजण पकुव्वंति ।
सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥ ५५३ ॥

सुरबोधिता अपि मिथ्या पश्चाज्जिन नपूजन प्रकुर्वंति ।
सुखसागरमध्यगता देवा न विन्दंति गतकालं ॥ ५५३ ॥

सुरबोहिया। मिथ्यादृष्टय सुरप्रबोधिता अपि पश्चाज्जिनपूजां प्रकुर्वन्ति ते सर्व देवाः सुखसागरमध्यगता सन्तो गतकालं न विन्दन्ति॥५५३॥

अथ तेषां देवानां सत्कृत्यमाह,—

महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा।
अहमिंदा तत्थ ठिया णमंति मणिमउलिघडिदकरा

महापूजासु जिनानां कल्याणेषु च प्रयांति कल्पसुरा ।
अहमिंद्रा तत्र स्थिता नमंति मणिमौलिघटितकरा ॥५५४॥

मह। जिनानां महापूजासु तेषां पंचमहाकल्याणेषु च कल्पजा सुरा प्रयांति। अहमिंद्रास्तु तत्र स्थिता एव मणिमौलिघटितकरा संतो नमंति ॥ ५५४ ॥

अथ सुरादिसंपत् केषां भवतीत्युक्त आह —

विविहतवरयणभूसा णाणसुची सीलवत्थसोम्मंगा।
जं तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥५५५॥

विविधतपोरत्नभूषा ज्ञानशुचयः शीलवस्त्रसौम्यांगा ।
यं तेषामेव वश्या सुरलक्ष्मी सिद्धिलक्ष्मीश्च ॥ ५५५ ॥

दिविज । ... विविधरत्नानुत्तराणां च अनुत्तर ईषत्प्राग्भारेति ... इत्युक्तं सिद्धिक्षेत्रं च इत्यन्तं भवति ॥ ५५५ ॥

इदानीं तत्स्वरूपं निरूपयति —

तिहुवणमुड्ढारूढा ईसिपभारा धरट्ठमी रुंदा ।
दिग्घा इगिसगरज्जू अडजोयणपमिदबाहल्ला ॥ ५५६ ॥

त्रिभुवनमूर्धारूढा ईषत्प्राग्भारा धराष्टमी रुन्द्रा ।
दीर्घा एकसप्तरज्जू अष्टयोजनप्रमितबाहल्या ॥ ५५६ ॥

तिहुवण । त्रिभुवनमूर्धारूढा ईषत्प्राग्भारा अष्टमी धरा सा रुन्द्रा दैर्घ्ये च एकसप्तरज्जू भवतः । तस्या बाहल्यमष्टयोजनमितं ॥ ५५६ ॥

अथ तन्मध्यवर्ति सिद्धक्षेत्रस्वरूपं गाथाद्वयेनाह —

तम्मज्झे रुप्पमयं छत्तायारं मणुस्समहिवासं ।
सिद्धक्खेत्तं मज्झट्ठवेहं कमहीणं वेहुलियं ॥ ५५७ ॥

तन्मध्ये रूप्यमयं छत्राकारं मनुष्यमहीव्यासम् ।
सिद्धक्षेत्रं मध्याष्टवेधं क्रमहीनं बाहुल्यम् ॥ ५५७ ॥

तम्मज्झ । तन्मध्ये रूप्यमयं छत्राकारं मनुष्यक्षेत्रव्यासं सिद्धक्षेत्रमस्ति । मध्येऽस्य अष्टयोजनवेधं अन्यत्र सर्वत्र क्रमहीनं ज्ञातव्यम् ॥ ५५७ ॥

उत्ताणट्ठियमंते पत्तं व तणु तदुवरि तणुवादे ।
अट्ठगुणड्ढा सिद्धा चिट्ठंति अणंतसुहतित्ता ॥ ५५८ ॥

उत्तानस्थितमन्ते पात्रमिव तनु तदुपरि तनुवाते ।
अष्टगुणाढ्याः सिद्धाः तिष्ठन्ति अनन्तसुखतृप्ताः ॥ ५५८ ॥

उत्ताण । अन्ते तनूत्तानस्थितपात्रमिव क्षेत्रविशेषं तस्य सिद्धिक्षेत्रस्योपरितनुवाते अष्टगुणाढ्या अनन्तसुखतृप्ताः सिद्धास्तिष्ठन्ति ॥ ५५८ ॥

अथ [illegible] —

[illegible] आर्जिता ।
तित्थ [illegible] ॥ ५५९ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५५९ ॥

अर्थ । [illegible] ॥ ५५९ ॥

चक्किकुरुफणिसुरेंदेसहमिंदे जं सुहं तिकालभवं ।
तत्तो अणंतगुणिदं सिद्धाणं खणसुहं होदि ॥ ५६० ॥

चक्रिकुरुफणिसुरेन्द्रेष्वहमिन्द्रे यत् सुखं त्रिकालभवम् ।
ततः अनन्तगुणितं सिद्धानां क्षणसुखं भवति ॥ ५६० ॥

अर्थ । चक्रिषु कुरुषु फणीन्द्रेषु सुरेन्द्रेष्वहमिन्द्रेषु च पूर्वपूर्वस्मादनन्तगुणितं यत्सुखं त्रिकालभवं तत सर्वस्मात् सिद्धानां क्षणोत्थ सुखमनन्तगुणितं भवति ॥ ५६० ॥

इति श्रीनेमिचंद्राचार्यविरचिते त्रिलोकसारे वैमानिकलोकाधिकारः ॥ ५ ॥

अथ नरतिर्यग्लोकाधिकार ॥ ६ ॥

अथ प्राग्वर्णं नरतिर्यग्लोके निरूपयितुमनास्तावल्लोकत्रयस्थितजिनभवनानुतिरूपं मङ्गलमाह —

णमह णरलोयजिणघर चत्तारि सयाणि दोविहीणाणि ।
बावण्णं चउ चउरो णंदीसर कुंडले रुचगे ॥ ५६१ ॥

नमत नरलोके जिनगृहाणि चत्वारि शतानि द्विविहीनानि ।
द्वापञ्चाशत् चत्वारि चत्वारि नंदीश्वरे कुण्डले रुचके ॥ ५६१ ॥

णमह । नरलोके चतुःशतानि द्विविहीनानि ३९८ जिनगृहाणि नंदीश्वरद्वीपे कुण्डलद्वीपे रुचकद्वीपे च तिर्यग्लोकसम्बन्धीनि यथासंख्यं द्वापञ्चाशज्जिनगृहाणि चत्वारि जिनगृहाणि चत्वारि जिनगृहाणि नमत ॥ ५६१ ॥

अथ नरलोकजिनगृहाणि कुत्र कुत्र तिष्ठन्तीत्युक्ते आह,—

मंदरकुलवक्खारिसुमणुसुत्तररुप्पजंबुसामलिसु ।
सीदी तीसं तु सयं चउ चउ सत्तरिसयं दुपणं ॥ ५६२ ॥

मंदरकुलवक्षारेषुमानुषोत्तररूप्यजंबूशाल्मलिषु ।
अशीतिं त्रिंशत् तु शतं चत्वारि चत्वारि सप्ततिशतं द्विपञ्च ५६२

मंदर। मंदरेषु ५ कुलपर्वतेषु ३० वक्षारेषु १०० इष्वाकारेषु ५ मानुषोत्तरे १ विजयार्धेषु १७० जम्बूवृक्षेषु ५ शाल्मलीवृक्षेषु ५ यथासंख्यं जिनगृहाण्यशीति ८० त्रिंशत् ३० शतं १०० चत्वारि ४ चत्वारि ४ सप्तत्युत्तरशतं १७० द्विवारपञ्च ५ भवन्ति ॥ ५६२ ॥

अथ अग्रे वक्ष्यमाणानामर्थानां मंदराश्रयत्वात्तानेव प्रथमं प्रतिपादयति —

जंबूदीवे एक्को इसुकारपुक्खरद्धधादइदुगे ।
दो दो मंदरसण्णा बहुमज्झगविजयबहुमज्झे ५६३

[illegible] ॥

[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]

[illegible]

इगिविसमणिदिसयाणु भरहा जमवस्सा हु विदिसदुगवसा य ।
दुगुणदुगुणादिसदुगवसा कुलगिरिपरिहीणा ॥ ५६४ ॥

[illegible] ॥

[illegible] ॥ ५६४ ॥

[illegible]

[illegible]

हिमवं महाहिमवं णिसहो णीलो य रुम्मि सिहरी य
मूलोवरि समवासा मणिपासा जलणिहिं पुट्ठा ॥५६५॥

हिमवान् महाहिमवान् निषधः नीलः रुक्मी शिखरी च ।
मूलोपरि समव्यासाः मणिपार्श्वाः जलनिधिं स्पृष्टाः ॥ ५६५ ॥

हिमव । हिमवान् महाहिमवान् निषधः नीलः रुक्मी शिखरी च, एते सर्वे मूलोपरि समानव्यासाः मणिमयपार्श्वाः जलनिधिं स्पृष्टाः ॥ ५६५ ॥

हेमज्जुणतवणीया कमसो वेलुरियरजदहेममया ।
इगिदुगचउचउदुगइगिसयतुंगा होंति हु कमेण ॥५६६

हेमार्जुनतपनीया कमशः वैडूर्यरजतहेममयाः ।
एकद्विकचतुश्चतुर्द्विकैकशततुंगा भवंति हि क्रमेण ॥ ५६६ ॥

हेम। हिमवर्णो अर्जुनवर्णो श्वेतस्वर्ण । तपनीयवर्णो कुक्कटचूडछविरी-स्वर्ण वैडूर्यवर्णो मयूरकंठच्छविरित्यर्थ , रजतवर्णो हेममय एते कमशः तेषां पर्वतानां यथा एकशत द्विशत चतुःशत चतुःशत द्विशत एकशत क्रमेण तेषामुत्सेधा भवति ॥ ५६६ ॥

इदानीं हिमवदादिकुलपर्वतानामुपरि स्थितह्रदानां नामान्याह,—

पउममहापउमा तिगिंछा केसरि महादिपुण्डरिया ।
पुंडरिया य दहाओ उवरिं अणुपव्वदायामा ॥५६७॥

पद्मो महापद्म तिगिंछ केसरि महादिपुंडरीक ।
पुंडरीकश्च ह्रदा उपरि अनुपर्वतायामा ॥ ५६७ ॥

पउम । पद्मो महापद्मस्तिगिंछ केसरि महापुंडरीक पुंडरीक इत्येते ह्रदास्तेषामुपरि पर्वतानुवर्त्यायामास्तिष्ठति ॥ ५६७ ॥

अथ तेषां ह्रदानां व्यासादिकं प्रतिपादयन् तन्मध्योत्पन्नानां स्वरूपं निरूपयति,—

वासायामोगाढं पणदसदसमहदपव्वदुदयं खु ।
कमलस्सुदओ वासो दोविय गाहस्स दसभागो ॥५६८॥

व्यासायामागाधा पंचदशदशमहत्पर्वतोदया खलु ।
कमलस्योदय व्याम द्वावपि गाधस्य दशभागो ॥ ५६८ ॥

वासा । तेषां ह्रदानां व्यासायामागाधा यथासंख्यं पंचगुणितदशगुणित-दशमभागमहत्तनन्पर्वतोदया १०० २०० ४०० ४००।२००।१०० खलु। व्या ५०० आ १० ८ वे १० नतन्मध्यकमलस्योदयव्यासौ तु द्वावपि तत्तद्ध्रदानां गाधं दशभागौ ज्ञातव्यौ । ८

जम्बूद्वीपे एक इषुकृतपूर्वापरचापद्वीपद्विके ।
द्वौ द्वौ मन्दरशैलौ बहुमध्यगविजयबहुमध्ये ॥ ५६३ ॥

जम्बू । जम्बूद्वीपे एको मन्दर इक्ष्वाकारपर्वतकृतपूर्वापरचापद्वीपद्विके द्वौ द्वौ मन्दरशैलौ । तत्रापि ते मन्दरा क तिष्ठन्ति ? भरतादिदेशानामतिशयेन मध्यस्थितो विजय देश इत्यर्थ तस्यात्यन्तमध्यप्रदेशे तिष्ठन्ति ॥ ५६३ ॥

अथ तेषां मन्दराणामुभयपार्श्वस्थितक्षेत्राणां नामानि कथयति;—

दक्खिणदिसादु भरहो हेमवदो हरिविदेहरम्मो य ।
हेरण्णवदेरावदवस्सा कुलपव्वयंतरिया ॥ ५६४ ॥

दक्षिणदिशातु भरतो हैमवत हरिविदेहरम्यश्च ।
हैरण्यवदैरावतवर्षा कुलपर्वतान्तरिता ॥ ५६४ ॥

दक्खिण । तेषां मन्दराणां दक्षिणदिशाया आरम्य भरत हैमवत हरि विदेह रम्यक हैरण्यवत ऐरावत इत्येते वर्षा हिमवदादिकुलपर्वतान्तरिता ॥ ५६४ ॥

अथ तेषां पर्वतानां नामादिकं गाथाद्वयेनाह,—

हिमव महादिहिमव णिसहो णीलो य रुम्मि सिहरी य
मूलोवरि समवासा मणिपासा जलणिहिं पुट्ठा ॥ ५६५ ॥

हिमवान् महादिहिमवान् निषध नीलश्च रुक्मी शिखरी च ।
मूलोपरि समव्यासा मणिपार्श्वा जलनिधिं स्पृष्टा ॥ ५६५ ॥

हिमव । हिमवान् महाहिमवान् निषधो नीलश्च रुक्मी शिखरी च, एते सर्वे मूलोपरि समानव्यासा मणिमयपार्श्वा जलनिधिं स्पृष्टा ॥ ५६५ ॥

हेमज्जुणतवणीया कमसो वेलुरियरजदहेममया ।
इगिदुगचउचउदुगइगिसयतुंगा होंति हु कमेण ॥ ५६६

हेमार्जुनतपनीया क्रमशः वैडूर्यरजतहेममयाः ।
एकद्विकचतुश्चतुर्द्विकैकशततुंगा भवंति हि क्रमेण ॥ ५६६ ॥

हेम। हिमवर्णं अर्जुनवर्णं श्वेत इत्यर्थः। तपनीयवर्णं कुक्कटचूडच्छविरित्यर्थः वैडूर्यवर्णं मयूरकंठच्छविरित्यर्थः, रजतवर्णं हेममयं एते क्रमशः तेषां पर्वतानां यथा एकशतं द्विशतं चतुःशतं चतुःशतं द्विशतं एकशतं क्रमेण तेषामुत्सेधो भवति ॥ ५६६ ॥

इदानीं हिमवदादिकुलपर्वतानामुपरि स्थितह्रदानां नामान्याह,—

पउममहापउमा तिगिंछा केसरि महादिपुण्डरिया ।
पुंडरिया य दहाओ उवरिं अणुपव्वदायामा ॥५६७॥

पद्मो महापद्म तिगिंछ केसरि महादिपुंडरीक ।
पुंडरीकश्च ह्रदा उपरि अनुपर्वतायामाः ॥ ५६७ ॥

पउम। पद्मो महापद्मस्तिगिंछ केसरि महापुंडरीक पुंडरीक इत्येते ह्रदास्तेषामुपरि पर्वतानुगतायामास्तिष्ठंति ॥ ५६७ ॥

अथ तेषां ह्रदानां व्यासादिकं प्रतिपादयन् तत्पद्मानां स्वरूपं निरूपयति,—

वासायामोगाढं पणदसदसमहदपव्वदुदयं खु ।
कमलस्सुदओ वासो दोवि य गाहस्स दसभागो ॥५६८॥

व्यासायामागाधाः पञ्चदशदशमहत्पर्वतोदयाः खलु ।
कमलस्योदयः व्यासः द्वावपि गाधस्य दशभागौ ॥ ५६८ ॥

वासा। तेषां ह्रदानां व्यासायामागाधा यथासंख्यं पञ्चगुणितदशगुणितदशमभागमहत्तत्पर्वतोदयाः १००।२००।४००।४००।२००।१०० खलु। व्या ५००= आ १००० गा १० तत्रस्थकमलस्योदयव्यासौ तु द्वावपि तत्तद्ध्रदानां गाधदशमभागौ ज्ञातव्यौ ॥ ५६८ ॥

[illegible]

[illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible]

[illegible] ।
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]

[illegible] ॥

[illegible]

[illegible] वाम कल्पितं [illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible] ।
[illegible]

[illegible]

अथ तन्निवासिनीनां देवीनां नामानि तासां स्थितिपूर्वकं तत्परिवारं चाह —

सिरिहिरिधिदिकित्तीवि य बुद्धीलच्छी य पल्लठिदिगाओ
लक्खं चत्तसहस्सं सयदहपण पउमपरिवारा ॥ ५७२ ॥

श्री ह्री धृतिः कीर्तिः अपि च बुद्धिः लक्ष्मी च पल्यस्थितिका ।
लक्षं चत्वारिंशत्सहस्रं शतदशपञ्च पद्मपरिवारः ॥ ५७२ ॥

सिरि । श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्याख्या देव्यः पल्यस्थितिका एकलक्षं चत्वारिंशत्सहस्राणि शतं दश पंचप्रमाणानि कमलस्य परिवारपद्मानि १४०११५ ॥ ५७२ ॥

अथ परिवारकमलस्थित श्रीदेवीनां परिवारं गाथाचतुष्टयनाह,—

आइच्चचंदजदुपहुदीओ तिप्परीसमग्गिजमणिरुदी ।
बत्तीसताल अडदाल सहस्सा कमलममरसमं ॥ ५७३॥

आदित्यचन्द्रजतुप्रभृतयः त्रिपारिषदा अग्नियमनैर्ऋत्या ।
द्वात्रिंशत् चत्वारिंशत् अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि कमलानि अमरसमानि ।

आइच्च । आदित्यचन्द्रजतुप्रमुखास्त्रयः परिषद्वाः क्रमेणाग्नियमनैर्ऋत्यां दिशि तिष्ठति तेषां सख्या द्वात्रिंशत्सहस्राणि चत्वारिंशत्सहस्राणि अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि भवति कमलानि चामरसमानि ॥ ५७३ ॥

आणीयगेहकमला पच्छिमदिसि सग गयस्सरहवसहा ॥
गधव्वणच्चपत्ती पत्तेय दुगुणसत्तकक्खजुदा ॥ ५७४ ॥

आनीकगृहकमलानि पश्चिमदिशि सप्त गजाश्वरथवृषभाः ।
गंधर्वनर्त्यपत्तयः प्रत्येकं द्विगुणसप्तकक्षयुताः ॥ ५७४ ॥

आणीय । आनीकस्थानां गृहकम [लानि] सप्त पश्चिमायां [दि]शि सन्ति ते

अथ तेषु सरःस्वेषु समुत्पन्नमहानदीनां संज्ञा गाथाद्वयेनाह,—

सरजा गंगासिंधू रोहि तहा रोहिदास णाम णदी।
हरि हरिकंता सीदा सीदोदा णारि णरकंता ॥ ५७८ ॥

सरोजा गंगासिंधू रोहित्तथा रोहितास्या नाम नदी।
हरित् हरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नरकान्ता ॥ ५७८ ॥

सरजा। सरसि जाता गंगासिंधू रोहित्तथा रोहितास्या नाम्ना नदी हरिद्धरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नरकान्ता ॥ ५७८ ॥

सरिदा सुवण्णरूप्पयकूला रत्ता तहेव रत्तोदा।
पुव्वावरेण कमसो णाभिगिरिपदक्खणेण गया ॥५७९॥

सरित सुवर्णरूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा।
पूर्वापरेण क्रमशो नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गता ॥ ५७९ ॥

सरिदा। सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा। एताः सरितः क्रमशः पूर्वोक्ताः पूर्वमुखेनापरोक्ता अपरमुखेन नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गताः ॥ ५७९ ॥

अथ तासां नदीनां उभयतटस्वरूपं कथयति,—

पुण्णागणागपूगीककेलितमालकेलितपूली।
लवलीलवगमल्लीपहुदी सयलणदितडेसु ॥ ५८० ॥

पुन्नागनागपूगीकंकेलितमालकदलीताम्बूली।
लवलीलवंगमल्लीप्रभृतय सकलनदीद्वितयेषु ॥ १८० ॥

पुण्णाग। पुन्नाग नागकेसर पूगी कंकेलि तमाल कदली ताम्बूली लवली लवंग मल्लीप्रमुखा वृक्षाः सकलनदीद्वितयेषु संति ॥ ५८० ॥

अथ कस्मिन् कस्मिन् सरस्येता नद्य उत्पन्ना इति कथयति;—

गंगादु रोहिदस्सा पउमे रत्तदु सुवण्णमतद्दहे।
सेसे दो दो जोयणदलमतरिदूण णाभिगिरिं ॥ ५८१ ॥

आनीतं तनाशाग्रगृहमर्धीनुगणगणानय इति मनसि प्रदक्षिणोत्तमर सामानिकपद्म १००० प्रमाणोनीतात् द्विगुणगुणितक्रमेण ॥ ५७४ ॥

उत्तरदिसि कोणदुगे सामाणियकमल चदुसहस्समदो ।
अब्भंतर दिस पडि पुह तेत्तियमंगरक्खपासादा ॥ ५७५

उत्तरदिशि कोणद्विके सामानिककमलानि चतुःसहस्राणि ।
अभ्यन्तरे दिशं प्रति पृथक् तावन्मात्रा अङ्गरक्षप्रासादाः ॥ ५७५ ॥

उत्तर । उत्तरदिग्भागाश्रितकोणद्वये सामानिकदेवानां कमलानि चतुःसहस्राणि संति अतोऽभ्यंतरे प्रतिदिशं पृथक् पृथक् तावन्मात्राः ४००० अङ्गरक्षप्रासादाः स्युः ॥ ५७५ ॥

अब्भतरदिसि विदिसे पडिहारमहत्तरट्ठसयकमला ।
मणिदलजलसमणाल परिवार पउमममाणद्धं ॥ ५७६ ॥

अभ्यंतरदिशि विदिशि प्रतिहारमहत्तराणामष्टशतकमलानि ।
मणिदलजलसमनाल परिवार पद्ममानार्धम् ॥ ५७६ ॥

अब्भतर । तेभ्यः अभ्यन्तरदिशि १४ विदिशि च १२ प्रत्येकमेव संति प्रतिहारमहत्तराणामष्टोत्तरशतकमलानि मणिमयदलानि जलोत्सेधसमनालानि संति परिवारपद्मविशेषस्वरूपं सर्वं मुख्यपद्मप्रमाणार्धं स्यात् ॥ ५७६ ॥

सिरिगिहदलमिदरगिहसोहम्मिंदस्स सिरिहिरिधिदीओ
कित्ती बुद्धी लच्छी ईसाणहिवस्स देवीओ ॥ ५७७ ॥

श्रीगृहदलमितरगृह सौधर्मेन्द्रस्य श्रीह्रीधृतयः ।
कीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः ईशानाधिपस्य देव्यः ॥ ५७७ ॥

सिरि । श्रीगृहव्यासादिप्रमाणार्धं इतरगृहव्यासादिप्रमाणं स्यात् । श्रीह्रीधृतयः सौधर्मेन्द्रस्य देव्यः कीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः ईशानाधिपस्य देव्यः स्युः ॥ ५७७ ॥

अथ तेषु सरोवरेषु समुत्पन्नमहानदीनां संज्ञा गाथाद्वयेनाह,—

सरजा गंगासिंधू रोहि तहा रोहिदास णाम णदी ।
हरि हरिकंता सीदा सीदोदा णारि णरकंता ॥ ५७८ ॥

सरोजा गंगासिन्धू रोहित्तथा रोहितास्या नाम नदी ।
हरित् हरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नरकान्ता ॥ ५७८ ॥

सरजा । सरसि जाता गंगासिंधू रोहित्तथा रोहितास्या नाम्ना नदी हरिद्धरिकांता सीता सीतोदा नारी नरकांता ॥ ५७८ ॥

सरिदा सुवण्णरुप्पयकूला रत्ता तहेव रत्तोदा ।
पुव्वावरेण कमसो णाभिगिरिपदक्खिणेण गया ॥५७९॥

सरित सुवर्णरूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा ।
पूर्वापरेण क्रमशो नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गता ॥ ५७९ ॥

सरिदा । सुवर्णकूला रूप्यकूला रक्ता तथैव रक्तोदा । एताः सरितः क्रमशः पूर्वोक्ताः पूर्वमुखेनापरोक्ता अपरमुखेन नाभिगिरिप्रदक्षिणेन गताः ॥ ५७९ ॥

अथ तासां नदीनां उभयतटस्वरूपं कथयति,—

पुण्णागणागपूगीककेल्लितमालकेलितंबूली ।
लवलीलवंगमल्लीपहुदी सयलणदितडेसु ॥ ५८० ॥

पुन्नागनागपूगीकंकेल्लितमालकदलीताम्बूली ।
लवलीलवंगमल्लीप्रभृतय सकलनद्यादितटेषु ॥ ५८० ॥

पुण्णाग । पुन्नाग नागकेसर पूगी कंकेल्लि तमाल कदली तांबूली लवली लवंग मल्लीप्रभृतयो वृक्षाः सकलनदीद्वितटेषु संति ॥ ५८० ॥

अथ कस्मिन् कस्मिन् सरस्येता नद्य उत्पन्ना इति कथयति,—

गंगादु रोहिपस्सा पउमे रत्तादु सुवण्णमतद्दहे ।
सेसे दो दो जायणदुलमतरिदूण णाभिगिरिं ॥ ५८१ ॥

उम्मग्गणिमग्गाओ गुहमज्झादो दु पुव्वावरदो ।
जोयणदुगविसालाओ पविसंति उभयतडा गंगं ॥ ५९३ ॥

उन्मग्ननिमग्नाख्ये गुहामध्यगते तु पूर्वापरतः ।
योजनद्वयविशाले प्रविशतः उभयतटात् गङ्गाम् ॥ ५९३ ॥

उम्मग्ग । उन्मग्ननिमग्नाख्ये नद्यौ गुहामध्यगते पूर्वापरदिशि गत्वा योजनद्वयविशाले उभयतटात् गंगां प्रविशतः ॥ ५९३ ॥

णियजलपवाहपडिदं दव्वं गुरुगंपि णेदि उवरि तडे ।
जम्हा तम्हा भण्णदि उम्मग्गा वाहिणी एसा ॥ ५९४ ॥

निजजलप्रवाहपतितं द्रव्यं गुरुकमपि नयति उपरि तटे ।
यस्मात् तस्मात् भण्यते उन्मग्ना वाहिनी एषा ॥ ५९४ ॥

णिय । निजजलप्रवाहपतितं गुरुकमपि द्रव्यं यस्मादुपरि तटे नयति तस्मादेषा उन्मग्नावाहिनीति भण्यते ॥ ५९४ ॥

णियजलभरउवरि गदं दव्वं लहुगंपि णेदि हिट्ठम्मि ।
जेण तेण भण्णदि एसा सरिया णिमग्गत्ति ॥ ५९५ ॥

निजजलभरोपरि गतं द्रव्यं लघुकमपि नयति अधस्तने ।
येन तेन भण्यते एषा सरित् निमग्ना इति ॥ ५९५ ॥

णिय । निजजलभारोपरिगतं लघुकमपि द्रव्यमधस्तात् नयति येन तेनैषा सरिन्निमग्नेति भण्यते ॥ ५९५ ॥

तत्तो दक्खिणभरहम्मज्झे गंतूण पुव्वदिसवदणा ।
मागहदारगतरदो लवणसमुद्दं पविट्ठा सा ॥ ५९६ ॥

ततः दक्षिणभरतमध्ये गत्वा पूर्वदिशावदना ।
मागधद्वारगतरतः लवणसमुद्रं प्रविष्टा सा ॥ ५९६ ॥

[illegible] । [illegible] ११९ [illegible] । [illegible] ५८६ [illegible] ४५६ [illegible] २२८ [illegible] । [illegible] ११६ [illegible] । [illegible] ॥ ५९६ ॥

इदानीं [illegible] निरूपयति —

गंगासमा सिंधुणदी अवरगुहा सिंधुकुडविणिग्गिया ।
तिमिसगुहादारवेदिं [illegible] समागमकणदारागो ॥ ५९७ ॥

गंगासमा सिंधुनदी अपरगुहा सिंधुकूटविनिर्गता ।
तिमिश्रगुहाद्वारवेदिं [illegible] ॥ ५९७ ॥

गंगे । [illegible] सिंधुनदी । अयं विशेषः । [illegible] सिंधुकूटविनिर्गता [illegible] निर्गत्य [illegible] । [illegible] ॥ ५९७ ॥

अथ [illegible] —

[illegible] दहविण्णासपणपल्लसेदद्दलमुवरि ।
[illegible] पुव्ववरजलहिं ॥ ५९८ ॥

[illegible] ।
[illegible] पूर्वापरजलधिम् ॥ ५९८ ॥

[illegible] । [illegible] स्वकीयस्वकीयहदविस्तारे ५० [illegible] २ आय ८ [illegible] ३२ [illegible] २० [illegible] ८ [illegible] २ [illegible] ५२६६ [illegible] स्यात् । हिम १०५२ [illegible] महा ४ १० [illegible] निष १६८४२ [illegible] नील १६८४२ [illegible] रुक्मि ४२१० [illegible]

तत्तो । ततो गुहाया निर्गत्य दक्षिणभरतस्यार्धं ११९ मा ३/१९ गत्वा । एतावत्कथं ? भरतप्रमाणे ५२६ ६/१९ विजयार्धव्यासं ५० त्यक्त्वा ४७६ ६/१९ अर्धिते २३८ ३/१९ एकभरतस्य प्रमाणं । एकस्मिन् पुनरर्धिते ११९ ३/१९ दक्षिणभरतार्धं स्यात् । पूर्वाभिमुखेन मागधद्वारांतरेण सा गंगा लवण-समुद्रं प्रविष्टा ॥ ५९६ ॥

इदानीं सिंधुनदीस्वरूपं निरूपयति,—

गंगसमा सिंधुणदी अवरमुहा सिंधुकूडविणिविधा ।
तिमिसगुहादवरमुहिमिया पभासकसदारादो ॥ ५९७ ॥

गंगासमा सिंधुनदी अपरमुखा सिंधुकूटविनिवृत्ता ।
तिमिस्रगुहादपराम्बुधिमिता प्रभासाख्यद्वारतः ॥ ५९७ ॥

गंग । गंगाया या वर्णनोक्ता तत्समा सिंधुनदी । अयं विशेष । इयं स्वपरदिगभिमुखा सिंधुकूटाद्विनिवृत्य तमिस्रगुहां प्रविश्य ततोऽपि निर्गत्य प्रभासाख्यद्वारेण अपराम्बुधिमिता । शेषं सर्वं गंगावद्वक्तव्यम् ॥ ५९७ ॥

अथ शेषनदीनां स्वरूपमाह,—

सेसा रूप्पंता दहविरथारूणघलरुंदद्दलमुवरिं ।
गंतूण दक्खिणुत्तरमणुपुट्ठा पुव्ववरजलहिं ॥ ५९८ ॥

शेषा रूप्यन्ता ह्रदविस्तारोनावशेषार्धदलमुपरि ।
गत्वा दक्षिणोत्तरमनुस्पृष्टा पूर्वापरजलधिं ॥ ५९८ ॥

सेसा । शेषा रोहिद्याद्या रूप्यकूलांता नद्यः स्वकीयस्वकीयपर्वत-
५००।२०००।२ ००।१०००।५००द्वि २ अष्ट ८ द्वाविंशति ४२ ह
४२ अष्ट ८ द्विकाभि २ हिमवन्नादिशैलानामभिर्भरतक्षेत्रप्रमाणे ५
गुणिते सति हिमवदादिपर्वतानां विस्तारं स्यात् । हिम १०५२ ६/१९ हरिम ४
४२१० १०/१९ निष १६८४२ २/१९ नील १६८४२ २/१९

शिख १०५२$\frac{१२}{१९}$ एतस्मिन्नचलदैर्घ्ये न्यूनयित्वा ५५२$\frac{१२}{१९}$।३२१०$\frac{१०}{१९}$ १४८४२$\frac{२}{१९}$।१४८४२$\frac{२}{१९}$।३२१०$\frac{१०}{१९}$।५५२$\frac{१२}{१९}$ अर्धीकृतप्रमाण हिम २७६$\frac{६}{१९}$ महा १६०५$\frac{५}{१९}$ निष ७४२१$\frac{१}{१९}$ नील ७४२१$\frac{१}{१९}$ रुक्मि १६०५$\frac{५}{१९}$ शिखरि २७६$\frac{६}{१९}$ तत्तत्पर्वतस्योपरि दक्षिणोत्तराभिमुख गत्वा अनु पश्चात्पूर्वापरजलधिं स्पृष्टा ॥ ५९८ ॥

अथ रक्तारक्तोदादीना प्रणालिकादिप्रमाणमाह,—

गंगादुग व रत्तारत्तोदा जिब्भियादिया सव्वे ।
सेसाण पि य णेया तेवि विदेहोत्ति दुगुणकमा ॥५९९॥

गंगाद्विक व रक्तारक्तोदा जिह्विकादिका सर्वे ।
शेषाणामपि च ज्ञेया तेपि विदेहात द्विगुणक्रमा ॥ ५९९ ॥

गंगा । गंगाद्विकमिव रक्तारक्तोदयोर्जिह्विकादिप्रमाणविशेषा सर्वे शेषनदीनामपि वातप्रणालिकादय सर्वेपि विदेहपर्यंत द्विगुणक्रमा ज्ञेया ॥ ५९९ ॥

अथ तासा नदीना विस्तारमाह,—

गंगदु रत्तदु वासा सपादछण्णिग्गमे विदेहोत्ति ।
दुगुणा दसगुणमंते गाहो वित्थार पण्णसो ॥ ६०० ॥

गंगाद्वयो रक्ताद्वयो व्यासा सपादषट् निर्गमे विदेहातम् ।
द्विगुणा दशगुणा अंते गाध विस्तार पंचाशद्दश ॥ ६०० ॥

गंगदु । गंगाद्विकरक्ताद्विकयोर्द्वदनिर्गमव्यासा सपादषड्योजनानि ६$\frac{१}{४}$ अन्यासा नदीना निर्गमव्यासा विदेहपर्यंत द्विगुणक्रमा स्यु । सर्वासा नदीनामंते समुद्रप्रवेशे व्यासा दशगुणा सर्वासा गाधस्तत्तद्विस्तारपंचाशद्दश स्यात ॥ ६०० ॥

अथ तासां नदीनां तोरणस्वरूपं गाथाद्वयेनाह,—

णदिणिग्गमे पवेसे कुंडे अण्णत्थ चावि तोरणयं।
बिंबजुदं उवरिं तु दिक्कण्णावाससंजुत्तं ॥ ६०१ ॥

नदीनिर्गमे प्रवेशे कुंडे अन्यत्र चापि तोरणकम्।
बिंबयुतं उपरि तु दिक्कन्यावाससंयुक्तम् ॥ ६०१ ॥

णदि। नदीनिर्गमे प्रवेशे कुंडे अन्यत्रापि च उपरि जिनबिंबयुतं दिक्कन्यावाससंयुक्तं तोरणमस्ति ॥ ६०१ ॥

तत्तोरणवित्थारो सगसगणदिवाससरिसगो उदओ।
वासादु दिवड्ढगुणो सव्वत्थ दलं हवे गाहो ॥ ६०२॥

तत्तोरणविस्तारः स्वकस्वकनदीव्याससदृशः उदयः।
व्यासात् द्व्यर्धगुण्यः सर्वत्र दलं भवेत् गाधः ॥ ६०२ ॥

तत्तोरण। तत्तोरणानां विस्तारः स्वकीयस्वकीयनदीव्यास ६ ¼ सदृशः, उदयस्तु व्यासात् द्वितीयार्धं ३/२ गुण्यः ९ ३/८। सर्वत्र तोरणानां गाधः अर्धं योजनप्रमितं भवेत् ॥ ६०२ ॥

अथ पूर्वोक्तवर्षधरपर्वतानां विस्तारानयने करणसूत्रमाह,—

विजयकुलद्दी दुगुणा उभयतादो विदेहयस्सोत्ति।
गुणपिंडदीवसगगुणगारो हु पमाणफलइच्छा ॥६०३॥

विजयकुलाद्रयः द्विगुणा उभयतः विदेहवर्षान्तम्।
गुणपिंडद्वीपस्वकगुणकारो हि प्रमाणफलेच्छाः ॥ ६०३ ॥

विजय। विजया दक्षा ६ वर्षे कुलाद्रयश्च उभयतः विदेहपर्यन्तं द्विगुणद्विगुणा भवन्ति गुणकारपिंड १९० द्वीप १०००० स्वकीयस्वकीयगुणकारा भर १ हिम २ हैम ४ यथासंख्यं प्रमाणफलेच्छाः खलु। अनेन त्रैराशिकेन [illegible] क्षेत्रपर्वतानां विस्तार आनेतव्यः ॥ ६०३ ॥

[illegible]

मागहगा य विसादा णेदुरिदसम णउदिसदुपणा ।
पंचगणा छावीसा छच्च कला कणसीमत ॥ ६०३ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ६०३ ॥

[illegible]

[illegible] अट्ठेतरी [illegible] —

गुलसीहि छलणिगा पणारि कला विसुहयिरामा ।
पाहिहीणदल विचणा वक्कारगिरिमंगयणदीहा ॥ ६०४ ॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ६०४ ॥

[illegible]

[illegible] —

मरु विदहमज्झ णवणउदिहक्कजायणसहस्सा ।
उदय भमुहराम उवरुवरिगावणचउक्कजुदा ॥ ६०५ ॥

[illegible] नवनवतिश्चैकयोजनसहस्राणि

[illegible] ॥ ६०५ ॥

मेरू । विदेहस्य मध्यप्रदेशे मेरुरस्ति, तस्यात्ययभूमुखव्यासा यथासंख्यं नवनवतिसहस्र ९९००० दशसहस्र १०००० एकसहस्र १००० योजनानि स्युः । स च पुनरुपर्युपरि कणयगतवनचतुष्कयुत ॥ ६०६ ॥

इदानीं वनचतुष्कस्य संज्ञा तदन्तरालं च प्रतिपादयति;—

भू भद्दसाल साणुग णंदणसोमणसपांडुक च वणं ।
इगिपणघणबावत्तरिहदपंचसयाणि गतूण ॥ ६०७ ॥

भुवि भद्रशाल सानुग नंदनसौमनसपाण्डुक च वनम् ।
एक पंचघनद्वासप्ततिहतपञ्चशतानि गत्वा ॥ ६०७ ॥

भूभद्द । भूगतं वनं भद्रशालाख्यं सानुगयगतानि यथासंख्यं नंदनसौमनसपांडुकाख्यवनानि, तानि एक १ पंचघन १२५ द्वासप्तति ७२ हत पञ्चशतयोजनानि ५००।६२५००।३६०००। गत्वा गत्वा तिष्ठति ॥ ६०७ ॥

अथ तद्वनस्थवस्थानाह,—

मंदारचूदचंपयचंदणघणसारमोचचोचेहिं ।
तंबूलिपूगजादीपहुदीसुरतरुहिं कयसोह ॥ ६०८ ॥

मंदारचूतचंपकचन्दनघनसारमोचचोचैः ।
ताम्बूलीपूगजातिप्रभृतिसुरतरुभि कृतशोभानि ॥ ६०८ ॥

मंदार । मंदारचूतचंपकचन्दनघनसारमोचचोचैः ताम्बूलीपूगजातिप्रभृतिभि सुरतरुभिश्च कृतशोभानि तानि वनानि ॥ ६०८ ॥

सांप्रतमितःप्रभृति चैत्यालयानिरूपणं योजना अथ कथयति —

पणसय पणसयसहिय पणवण्णासहस्सय सहस्साणं ।
अट्ठावीसिदराणि सहस्सगाद तु मरूणं ॥ ६०९ ॥

सौमनसद्विके वज्रं वज्रादिप्रभं सुवर्णं तत्प्रभं ।
लोहिताञ्जनहारिद्रपाण्डुरा दलितान्यमाना ॥ ६२० ॥

सोमण । सौमनसपांडुकयोर्यथासंख्यं चत्वारि चत्वारि वृत्तभवनना मानि । तानि कानि ? वज्रवज्रप्रभसुवर्णसुवर्णप्रभनामानि लोहिताञ्जनहारिद्रपाण्डुरनामानि । भन्नोक्तोदयव्यासार्द्धतदर्धप्रमाणानि ॥ ६२० ॥

अथ तद्भवनाधिपान् तद्वनिताश्चाह,—

तब्भवणवदी सोमो यमवरुणकुवेरलोयवालक्खा ।
पुव्वादी तेसिं पुह गिरिकण्णा सड्ढकोडितियं ॥६२१॥

तद्भवनपतयः सोमः यमवरुणकुबेरा लोकपालाख्याः ।
पूर्वादिषु तेषां पृथक् गिरिकन्यकाः सार्धकोटित्रयम् ॥ ६२१ ॥

तब्भवण । तद्भवनाधिपतयः सोमयमवरुणकुबेराख्याः सौधर्मस्य लोकपालाः पूर्वादिदिक्षु तिष्ठंति । तेषां पृथक् पृथक् सार्धकोटित्रयगिरिकन्यका भवंति ॥ ६२१ ॥

अथ तेषामायुष्यादिकमाह,—

सोमदु वरुणदुगाऊ सड्ढदु पल्लत्तयं च देसूणं ।
ते रत्तकिण्हकंचणसिदणेवत्थक्किया कमसो ॥ ६२२ ॥

सोमद्वयो वरुणद्विकायुः सार्द्धद्वि पल्यत्रयं च देशोनम् ।
ते रक्तकृष्णकाञ्चनसितनेपथ्याङ्किता क्रमशः ॥ ६२२ ॥

सोम । सोमयमयोर्वरुणकुबेरयोश्चायुर्यथासंख्यं अर्धसहितद्विपल्यं देशोनपल्यत्रयं च स्यात् । सोमाद्यो रक्तकृष्णकाञ्चनसितवर्णालंकाराङ्किता क्रमशः ॥ ६२२ ॥

अथ तेषां कल्पविमानमवधित्वमाह,—

ते य सयपहरिट्ठजलप्पहवग्गुप्पहा विमाणीसा ।
कप्पे उ लोयवाला पहुणो पहुसयविमाणाणं ॥ ६२३ ॥

ते च सौधर्मेन्द्रादीशानेन्द्रपर्यन्तप्रभा विमानेन्द्राः ।
चतुर्षु कोटिशतेषु प्रभव चतुरन्तविमानानाम् ॥ ६२३ ॥

ते च । ते च सौधर्मद्वय कल्पे स्वयंप्रभादिस्वकल्पप्रभ पर्यन्ता विमानेन्द्राः । पुनरपि चतुरन्त ६६६६६६ विमानानामधिपतयः ॥ ६२३ ॥

अथ न,नन्दनवनस्थं सव्येतरमाह,—

बलभद्दणामकूडे णंदणगे मेरुपुव्वदीसाए ।
उदयमहिदणगपदट्ठगो सण्णामो वेंतरो वसई ॥ ६२४ ॥

बलभद्रनामकूटे नंदनगे मेरुपूर्वदिशायाम् ।
उदयमहितनगप्रतिष्ठः तन्नामा व्यन्तरो वसति ॥ ६२४ ॥

बलभद्द । मेरुपूर्वस्यां दिशि नन्दनवने शतोदयनामयुक्तास्ते तद्द्वये बलभद्रनामकूटे बलभद्रनामा व्यन्तरो वसति ॥ ६२४ ॥

अथ नन्दनवनस्थवसतीनामुभयपार्श्वस्थकूटाष्टकं गाथाद्वयेनाह,—

णंदण मंदर णिसहा हिमव रजद्दो य रुजगसायरया ।
वज्जा कूडा कमसो णंदणवसदीण पासदुगे ॥ ६२५ ॥

नन्दना मन्दर निषध हिमवान् रजतश्च रुचकसागरकौ ।
वज्राः कूटाः क्रमशः नन्दनवसतीनां पार्श्वद्विके ॥ ६२५ ॥

णंदण । नन्दनो मन्दरो निषधो हिमवान् रजतश्च रुचक सागरौ वज्राख्या एते कूटाः क्रमशो नन्दनवनस्थवसतीनामुभयपार्श्वे तिष्ठन्ति ॥ ६२५ ॥

हेममया तुंगयरा पंचसयं तद्दलं मुहस्स पमा ।
सिहरगिहे दिक्कण्णा वसंति तासिं च णामाणि ॥ ६२६ ॥

हेममयाः तुंगतराः पंचशतानि तदर्धं मुखस्य प्रमा ।
शिखरगृहे दिक्कन्या वसन्ति तासां च नामानि ॥ ६२६ ॥

एममया । ते कृत्वा ईममया तेषामग्रभूम्यां प्रत्येकं पंचशतयोजनानि तन्न २५० मुखव्यासप्रमाणा तदर्धे निम्नपुष्करिण्यो विदिक्षु भवन्ति। तासां षमानि नामान्यग्र वक्ष्यमाणानि ॥ ६२२ ॥

मेहकरमेहवदी सुमेहमहादिमालिणी तत्तो ।
तोयधरा विचित्ता पुप्फादिममालिणिदिया ॥६२७॥

मेघकरा मेघवती सुमेघा मेघादिमालिनी तत ।
तोयधरा विचित्रा पुष्पादिममाला अनिंदिता ॥ ६२७ ॥

मेहकर । मेघकरा मेघवती सुमघा मेघमालिनी ततस्तोयधरा विचित्रा पुष्पमाला अनिंदितारया स्तु ॥ ६२७ ॥

अथ नन्दनवापीस्वरूप गाथात्रयेणाह,—

अग्गिदिसादो चउचउउप्पलगुम्मा य णलिणिउप्पलिया
वावीओ उप्पलुज्जल भिंगा छट्ठी दु भिंगणिभा ॥६२८॥

अग्निदिशा चतस्र चतस्र उत्पलगुल्मा च नलिनी उत्पलिका ।
वाप्य उत्पलोज्ज्वला भृंगा षष्ठी तु भृंगनिभा ॥ ६२८ ॥

अग्गि । अग्निदिशा आरभ्य चतस्रश्चतस्रो वाप्य सति । तासां नामानि उत्पलगुल्मा नलिनी उत्पल उत्पलोज्ज्वला भृंगा षष्ठी तु भृंगनिभा ॥६२८॥

कज्जल कज्जलपह सिरिभूदा सिरिकंदा सिरिजुदा महिदा।
सिरिणिलयणलिणि णलिणादिमगुम्मिय कुमुदकुमुदपहा

कज्जला कज्जलप्रभा श्रीभूता श्रीकांता श्रायुता महिता ।
श्रानिलया नलिनी नलिनादिमगुल्मी कुमुदा कुमुदप्रभा ॥६२९ ॥

कज्जल । कज्जला कज्जलप्रभा श्रीभूता श्रीकांता श्रीमहिता श्रीनिलया नलिनी नलिनगुल्मी कुमदा कुमदप्रभेति नामानि ॥ ६२९ ॥

मणितोरणरयणुब्भवसोवाणा हंसमायरजतजुदा ।
पण्णदलदीहवासो दसगाहो सोलवावीओ ॥ ६३० ॥

मणितोरणरत्नोद्भवसोपाना हंसमयूरयन्त्रयुता ।
पञ्चाशद्दलदीर्घव्यासा दशगाधा षोडशवाप्यः ॥ ६३० ॥

मणि । ताः षोडशवाप्यो मणितोरणरत्नोद्भवसोपाना हंसमयूरयन्त्र युताः पञ्चाशदर्द्धदीर्घव्यासा दशयोजनावगाधाः स्युः ॥ ६३० ॥

अथ तन्मध्यप्रासादस्वरूपं गाथाद्वयेनाह,—

दक्खिणउत्तरवावीमज्झे सोहम्मजुगलपासादा ।
पणघणदलपरणुच्छयवासा दलगाढचउरस्सा ॥ ६३१ ॥

दक्षिणोत्तरवापीमध्ये सौधर्मयुगलप्रासादाः ।
पञ्चघनदलपरणोच्छ्रयव्यासाः दलगाधाश्चतुरस्राः ॥ ६३१ ॥

दक्खिण । मन्दरस्य दक्षिणोत्तरवापीमध्ये सौधर्मेशानयोः प्रासादाः पञ्चघन १ ५ दल ६ [illegible] पञ्चघनपञ्चयोजनोच्छ्रयव्यासाः अर्धयोजनगाधाः चतुरस्राः सन्ति ॥ [illegible] ॥

सोधिदठाणामिदपरिवारणिदा ठिन्ना सपासादे ।
सव्वमिण कहियव्व मामणसवणाव्व सविसम ॥ ६३२ ॥

[illegible] ॥ ६३२ ॥

[illegible] ॥

अनन्तरं [illegible] —

पांडुकपाडुकवलरत्ता तह रत्तरधल्कस सिला ।
इसाणादी कंचणरुप्पयतवणीयरुहिरणिहा ॥ ६३३ ॥

पाडुकपाडुकम्बलरक्ता तथा रक्तम्बलाख्या शिला ।
ईशानात् काचनरूप्यतपनीयरुधिरनिभा ॥ ६३३ ॥

पाडुक । ईशानादारभ्य यथासख्य काचनरूप्यतपनीयरुधिरनिभा पांडुकापांडुकम्बलाख्यरक्तारव्यरक्तकंबलाख्या शिला पाडुकवने सन्ति ॥ ६३३ ॥

अथ ता शिला कथा सन्तिष्ठन्ति कथं तासा विन्यास इत्युक्त आह,—

भरहवरविदेहेरावदपुव्वविदेहजिणणिवद्धाओ ।
पुव्ववरदक्खिणुत्तरदीहा अथिरथिरभूमिमुहा ॥ ६३४॥

भरतापरविदेहैरावतपूर्वविदेहजिननिवद्धा ।
पूर्वापरदक्षिणोत्तरदीर्घा अस्थिरस्थिरभूमिमुखा ॥ ६३४ ॥

भरह । ता शिला यथासख्य भरतापरविदेहैरावतपूर्वविदेहजिननिबद्धा स्युः । पूर्वापरदक्षिणोत्तरदीर्घा अस्थिरस्थिरभूमिमुखा ॥ ६३४ ॥

अथ इमतिन तथा शिलातलानामाकृतिं प्रतिपादयन् दैर्घ्यमाचष्टे,—

अद्धिंदुणिहा मज्झ सयपण्णासद्धदीहवासुदया ।
आसणतिय तदुवरिं जिणसाहम्मिसाणपडिबद्ध ॥ ६३५॥

अर्धेन्दुनिभा मध्ये शतपञ्चाशदर्धदैर्घ्यव्यासोदया ।
आसनत्रयं तदुपरि जिनसौधर्मैशानप्रतिबद्ध ॥ ६३५ ॥

अद्धि [illegible] अर्धेन्दुनिभा [illegible] पञ्चाशदर्धदैर्घ्य [illegible] अध्यासन [illegible] तदुपरि जिनसौधर्मैशानप्रतिबद्धमासनत्रय [illegible]

[illegible]

मज्झे सिंहासण [illegible] दक्खिण [illegible] तु सोहम्म ।
उत्तरभागम्मि [illegible] ॥ ६३६ ॥

नीलसमीपे सीतापूर्वतटे मदराचलैशान्या ।
उत्तरकुरौ जम्बूस्थली सपचशततलव्यासा ॥ ६३९ ॥

णील । नीलगिरे समीपे सीतानद्या पूर्वतटे मदराचलस्यैशान्यां दिशि उत्तरकुरौ पचशतयोजनव्यासा जबूवृक्षस्थल्यस्ति ॥ ६३९ ॥

अंते दलबाहल्ला मज्झे अट्ठुदय वट्ट हेममया ।
मज्झे थलिस्स पीढीमुदयतिय अट्ठबारचऊ ॥ ६४० ॥

अंते दलबाहल्या मध्ये अष्टोदया वृत्ता हेममया ।
मध्ये स्थल्या पीठमुदयत्रय अष्टद्वादशचतु ॥ ६४० ॥

अंते । सा च पुनरंते दल ? योजनबाहल्या मध्येष्टयोजनोदया वृत्ताकारा हेममयी स्यात् । तत्स्थलीमध्ये ष्टयोजनोदय द्वादशयोजनमूलव्यास चतुर्योजनमुखव्यास पीठमस्ति ॥ ६४० ॥

तत्थलिउवरिमभाग बाहिं बाहिं पवेढिऊण ठिया ।
कंचणथलयसमाणा बारसुजवेदिया णेया ॥ ६४१ ॥

तत्स्थल्युपरिमभागे बहिर्बहि प्रवेष्ट्य स्थिता ।
काचनस्थलसमाना द्वादशाम्बुजवेदिका ज्ञेया ॥ ६४१ ॥

तत्थलि । तत्स्थल्युपरिमभाग बहिर्बहि प्रवेष्ट्य काचनस्थलसमाना अर्धयोजनोत्सधा उत्सधान्यासा नानारत्नसंकीर्णा अम्बुजवेदिका द्वादश ज्ञेया ॥ ६४१ ॥

चउगाउरय वदीबाहिरदा पढमबिदियग सुण्णं ।
तदिए सुरसमाण अट्ठदिसे अट्ठसयरुक्खा ॥ ६४२ ॥

चतुर्गोपुरका वदीबाह्यत प्रथमद्वितीयके शून्य ।
तृतीय सुरसमाना अष्टदिशा सु अष्टशतवृक्षा ॥ ६४२ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १४६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १४६ ॥

[illegible]

दस्तगास्सागमसमग जाअणत्तुंग गुलिअकसाओ ।
धीढिय उअरिं णेय पञ्चद्दृठउआमसहिं गउमाढा ॥ १४७ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १४७ ॥

[illegible]

णाणारयणुक्कमाहा पवालमुमणा सिप्पिमसिमफला ।
पुव्विमधा समगुणा मज्झगा उवदुवामा ॥ १४८ ॥

[illegible] प्रवालसुमनसः [illegible] ।
[illegible] ॥ १४८ ॥

णाणा [illegible] प्रवालमयसुमनः [illegible] चतु [illegible] स्यात् ॥

[illegible] वृक्षस्थल [illegible] ।
[illegible] ॥ ६४६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६४६ ॥

[illegible] । [illegible] ॥ ६४६ ॥

दसणाइदसागमणाए जोयणाणुगमंतुंग मुहिंदरकमणा ।
पीठिय उवरिं जंबू वणदुदुष्टयागसीह मज्झगाह ॥ ६४७ ॥

दश [illegible] मुहिंदरक [illegible] ।
पीठोपरि जंबू [illegible] ॥ ६४७ ॥

[illegible] । [illegible] ॥ ६४७ ॥

णाणारयणुवसाहा पवालसुमणा मिदिंगसरिसफला ।
पुढविमया दुमतुंगा मज्झग्गा छचदुस्सामा ॥ ६४८ ॥

नानारत्नोपशाखा प्रवालसुमना मृदंगसदृशफलः ।
पृथ्वीमयः [illegible] ॥ ६४८ ॥

णाणा । स च वृक्षः नानारत्नमयोपशाखः प्रवालवत्सुमनाः मृदंग-सदृशफलः पृथ्वीमयः दशयोजनतुंगः मध्ये यथासंख्यं षट् ६ चतुः ४ योजन [illegible] स्यात् ॥ ६४८ ॥

उत्तरकुलगिरिमाइ जिणगेहो सममाहनिद्दपहिं ।
आदरअणादराणं णवरगुह्नधाणमावासा ॥ ६५० ॥

उत्तरकु[illegible] [illegible] [illegible] ग्रंथ ।
आदरान[illegible] [illegible] [illegible] वासा ॥ ६५० ॥

उत्तर । [illegible] [illegible] [illegible] आदरानादरयोर्देवयो जिन
[illegible] [illegible] आदरानादरयोर्यन्त
[illegible] । ६५

अथ परिवा[illegible] [illegible] [illegible] —

जबूतरुदलमाणा जबूतरुस्स कहिदपरिवारा ।
आदरअणादराणं पासादाणामसद्दा ते ॥ ६५० ॥

जबूतरु [illegible] [illegible] कथितपरिवाराः ।
आदरानादरयोः परिवारासयमनुवादाः ॥ ६५१ ॥

जबू । जबू [illegible] [illegible] ते आदरानादरयोः
परिवाराः [illegible] । ६५

अथ [illegible] [illegible] [illegible]

सीतादोयन्तीरे जिणसमभाव सुरहिणरिविए ।
देवकुरुम्मि मणोहररम्पथले सामली सपरिवारा ॥६५१॥

सीता[illegible] [illegible] [illegible] मरुद्दिनैऋत्यां ।
देवकुरु मनोहर[illegible] शाल्मली सपरिवारा ॥ ६५१ ॥

सीताया [illegible] [illegible] [illegible] नैऋत्यां दिशि देव
कुरुषु मनोहर[illegible] [illegible] [illegible] । २४ १२०
[illegible]

जंबुसमवण्णणो सो दक्खिणसाहम्हि जिणगिह सेसे।
दिससाहतिगे गरुडवडवेणूवेणादिधारिगिहं ॥ ६५२ ॥

जम्बूसमवर्णन स दक्षिणशाखाया जिनगृह शेषे ।
दिशाशाखात्रये गरुडपतिवेणुवेण्वादिधारिगृहम् ॥ ६१२ ॥

जंबू। असौ जम्बूसमवर्णन, तस्य दक्षिणशाखाया जिनगृहमस्ति। शेषे दिग्गतशाखात्रय गरुडपतिर्वेणुवेणुधारिणो' गृहा' सति ॥ ६५२ ॥

अथ भोगभूमिकर्मभूम्योर्विभागमाह,—

कुरुओ हरिरम्मगभू हेमवदेरण्णवदखिदी कमसो।
भोगधरा वरमज्झिमवराय कम्मावणी सेसा ॥ ६५३ ॥

कुरू हरिरम्यकभुवौ हैमवतैरण्यवतक्षिती क्रमश ।
भोगधरा वरमध्यमावरा कर्मावनय शेषा ॥ ६१३ ॥

कुरुओ। देवकुरूत्तरकुरुक्षेत्रे द्वे उत्तमभोगभूमी हरिरम्यकक्षेत्रे द्वे मध्यमभोगभूमी हैमवतहैरण्यवतक्षेत्रे द्वे जघन्यभोगभूमी स्याता। शेषा सर्वा' कर्मभूमय ॥ ६५३ ॥

अथ यमकगिरे स्वरूप गाथाद्वयेनाह,—

णीलणिसहादु गंता सहस्समुभए तडे वरणइण।
दुगदुगसेला पुव्वो चित्तो अवरो विचित्तक्खो ॥६५४॥

नीलनिषधतो गत्वा सहस्रमुभये तटे वरनद्यो ।
द्विकद्विकशैलौ पूर्व चित्र अपर विचित्राख्य ॥ ६१४ ॥

णील। नीलनिषधाभ्या पुरस्तात सहस्रयोजन गत्वा वरनद्यो सीतासीतोदयोरुभयतटे द्वौ द्वौ शैलौ भवत। तयोर्मध्ये पूर्वतटगतश्चित्रोऽपरतटगतो विचित्राख्य ॥ ६५४ ॥

णीलु । शीतोत्तरकुरुचंद्रैरावतमाल्यवत इत्येता एव निषधदेवकुरु सूरसुलसविद्युत इत्येता एव सीतासीतादयो ह्रदनामानि ॥ ६५७ ॥

णइणिग्गमदारजुदा ते तप्परिवारवण्णणं चेसिं ।
पउमं व कमलगेहे णागकुमारीउ णिवसंति ॥ ६५८ ॥

नदीनिर्गमद्वारयुतानि तानि तत्परिवारवर्णनं चैषां ।
पद्ममिव कमलगेहेषु नागकुमार्यो निवसन्ति ॥ ६५८ ॥

णइ । तानि सरांसि नदीप्रवेशनिर्गमद्वारयुतानि । एतेषां तत्परिवारवर्णनं च पद्मवत् । तत्रत्यकमलोपरिमगृहेषु सपरिवारा नागकुमार्यो निवसंति ॥ ६५८ ॥

दुतडे पण पण कंचणसेला सयसयपदद्धमुहवयतियं ।
ते दहमुहा णगक्खा सुरा वसंतीह सुगवण्णा ॥ ६५९ ॥

द्वितटे पञ्च पञ्च काञ्चनशैलाः शतशतदलार्धमुखव्यासाः ।
ते ह्रदमुखा नगाख्याः सुरा वसन्ति इह शुकवर्णाः ॥ ६५९ ॥

दुतड । तेषां ह्रदानां द्वितटे पंच पंच काञ्चनशैलाः तेषामुदयमुखव्यासा यथासंख्यं शत १०० शत १०० पंचाशत् ५० योजनानि च शैला ह्रदमुखाः । कंचनाः । तदुपरितनगनामानो ह्रदाभिमुखाकाराः शुकवर्णा नगसमानाख्या सुरास्तत्रोपरि वसंति ॥ ६५९ ॥

अथ तत्र उपरि नद्यः समवसरणमाह,—

दहदो णदूणणगा सहस्सदुगणउदिदोणि वे य कमा ।
णदिदारजुदा णदी दक्खिणउत्तरगभद्दसालम्मि ॥ ६६० ॥

ह्रदात् गत्वा सहस्रद्विकनवतिद्वे अपि द्वे च क्रमात् ।
नदीद्वारयुता नदी दक्षिणोत्तरगा भद्रशालवने ॥ ६६० ॥

[illegible] ॥ ६५७ ॥

णइणिग्गमद्दारजुदा ते सप्परिवारघण्णणं घेति।
पउमद्द कमलगेहे णागकुमारीउ णिवसंति ॥ ६५८ ॥

[illegible] ॥ ६५८ ॥

[illegible] ॥ ६५८ ॥

कुण्ड [illegible] गुरुपतिदे ।
ते [illegible] गुणवण्णा ॥ ६५९ ॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ६५९ ॥

[illegible] ॥ ६५९ ॥

[illegible] —

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६६० ॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ६६० ॥

दक्षिण । प्रतिशाल ८८ ताब्दं । १ चतुर्भिरपि मिलितानि ७०५० पार्श्वद्वयो मिश्रितस्थितदक्षिणोत्तरदिक्पिण्डे मि च ११ महतीनामायताश्च सहितश्चतुर्गुणानि ८० मिलिते । ८ कलोद्विगुणिता । तृतीयानि ७५० चतुर्गुणानि १५० मध्ये ... १००० तानि १०५०० विष्कम्भगुणितानि ३१६८४ ... प्रविष्टे ५३१८४ ... ११५२९०... । प्रविष्टे ... विजयार्द्धकूट ... १००० विस्तारार्धं १००० विस्तारसहितं ५०० उदयादर्धं ५०० तावन्मात्रं १००० एतत् सर्वमपि संकलय्य ५०० ... ... ६००० ... मानानि ॥ ६६० ॥

अथ दिग्गजपर्वतानां स्वरूपं गाथाद्वयेनाह —

पुव्वावरमसलदीहा महाणदीण च दोसु पासेसु ।
दो दो दिग्गयकूडा सयससियदट्ठदयवित्थारा ॥ ६६१ ॥

पूर्वापरभागे महानद्योः द्वयोः पार्श्वयोः ।
द्वौ द्वौ दिग्गजेन्द्रौ शतशतदलमुदयप्रमाणे ॥ ६६१ ॥

पुन । ... पूर्वापरदीर्घा ... महानद्योः ... द्वौ ... दिग्गजेन्द्रपर्वता निर्गता ... ... यथासंख्यं शतं १०० शतं १०० दलं । ५० योजनानि स्युः ॥ ६६१ ॥

तण्णामा पुव्वादी पउमुत्तरणीलसत्थियंजणया ।
कुमुदपलासवदंसयरोयणमिह दिग्गजिंदसुरा ॥ ६६२॥

तन्नामानि पूर्वादि पद्मोत्तरनीलस्वस्तिकाञ्जनाः ।
कुमुदपलाशावतंसरोचनमिह दिग्गजेन्द्रसुराः ॥ ६६२ ॥

तण्णामा । पूर्वदिशि आरभ्य पद्मोत्तरं ... कृतांजनकुमुदपलाशा-वतंसरोचनमिति तेषां नामानि । इह दिग्गजेन्द्रसुरानिमित्तानि ॥ ६६२ ॥

अथ गजदन्तपर्वतानां नामादिकं गाथाद्वयेनाह,—

मल्लव महसोमणसो विज्जुप्पह गंधमादणि मद्दंता ।
ईसाणादो वेलुरियरुप्पतवणीयहेममया ॥ ६६३ ॥

माल्यवान् महासौमनस विद्युत्प्रभ गंधमादन इमदंता ।
ईशानतः वैडूर्यरूप्यतपनीयहेममयाः ॥ ६६३ ॥

मल्लव । माल्यवान् महासौमनसो विद्युत्प्रभो गंधमादन इतीमे दंता वैडूर्यरूप्यतपनीयहेममया मेरोरीशानदिश आरभ्य तिष्ठन्ति ॥ ६६३ ॥

णीलणिसहे सुरद्दिं पुट्ठा मल्लवगुहादु सीता सा ।
विज्जुप्पहगिरिगुहदो सीतोदा णिस्सरित्तु गया ॥ ६६४ ॥

नीलनिषधौ सुराद्रिं स्पृष्टा माल्यवद्गुहायाः सीता सा ।
विद्युत्प्रभगिरिगुहातः सीतोदा निःसृत्य गता ॥ ६६४ ॥

णील । ते च नीलनिषधौ सुराद्रिं च स्पृष्टाः । तत्र माल्यवतो गुहायाः निःसृत्य सा सीता गता विद्युत्प्रभगिरिगुहायाश्च निःसृत्य सीतोदा गता ॥ ६६४ ॥

इदानीं विदेहदेशानां विभागं निरूपयति,—

उभयतटवणवेदियमज्झगवक्खारगणविभंगणदी य ।
मज्झगवक्खाराअऊ पुव्ववरविदेहविजयट्ठा ॥ ६६५ ॥

उभयतटवनवे[illegible] वक्षारगणविभंगनद्यश्च ।
[illegible] ॥ ६६५ ॥

उभयत । [illegible]

[illegible] ॥ ६६५ ॥

[illegible] नामानि [illegible] गाथाद्वयेनाह,—

[illegible] ।
[illegible] ६६६

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६६६ ॥

[illegible] ॥ ६६६ ॥

णाहददपंचपदिणदी णिसढुदयसवणअंजणप्पादि ।
अंजणगा णवजल णवजलुम्मत्तजल सिंधू ॥ ६६७ ॥

[illegible] निषधोदयश्रवणाञ्जनात्मादि ।
[illegible] उन्मत्तजला सिंधु ॥ ६६७ ॥

[illegible] ॥ ६६७ ॥

सद्दाव विजडाव आसीविस सुहवहा य वक्खारा ।
खारोदा सीतोदा सोदोवाहिणि णदी मज्झ ॥ ६६८ ॥

श्रद्धावान् विजटावान् आशीविष सुखावहश्च वक्षाराः ।
क्षारोदा सीतोदा स्रोतोवाहिनी नद्यः मध्ये ॥ ६६८ ॥

सद्दाव । श्रद्धावान् विजटावान् आशीविष सुखावह इति चत्वारो वक्षाराः [illegible] क्षारोदा सीतोदा स्रोतोवाहिनी चेति तिस्रो नद्यः वक्षाराणां मध्ये सन्ति ॥ ६६८ ॥

चंदसूरणागादिममाला देवमाल वक्खारा ।
गंभीरमालिणी फेणमालिणी उम्मिमालिणी सरिदा ॥

चन्द्रसूर्यनागादिममाला देवमाला वक्षाराः ।
गम्भीरमालिनी फेनमालिनी ऊर्मिमालिनी सरितः ॥ ६६९ ॥

तो । ततश्चन्द्रमाल सूर्यमालो नागमालो वैश्रमाल इति चत्वारोऽपरवि[illegible] देहसीतोद्वात्तरद्विक्रूत्पयक्षारा । गभीरमालिनी फेनमालिनी ऊर्मिमालिनी [illegible] तिस्रस्तत्रापरसरित ॥ ६६९ ॥

हेममया वक्खारा वेभगा रोहिसरिसवण्णणगा।
तासि पवेसतोरणगेहे णिवसति दिक्कण्णा ॥ ६७० ॥

हेममया [illegible] विभगा रोहिनमध्याणगा । [illegible]
नाभा [illegible] निवस[illegible] ॥ ६७० ॥

[illegible]

[illegible] ६७१ [illegible]

[illegible] ६७२ ॥

[illegible]

छव्वीस । नगरादीनां संख्या यथाक्रमं षड्विंशतिसहस्राणि २६००० षोडशसहस्राणि १६००० चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० चत्वारिंशत्सहस्राणि ४००० अष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि ४८००० नवनवतिसहस्राणि ९९००० चतुर्दशसहस्राणि १४००० अष्टाविंशतिसहस्राणि २८००० भवति ॥ ६७५ ॥

वइ चउगोउरसाल णदिगिरिणगवेढि सपणसयगाम ।
रयणपट्टसिंधुवेलावलइय णगुवरिट्ठिय कमसो ॥६७६॥

वृत चतुर्गोपुरशालं नदीगिरिनगवेष्ट्य सपञ्चशतग्राम ।
रत्नपट्टसिंधुवेलावलयित नगोपरि स्थित क्रमशः ॥ ६७६ ॥

वइ । वृत्या वृतो ग्राम चतुर्गोपुरशालयुत नगरं नद्यद्रिवेष्ट्य खेट नगवेष्टित खर्वट पञ्चशतग्रामयुत मडंब रत्नानां स्थान पत्तनं नदीवेष्टितो द्रोण जलधिवेलावलयित संवाह नगोपरि स्थिता दुर्गाटवी क्रमशः ॥ ६७६ ॥

अथ विदेहदेशस्योपसमुद्राभ्यन्तरद्वीपस्वरूपमाह,—

छप्पण्णंतरदीवा छव्वीससहस्स रयणआयरया ।
रयणाण कुक्खिवासा सत्तसय उवसमुद्दम्हि ॥ ६७७ ॥

षट्पञ्चाशदन्तरद्वीपाः षड्विंशसहस्र रत्नाकराः ।
रत्नानां कुक्षिवासाः सप्तशतानि उपसमुद्रे ॥ ६७७ ॥

छप्पण्ण । विदेहदेशाभ्यन्तरसमुद्रषट्पञ्चाशत् ५६ द्वीपाः षड्विंशतिसहस्र २६००० रत्नाकराः रत्नानां क्रयविक्रयस्थानभूतकुक्षिवासाः सप्तशतानि ७०० भवन्ति ॥ ६७७ ॥

अथ मागधादिद्वीपानां स्थानमाह —

सीतासीतोदाणं दितीरमज्झीय जलम्हि गच्छंते ।
पुव्वादी मागहवरतणुप्पभासामराण हवे ॥ ६७८ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६८१ ॥

[illegible] ॥ ६८१ ॥

[illegible] —

[illegible] विगुणणवयकोडीओ ।
[illegible] ६८२

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६८२ ॥

पुरुषाः । [illegible] ८४०००० [illegible]
८४००००० तथा द्विगुणनवकोट्यः १८०००००००० [illegible]
[illegible], [illegible], [illegible], [illegible],
सूर्यवत् [illegible], [illegible], [illegible], [illegible],
[illegible] इति [illegible] । [illegible]
[illegible] इति [illegible]
षण्णवतिसहस्राणि ९६००० चक्रिणा भवति ॥ ६८२ ॥

[illegible],—

अण्णे सगपदविठिया सेणागणरणिनदुटवइमती ।
महपरतलयरचण्णा चउरंगपुरोहमबमटमचा ॥ ६८३ ॥

गत्य सीतासीतोदयो प्रविष्टे । रक्तारक्तोदे द्वे निषधनीलमूलस्थितकुण्डानि सृत्य सीतासीतोदयो प्रविष्टे ॥ ६९२ ॥

दसदसपणोत्ति पण्ण तीस दसय च रुप्पगिरिवासा ।
खयराभिजोग सढी सिहरे सिद्धादिकूल तु ॥ ६९३ ॥

दश दश पञ्चोत्सेधः पञ्चाशत् त्रिंशत् दशकं च रूप्यगिरिव्यासाः ।
खचराभियोग्या श्रेणी शिखरे सिद्धादिकूटं तु ॥ ६९३ ॥

दस । तस्य विजयार्धस्य दश योजनोत्सेधा प्रथमा श्रेणी पञ्चाशद्योजनसमव्यासा । तत उपरि दशयोजनोत्सेधा द्वितीया श्रेणिस्त्रिंशद्योजनसमव्यासा, तत उपरि पञ्चयोजनोत्सेध उपरिमशिखरं दशयोजनव्यासं । तत्र प्रथमोभयतटगतश्रेण्यां खचरा निवसन्ति, द्वितीयायामाभियोग्याः शिखरे तु सिद्धादिनवकूटानि सन्ति ॥ ६९२ ॥

अथ तत्रैव द्वितीयादिश्रेणौ विशेषमाह,—

सोहम्मआभिजोग्गगमणिचित्तपुराणि विदियसेढिम्हि ।
वेयड्ढकुमारपहू सिहरतले पुण्णभद्दक्खे ॥ ६९४ ॥

सौधर्माभियोग्यगमणिचित्रपुराणि द्वितीयश्रेण्याम् ।
विजयार्धकुमारपतिः शिखरतले पूर्णभद्राख्ये ॥ ६९४ ॥

सोहम्म । तत्रैव द्वितीयायां श्रेण्यां सौधर्मस्याभियोग्यानां मणिमयानि विचित्रपुराणि सन्ति । तस्य शिखरस्थ पूर्णभद्राख्ये कूटे विजयार्धकुमारपतिरस्ति ॥ ६९४ ॥

अथ तत्र प्रथमश्रेण्यां स्थितविद्याधरनगराणां संख्यां तन्नामानि च देश दर्शयितुमाह,—

पणवण्ण पणवण्णा विदेहवेयड्ढपढमसेढिम्हि ।
णयराणि पण्ण सट्ठी जंबूउभयतडवेयड्ढे ॥ ६९५ ॥

पञ्चपञ्चाशत् पञ्चपञ्चाशत् विदेहविजयार्धप्रथमभूमौ ।
नगराणि पञ्चाशत् षष्टि जम्बूभरतविजयार्धे ॥ ६९५ ॥

पण । विदेहविजयार्धप्रथमोभयश्रेण्योर्विजयार्धस्य पञ्चाधिकपञ्चाशत् ५५ पञ्चाधिकपञ्चाशत् ५५ नगराणि सन्ति । जम्बूद्वीपोभयतभरतैरावतस्थविजयार्धे प्रथमोभयश्रेण्यो च पञ्चाशत् ५० षष्टि ६० नगराणि सन्ति ॥ ६९५ ॥

सेलायामे दक्खिणसेढीए पण्णमुत्तरे सट्ठी ।
तण्णामा पुव्वादी किंणामिद किंणरगीद ॥ ६९६ ॥

शैलायामे दक्षिणश्रेण्या पञ्चाशदुत्तरस्यां षष्टि ।
तन्नामानि पूर्वादित किंनामित किंनरगीत ॥ ६९६ ॥

सेल । भरतैरावतविजयार्धशैलायामे दक्षिणश्रेण्यां पञ्चाश ५० नगराणि, उत्तरश्रेण्यां तु षष्टि ६० नगराणि । तेषां नगराणां नामानि पूर्वदिश आरभ्य कथ्यते—किंनामित किंनरगीत ॥ ६९६ ॥

णरगीद बहुकेदू पुंडरिय सीहसेदगरुडधज ।
सिरिपहधरलोहग्गलमरिंजय वज्जअग्गलड्ढपुर ॥६९७॥

नरगीत बहुकेतु पुंडरीक सिंहश्वेतगरुडध्वज ।
श्रीप्रभधर लोहार्गलमरिंजय वज्रार्गलाढ्यपुर ॥ ६९७ ॥

णरगीद । नरगीत बहुकेतु पुंडरीक सिंहध्वज श्वेतध्वज गरुडध्वजं श्रीप्रभ श्रीधर लोहार्गलमरिंजय वज्रार्गल वज्राढ्यपुर ॥ ६९७ ॥

होइ विमाइ पुरजय सयडचउमुहबहुमुही य अरजक्खा ।
विरजक्खा रहणूपुर मेहलअग्गपुर खमचरी ॥ ६९८ ॥

भवति विमाचि पुरजय शकटचतुर्बहुमुखा च अरजस्का ।
विरजस्का रथनूपुर मेखलाग्रपुर क्षमचरा ॥ ६९८ ॥

पुन्नागादि नेमिपर्यन्तनगराणि अरिंजयपुरं ।

नगरान्ते श्रीनाथ मणिवज्र पद्मा नगरं क्षेमं ॥ ७०६ ॥

पुन्ना । पुन्नागादि नेमिपर्यन्तनगराणि अरिंजयपुरं नगराणि श्रीवासं मणिवज्रं पद्मनगरं क्षेमं च ॥ ७०६ ॥

गोखीरफेणमक्खोभ गिरिसिहरं च धरणि धारिणियं ।
दुग्गं दुद्धरणयरं सुदंसणं तो महिंदविजयपुरं ॥ ७०७ ॥

गोक्षीरफेनमक्षोभं गिरिशिखरं च धरणि धारिणिकं ।

दुर्गं दुर्धरनगरं सुदर्शनं ततः महेन्द्रविजयपुरं ॥ ७०७ ॥

गोखीर । गोक्षीरफेनं अक्षोभं गिरिशिखरं धरणिपुरं धारिणीपुरं दुर्गं दुर्धरनगरं सुदर्शनं ततो महेन्द्रपुरं विजयपुरं ॥ ७०७ ॥

णयरी सुगंधिणी वज्जद्धतरं रयणपुरआयरयं ।
रयणपुर चरिमेत्ते रयणमया राजगाणीओ ॥ ७०८ ॥

नगरी सुगंधिनी वज्राधतरं रत्नाकरं ।

रत्नपुरं चरमं ता रत्नमया राजधान्यः ॥ ७०८ ॥

णयरी । सुगंधिनी नगरी वज्राधतरं रत्नाकरं रत्नपुरं चरमं एता रत्नमया राजधान्यः स्युः ॥ ७०८ ॥

पायारगोउरट्टालचरियासरवण विराजिया तत्थ ।
विज्जाहरा तिविज्जा वसंति छक्कम्मसंजुत्ता ॥ ७०९ ॥

प्राकारगोपुराट्टालचर्यासरोवनैः विराजिता तत्र ।

विद्याधरा त्रिविधा वसंति षट्कर्मसंयुक्ता ॥ ७०९ ॥

पायार । ताश्च पुनः प्राकारगोपुराट्टालकचर्यासरोवनैर्विराजिता । तत्र साधितकुलजातिविद्याभिः त्रिविधा षट्कर्मसंयुक्ता इज्या असिमष्यादि-

जीवनोपायव्यापारा वार्ता दत्तिश्च स्वाध्याय संयमस्तप इत्येतानि षट्कर्माणि एतैर्युक्ता विद्याधरा वसन्ति ॥ ७०९ ॥

अथ विजयार्धकृतषट्खण्डम्लेच्छखण्डमध्यस्थितवृषभाद्रीणां स्वरूपं निरूपयति,—

सत्तरिसयरसहगिरी मज्झगयमिलेच्छखंडबहुमज्झे।
कणयमणिकचणुदयति मरिया गयचक्किणामेहिं ॥७१०॥

सप्ततिशत वृषभगिरयः मध्यगतम्लेच्छखण्डबहुमध्ये।
कनकमणिकाञ्चनोदयत्रिक भृता गतचक्रिनामभिः ॥ ७१० ॥

सत्तरि। कनकवर्णा मणिमया काञ्चनपर्वताद्य १०० म १०० मुख ५० यास्ता गतचक्रिणां नामभिर्भृता सप्तत्यग्रशत १७० वृषभगिरयः मध्यगतम्लेच्छखण्डबहुमध्ये तिष्ठन्ति ॥ ७१ ॥

अथ न [illegible] —

सत्तरिसयणयराणि य उववणवेदिगअजगबहुमज्झम्हि।
चक्कीणं पाचर [illegible] ॥ ७११ ॥

[illegible]

सत्तरि। [illegible]

[illegible]

खमा खमणी [illegible] तहा।
खग्गा य भजमा [illegible] ॥ ॥

[illegible]

शिखरेषु मौलिस्थानीयेषु [illegible] नि-संति ॥ ७१९ ॥

इदानीं हिमवदादिकुलगिरीणां विजयार्धानां चोपरि स्थितकूटानां संख्यादिकमाह,—

एक्कारसट्ठणवणव अट्ठेक्कारस हिमादिकूडाणि।
वेयड्ढाण णवणव पुव्वगकूडम्हि जिणभवण ॥ ७२० ॥

एकादशाष्ट नव नव अष्टैकादश हिमादिकूटानि।
विजयार्धानां नव नव पूर्वगकूटे जिनभवनानि ॥ ७२० ॥

एक्का। एकादश ११ अष्ट ८ नव ९ नव ९ अष्ट ८ एकादश ११ प्रमितानि यथाक्रमं हिमवदादिकुलपर्वतानामुपरि स्थितकूटानि विजयार्धानामुपरि नव ९ नव ९ कूटानि। तत्र पूर्वदिग्गतकूटे जिनभवनानि संति ॥ ७२० ॥

अथ उक्तकूटानां नामानि गाथाद्वयेन निगदति —

कमसो सिद्धायदण हिमव भरह इला य गंगा य।
सिरिकूडरोहिदस्सा सिंधु सुरा हेमवदय वेसवण ॥ ७२१ ॥

क्रमशः सिद्धायतनं हिमवान् भरतं इला च गंगा च।
श्रीकूटं रोहितास्या सिन्धुः सुरा हैमवतं वैश्रवणं ॥ ७२१ ॥

कमसो। क्रमशस्तानि नामानि सिद्धायतनं हिमवान् भरतं इला च गंगा च श्रीकूटं रोहितास्या सिन्धुः सुरा हैमवतं वैश्रवणं ॥ ७२१ ॥

पढमे जिणिंदगेहं देवीओ उवरिदिणामकूडेसु।
सेसेसु कूडणामा वेंतरदेवावि णिवसंति ॥ ७२२ ॥

प्रथमे जिनेंद्रगेह देव्यो युवतिनामकूटेषु ।
शेषेषु कूटनामान व्यन्तरदेवा अपि निवसंति ॥ ७२२ ॥

पढम । [illegible] प्रथमकूटे जिनेंद्रगेह श्रीहिंगारप्रकूटेषु व्यंतरदेव्यो निवसंति । शेषेषु तत्र कूटनाम व्यंतरदेवा निवसंति ॥ ७२२ ॥

वट्टा सव्वे कूडा रयणमया सगणगस्स तुरियुदया ।
तत्तियभूवित्थारा तदद्धवदणा हु सव्वत्थ ॥ ७२३ ॥

वृत्ता सर्वे कूटा रत्नमया स्वकनगस्य तुर्योदयाः ।
तावद्भूविस्तारा तदर्धवदना हि सर्वत्र ॥ ७२३ ॥

वट्टा । ते सर्वे कूटा वृत्ता रत्नमया स्वकीयनगस्य चतुर्थांशोदया तावन्मात्रभूविस्तारास्तदर्धवदना खलु भवति ॥ ७२३ ॥

सो सिद्ध महाहिमवं हेमवद रोहिदा हिरीकूड ।
हरिकंता हरियरिस वेलुरिय पच्छिम कूड ॥ ७२४ ॥

तत सिद्ध महाहिमवान् हैमवत रोहिता ह्रीकूट ।
हरिकांता हरिवर्ष वैडूर्य पश्चिम कूट ॥ ७२४ ॥

सो । पश्चिम चरम इत्यर्थ । शेष छायामात्रमवार्थ ॥ ७२४ ॥

सिद्ध णिसह च हरिवरिस पुव्वविदेह हरिधिदीकूड ।
सीतादा णामभदो अवरविदेह च रुजगत ॥ ७२५ ॥

सिद्ध निषध च हरिवर्ष पूर्वविदेह हरिधृतिकूटं ।
सीतोदा नाम अत अपरविदेह च रुचकान्तम् ॥ ७२५ ॥

सिद्धं । सिद्ध निषधं च हरिवर्ष पूर्वविदेह हरिकूटं धृतिकूट सीतोदा नाम अतोऽपरविदेह चांत रुचकं ॥ ७२५ ॥

सिद्ध णील पुव्वविदेह सीदा य किति णरकंता ।
अवरविदेहं रम्मगमवदसणमतिम णीले ॥ ७२६ ॥

सिद्ध नील पूर्वविदेह सीता च कीर्ति नरकांता ।
अपरविदेह रम्यक आदर्शन अंतिम नीले ॥ ७२६ ॥

सिद्ध । छायामात्रमेवार्थ ॥ ७२६ ॥

सिद्ध रुम्मी रम्मग णारी बुद्धी य रुप्पकूलक्खा ।
हेरण्ण कूडमदो मणिकंचणमट्ठम होदि ॥ ७२७ ॥

सिद्ध रुक्मी रम्यक नारी बुद्धिश्च रूप्यकूलाख्या ।
हैरण्य कूटमतो मणिकांचनमष्टम भवति ॥ ७२७ ॥

सिद्ध । छायामात्रमेवार्थ ॥ ७२७ ॥

सिद्ध सिहरि य हेरण्ण रसदेवी तदो य रत्तक्खा ।
लच्छी सुवण्ण रत्तवदी गधवदीय कूडमदो ॥ ७२८

सिद्ध शिखरी च हैरण्यं रसदेवी ततश्च रक्ताख्या ।
लक्ष्मी सुवर्ण रक्तवती गधवती कूटमत ॥ ७२८ ॥

सिद्ध । छायामात्रमेवार्थ ॥ ७२८ ॥

एरावदमणिकंचणकूड सिहरिम्हि सव्वसेलाण ।
मूले सिहरेवि हवे दहेवि वणसडमेदस्स ॥ ७२९ ॥

ऐरावतमणिकाचनकूट शिखरे सर्वशैलानाम् ।
मूले शिखरेपि भवेत् ह्रदेपि वनखडमेतस्य ॥ ७२९ ॥

एरावद । ऐरावत मणिकाचनकूट ११ शिखरे पर्वते सर्वेषां शैलान मूले शिखरेपि ह्रदेपि वनखड भवेत् । एतस्य वनषडस्य ॥ ७२९ ॥

[illegible]

ताम [illegible]

[illegible]

अथ [illegible] सिद्धकूटाग्रं च कूटसंख्यापरं देवकुरु [illegible] —

पउमसरतय पउमत्तय इमाणदिसा कुरुणमट्टाणं ।
पउमद्दहाण पउमद्दकूड तण्णाममणुकमसो ॥ ७३७ ॥

[illegible] ईशानदिशा [illegible] ।
[illegible] कूटानि [illegible] अनुक्रमशः ॥ ७३७॥

[illegible]

सिद्ध महवमुलकडुन्न कणय य सागर रजद ।
पुण्णादिभद्द सीया हरिसहकूड [illegible] णवम ॥ ७३८ ॥

सिद्ध [illegible] सागर रजत ।
पूर्णभद्र सीता [illegible] नवम ॥ ७३८ ॥

सिद्ध । सिद्धकूट [illegible] कनक च सागर रजतं पूर्णभद्र [illegible] नवम भवेत् । ७३८ ।

ता सिद्ध सोमणस कूड देवकुरु मगल विमल ।
कंचण वसिट्ठमन सिद्ध विज्जुप्पह तत्ता ॥ ७३९ ॥

तत सिद्ध सौमनस [illegible] देवकुरु मगल विमल ।
काञ्चन अवशिष्टमन सिद्ध विद्युत्प्रभ तत ॥ ७३९ ॥

ता । तत सिद्धकूट सौमनसकूट देवकुरुकूट मगल विमल कांचनं [illegible] अवशिष्ट [illegible] तत सिद्धकूट विद्युत्प्रभ । ७३९ ॥

देवकुरु पउम तवण सात्थियकूड सदुज्जल तत्तो ।
सीतादा हरि चरिमता सिद्ध गंधमादणय ॥ ७४० ॥

[illegible]

कुरुगिरिसमीवदेसे दिग्गयणामा हवंति सेलाओ ।
[illegible] ॥ ७४४ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ७४४ ॥

[illegible] ॥ ७४४ ॥

अथ वक्षाराणामुदयं तत्रत्याकृत्रिमचैत्यालयस्थाननिर्देशं च करोति,—

वक्खारसयाणुदओ कुलगिरिपासम्हि चउसय पुट्टा ।
गइमेरुस्स य पासे पंचसया तत्थ जिणगेहा ॥ ७४५ ॥

वभारशतानामुदय कुलगिरिपार्श्वे चतु शत वृद्धया ।
नदीमेरोश्च पार्श्वे पचशतानि तत्र जिनगेहा ॥ ७४५ ॥

वक्खार । गानवक्षारपर्वतानामुदय कुलगिरिपार्श्वे चतु शत ४०० योजनानि, तत परमनुक्रमेण वद्धया विदेहगतानां नदीपार्श्वे गजदंतानां मेरुपार्श्वे पचशत ५०० योजनान्युत्सेध तत्र पंचशतयोजनोत्सेधस्यकूटे जिनगेहा सति ॥ ७४५ ॥

अथ नद्यादिकूटानामुत्सेधानयने करणसूत्रमाह,—

गिरितुरिय पढमंतिमकूडुदओ उभयसेसमवहरिदे ।
घेगपदेण चयो सो इट्ठगुणो मुहजुदो इट्ठ ॥ ७४६ ॥

गिरितुरीय प्रथमान्तिमकूटोदय उभयशेषमपहृते ।
ऐकपदेन चय स इष्टगुण मुखयुत इष्ट ॥ ७४६ ॥

गिरि । वक्षारगिरीणामुत्सेध ४००।५०० चतुर्थांश एव तदुपरिमप्रथमान्तिमकूटोदय १००।१२५ एतदुभय विशेषयित्वा २५ प्रथमस्य हानिवृद्ध्योरभावात् विगतैकपदेन ८।,।३ अपहृत सति ३ भा २५/८ । ४ भा २५/८ हानिचयो भवति । स एव रूपोनेष्टगुणित ३। २५/८ ।१/४। २५/८ । २५/८ । २५/८ ।१२। २५/८ ।१५। २५/८ ।१८। २५/८ ।२१। २५/८ ।२५ मुख १०० युतश्चेत् १०३ २५/८ । २५/८ ।१०९। २५/८ ।११२। २५/८ । २५/८ ।११८। २५/८ ।१२१। २५/८ ।१२५ द्वितीयादिकूटस्योत्सेधो ज्ञातव्य । एव सप्तकूटचतु कूटानामानेतव्यम् ॥ ७४६ ॥

इदानीं भरतादिक्षेत्राश्रयेण परिवारनदीप्रमाण गाथाचतुष्केणाह,—

भरहइरावदसरिदा विदेहजुगले च चोद्दससहस्सा ।
णइपरिवारा तत्तो दुगुणा हरिरम्मगरिदित्ति ॥ ७४७ ॥

भरतैरावतसरित विदेहयुगले च चतुर्दशसहस्राणि ।
नदीपरिवारा तत द्विगुणा हरिरम्यकक्षेत्रान्त ॥ ७४७ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

गिरि । ज्ञातव्येष्टभद्रशालवनव्यास परित्यज्य इतरेषां गिरिप्रमुखानां वक्ष्यमाणव्यास भद्र २२००० देश २२१२ $\frac{7}{8}$ वक्षार ५०० विभंग १२५ देवारण्य २९२२ स्वकीयस्वकीयगुणकारेण २।१६।८।८।२ गुणयित्वा ४४००० ३५४०६ ४००० ७५० ५८४४ [redacted] सर्वं मेलयित्वा ९०००० एतज्जम्बूद्वीपव्यासे १००००० अपनीय शेषे १०००० इष्टगुणकारेणापहृते सति ज्ञातव्येष्टव्यास आयाति १०००० ॥ ७५२ ॥

एवमानीतव्यासप्रमाणसिद्धाकमुच्चारयति,—

दसबावीससहस्सा बारसबावीस सत्तअट्ठकला ।
कमसो पणसय पणघण बावीसुगुतीसमककमो ॥७५३॥

दशद्वाविंशसहस्राणि द्वादशद्वाविंशानि सप्ताष्टकला ।
क्रमशः पञ्चशतानि पञ्चघन द्वाविंशैकोनत्रिंशदङ्कक्रम ॥ ७५३ ॥

दस । दशसहस्राणि १०००० द्वाविंशतिसहस्राणि २२००० द्वादशो-त्तरद्वाविंशतिसप्ताष्टकला २२१२$\frac{7}{8}$ क्रमशः पञ्चशतानि ५०० पञ्चघन १२५ द्वाविंशत्युत्तरएकोनत्रिंशत् २९२२ इति भद्रशालादिव्यासाङ्कक्रमो ज्ञातव्य ॥ ७५३ ॥

इदानीं धातकीखण्डपुष्करार्धस्थितमेरूणां तद्भद्रशालवनद्वयस्य च व्यास निरूपयति,—

चउणउदिसय णवसत्तडसत्तिगिलक्खमट्ठपणसत्त ।
पण्णरस बेलक्खा खुल्ले त भद्दसालदुगे ॥ ७५४ ॥

चतुर्नवतिशतानि नवसप्ताष्टसप्तैकलक्षमष्टपञ्च सप्त ।
पञ्चदश द्वे लक्षे क्षुल्लके ते भद्रशालद्वये ॥ ७५४ ॥

चउ । चतुर्नवतिशतानि ९४०० नवसप्ताष्टसप्ताकोत्तरैकलक्षं १०७८७९ अष्टपञ्च सप्तपञ्चदशाकोत्तरे द्वे लक्षे २१५७५८ यथासंख्यं

क्षुल्लकमन्दरधातकीखण्डपूर्वापरभद्रशालद्वये पुष्करार्धे पूर्वापरभद्रशालद्वये च व्यासांकक्रमो ज्ञातव्य । धातकीखण्डपूर्वापरभद्रशालांक १०७८७९ पुष्करार्धपूर्वापरभद्रशालांक २१५७५८ । 'पम्मवणदसोदिसो दक्खिण उत्तरगभद्दसाल सेत्युनत्वाद्दाशीत्या ८८ भागे कृते तयार्दक्षिणोत्तरभद्रशालव्यासो भवति १२२५९⁄८८ । २४५१ भा ३⁄४ ॥ ७५४ ॥

अथ द्वीपद्वयावस्थितविजयानां व्याससंख्यामाह,—

तियणभछण्णाव तिण्णट्ठम तु चउणउदिसत्तणउदेक्क ।
जोयणचउत्थभाग दुदीपविजयाण विक्खंभा ॥७५५॥

त्रिनभ षण्णव त्र्यष्टम तु चतुर्णवति सप्तनवत्येक ।
योजन चतुर्थभाग द्विद्वीपविजयानां विष्कंभ ॥ ७५९ ॥

तिय । त्रिनभ षण्णवयोजनानि त्र्यष्टमांशानि ९६०३ भा ३⁄८ चतुर्णवतिसप्तनवत्येकयोजनानि योजनचतुर्थभागाधिकानि १९७९४ १⁄४ यथासंख्य धातकीखण्डपुष्करार्धद्वीपद्वयविजयानां विष्कंभ स्यात् ॥ ७५५ ॥

सांप्रत द्वीपद्वयावस्थितगजदन्तानामायाम गाथाद्वयेनाह;—

सरिसायदुगजदंता णवणभदुगसुण्णतिण्णि छच्चकला ।
तियणदुगछक्कपणतिय णवपणकादिणवयछप्पण्ण ७५६

सदृशायतगजदन्ता नवनभोद्विकशून्यत्रीणि षट्कला ।
त्रिघनाद्विकषट्पञ्चत्रीणि नवपञ्चैकादिनवकषट्पञ्चाशत् ॥ ७६१ ॥

सरिसा । जम्बूद्वीपस्थसदृशगजदन्तानां नवनभोद्विकशून्यत्रीणि योजनानि षट्कलाधिकानि ३०२०९ ६⁄१९ आयाम स्यात् । धातकीखण्डस्य महागजदन्तानामायामो यथासंख्य त्रिघनद्विकषट्पञ्चकोत्तराणि योजनानि ३५६२२७ नवपञ्चकृतिनवकैकोत्तरषट्योजनानि ५६९१९५६

सोलेकट्ठिविसट्ठिगि णवेक्कदुगद्दोण्णिदुकदिणभदोण्णि ।
देउत्तरकुरुचाव जीवा बाण च जाणेज्जो ॥ ७५७ ॥

षोडशैकाष्टिद्विषष्ट्येक नवैकद्विकद्व्यद्विकृतिनभो द्वे ।
देवोत्तरकुरुचापं जीवा बाणं च ज्ञातव्या ॥ ७५७ ॥

सोले । पुष्करार्धस्थमहागजदन्तायामायामौ यथासंख्यं षोडशैकाष्टद्विषष्ट्येकयोजनानि १९२६११६ नवैकद्विकद्वयद्विकृतिशून्यौ-द्विषष्टियोजनानि स्युः २०४२२१९ देवोत्तरकुरुचापं जीवा बाणं च वक्ष्यमाणप्रकारेण ज्ञातव्या ॥ ७५७ ॥

अथ बाणानयनप्रकारं गाथाद्वयेनाह,—

एकसाहस्सवास विरहिय पढमे तिगुणिदे जुदे मेरु ।
जीवा कुरुगा चाव गजदन्तायाममेलिदे होदि ॥७५८॥

सहस्रव्यासं विरहिते प्रथमे त्रिगुणिते युते मेरौ ।
जीवा कुरुगा चापा गजदन्तायामयोर्मेलिते भवति ॥ ७५८ ॥

एकसहस्स । सहस्रव्यासे ५०० भद्रशालायामप्रथमदले ९२००० विरहिते कृत्वा ९१५०० तद् त्रिगुणितीकृत्य ३३००० तत्र मेरुव्यासे १०००० युते सति कुरुगतजीवा प्रमाणं स्यात् । ५३००० उभयगजदन्तायामे २०२१० १६।२०२०० १६ मिलिते सति कुरुगतचाप धनुः ४०४२८१६ ॥ ७५८ ॥

मन्दरगिरिमूलविक्खंभं अवणिय विदेहवंसमज्झादो ।
दलिदे कुरुविक्खंभो सा च कुरुगं बाणं च ॥७५९॥

मेरुगिरिमूलविष्कम्भमपनीय विदेहवंशमध्यात् ।
दलिते कुरुविष्कम्भः स च कुरुगं बाणं च ॥ ७५९ ॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ७६१ ॥

[illegible] । कुरुक्षेत्रे [illegible] जीवा [illegible] [illegible] ॥ ७६१ ॥

अथ कुरुक्षेत्रस्य स्थूलसूक्ष्मक्षेत्रफलानयने करणसूत्रमाह—

जीवाहददसुपादं जीवाइसुजुददलं च पत्तेयं ।
दसकरणिबाणगुणिदे सुहुमिदरफलं च धणुखेत्ते ॥७६२॥

जीवाहतेषुपादं जीवेषुयुतदलं च प्रत्येकं ।
दशकरणिबाणगुणिते सूक्ष्मेतरफलं च धनुःक्षेत्रे ॥ ७६२ ॥

जीवा । कुरुक्षेत्रेषो २२५/१९ चतुर्थांश ५६२५/१९ जीवया ५३००० हत्वा २९८१२५००/१९ पृथक् संस्थाप्य जीवां ५३००० समच्छेदीकृत्य १००७०००/१९ इषौ २२५/१९ संयोज्य १००७२२५/१९ दलयित्वा ५०३६१२/१९ इदमपि पृथक्स्थापितयोरनयोर्मध्ये प्रत्येकं स्थापितं २९८१२५/१९ विरलनमगेत्यादिना करणिं कृत्वा ८८८७८५१५६२५/३६१ मूले गृहीते १४२३७५४ २३४/१९ एतत् कुरु धनुःक्षेत्रस्य सूक्ष्मफलं भवति । पुरस्तात् स्थापित [illegible] ५०३६१२/१९ बाणेन २२५/१९ गुणिते कुरोर्धनुषः स्थूलफलं भवति ११३८६/३६१ ॥ ७६२ ॥

अथ प्रकारान्तरेण वृत्तविष्कम्भबाणयोरानयने करणसूत्रमाह,—

दुगुणिसु कदिजुद जीवावग्गे चउबाणभाजिए वट्ट ।
जीवा धणुकदिसेसो छब्भत्तो तप्पद बाण ॥ ७६३ ॥

द्विगुणेषु कृतियुत जीवावर्गे चतुर्बाणभक्ते वृत्त ।
जीवा धनु कृतिशेष षड्भक्त तत्पद बाणम्॥ ७६३ ॥

दुगु । इषु [illegible] द्विगुणीकृत्य [illegible] वर्ग मेलयित्वा [illegible] । अत्र जीवा ४३००० वर्ग १८०९[illegible] समच्छेदीकृत्य [illegible] संयोज्य [illegible] अंशिमचतुर्गुणितबाण [illegible] भागवर्गापवर्तनविधिना भक्ते कुरुक्षेत्रस्य वृत्तविष्कम्भ स्यात् । [illegible] समच्छेदीकृते जीवा वर्गे [illegible] धनुष्कृतौ [illegible] अपनीय [illegible] षड्भिर्भक्त्वा [illegible] मूल गृहीते [illegible] कुरुक्षेत्रस्य बाण स्यात् ॥ ७६३ ॥

अथ प्रकारान्तरेण बाणानयने करणसूत्रमाह,—

जीवाविक्खमाण वग्गविसेसस्स होदि जम्मूल ।
त विक्खमा सोहय सेसद्धमिसु विजाणाहि ॥ ७६४ ॥

जीवाविष्कम्भयो वर्गविशेषस्य भवति यन्मूल ।
तत् वि ष्कम्भात् शोधय शेषार्धमिषु विजानीहि ॥ ७६४ ॥

जीवा । जीवा [illegible] वर्ग [illegible] विष्कम्भ [illegible]
वर्गात् मम [illegible] समच्छेद कृत्वा [illegible]
[illegible] [illegible] मन सनद्ध — [illegible]
तद्विष्कम्भात् [illegible] [illegible]
[illegible]

वाहेन ७ मनिमर्ज २०२ १०० मत भते कुरोक्त्रस्य $\frac{२}{१९}$ ॥ ७६४ ॥

अथ प्रकारांतरेण धनुरिषुभ्यां व्यासानयने करणसूत्रमाह,—

दुगुणिसुहिदधणुवग्गो बाणोणो अद्दिदो हवे वासो ।
वासकदिसहिदधणुकदिदलस्स मूलेवि वाससिसुणम ॥

द्विगुणेषुहितधनुर्वर्गो बाणोन अर्धितो भवेत् व्यास ।
"व्यासकृतिसहितधनुःकृतिदलस्य मूलेपि व्यासमिषुरोन ७६५

हुए । इषुं $\frac{२२५}{१९}$ द्विगुणीकृत्य $\frac{४५०}{१९}$ अनेन धनुर्व $\frac{१२१०७१९}{१९}$ ॥ मागहपवर्तनविधिना भक्त्वा १७८१२८ शेषे $\frac{७१}{२५७}$ अथ उपरि पंच भेदपवर्तिते एवं $\frac{३}{१०७}$ अत्र स्वांश समच्छेदेन मेरुचिन्ह $\frac{१८३५५९९}{१०७}$ अस्मिन् समच्छिन्नबाण $\frac{२ २५}{१०७}$ ऊनयित्वा $\frac{२४३३०१९}{१०७}$ अर्धीकृत्य $\frac{१२१६५४१०}{१०७}$ भक्ते सति $\frac{११३७१३७}{१०७}$ कुरो वृत्तव्यास स्यात् । समच्छेदेन स्वांश $\frac{६}{१०७}$ युक्त त वृत्तव्यास $\frac{१२१६५४५}{१०७}$ वर्ग गृहीत्वा $\frac{१४७९९९९१४९९४०१}{११४४९}$ अत्र धनुर्कृते $\frac{१३१०७९९००००१}{१६१}$ एवं $\frac{१५८८९९९५}{३६१}$ एकाशीत्या ८१ समच्छेद कृत्वा $\frac{५३३४०८५५५}{११४४९}$ संयोज्य $\frac{२ १३७ ००६४४०१}{११४४९}$ मूल गृहीत्वा $\frac{१४६१ ४९}{१०७}$ अत्र व्यास $\frac{१२१६५४९}{१०७}$ हीन कृत्वा $\frac{२ २५}{१०७}$ अस्य हारमेकोनविंशतिर्न वेति द्विधा १९।१९ अत्रस्थनवाकेन ९ भक्ते कुरुक्षेत्रस्य बाण स्यात् $\frac{२२५}{१९}$ ॥ ७६५ ॥

अथ प्रकारांतरेण धनुःकृतिजीवाकृत्योरानयने करणसूत्रमाह;—

इसुदलजुदविक्खंभो चउगुणिदिसुणा हदे दु धणुकरणी ।
बाणकदिं छहिं गुणिद तत्थूणे होदि जीवकदी । ७६६ ।

इषुदलयुतविष्कम्भ चतुर्गुणितेषुणा हते तु धनु करणी ।
बाणकृति षड्भि गुणित तत्रोने भवति जीवकृति ॥ ७६६ ॥

इसु । इषु $\frac{२५००}{१९}$ दलयित्वा $\frac{१२५०}{१९}$ समानछेदेन $\frac{११२५०}{१७१}$ वृत्तविष्कम्भे $\frac{१३१६५४९०}{१७१}$ योजयित्वा $\frac{१३१७७७४०}{१७१}$ एतच्चतुर्गुणितपुणा $\frac{२५००}{१९}$ गुणन गुण्यराशे $\frac{१३१७७७४०}{१७१}$ हार एकोनविंशतिनवेति १९।९ द्विधाहस्य गुणकारस्यपंचशून्यानि १००००० गुण्यराशेरग्रे सस्थाप्य १३१७७९१०००० गुणकारनवांकेन गुण्यहारनवांकमपवर्त्य शेषहारे १९।१९ परस्परगुणिते ३६१ कुरोघनुकृति स्यात् । $\frac{१३१७९९ \quad ००}{३६१}$ बाणकृतिं $\frac{५६२५}{३६१}$ षड्भिर्गुणयित्वा $\frac{३३७५}{३६१}$ एतस्मिन् धनुःकृतौ ऊनिते $\frac{११४}{३६१}$ कुरुक्षेत्रस्य जीवाकृतिर्भवति । एवं इसुहीण विक्खम इत्यादिसमगाथोक्तविधानं भरतादिक्षेत्रेषु हिमवदादिपर्वतेषु च कर्तव्यं ॥ ७६६ ॥

अथ दक्षिणभरतविजयार्धोत्तरभरतक्षेत्राणां बाणानयने करणसूत्रमाह,—

रूप्पगिरिहीणभरहव्वासदलं दक्खिणद्धभरहइसू ।
णगजुद णगसरमुत्तरभरहजुदं भरहखिदिबाणो ॥७६७॥

रूप्यगिरिहीनभरतव्यासदलं दक्षिणार्धभरतेषुः ।
नगयुतो नगशरः उत्तरभरतयुतो भरतक्षेत्रबाणः ॥ ७६७ ॥

रुप्प । रूप्यगिरिव्यास ५० भरतव्यासे ५२६ $\frac{६}{१९}$ हीनयित्वा ४७६ $\frac{६}{१९}$ अर्धीकृते २३८ $\frac{३}{१९}$ दक्षिणार्धभरतेषु स्यात् । अत्र विजयार्धव्यासे ५० युते सति विजयार्धबाणः स्यात् २८८ $\frac{३}{१९}$ अत्रोत्तरभरतव्यासं २३८ $\frac{३}{१९}$ युते ५२६ $\frac{६}{१९}$ सम्पूर्णभरतक्षेत्रबाणः स्यात् । उक्तानां बाणत्रयाणां समानछेदेन स्वकीयस्वकीयांशं मेलयेत् ... ॥ ७६७ ॥

अथ हिमवदादिपर्वतानां हैमवतादिक्षेत्राणां च बाणानयने करणसूत्रमाह —

हिमणगपहुदिव्वासा दुगुणा भरहूणिदा य णिसहोत्ति ।
ससबाणा णिसहमगा मणिदहदलमा विरहस्स ॥ ७६८ ॥

हिमनगप्रभृतिव्यासं द्विगुणं भरतोनितश्च निषधान्तम् ।
स्वस्वबाणा निषधशरं सविदेहदलं विदेहस्य ॥ ७६८ ॥

हिम । एतावतां शलाकानां १९० एतावति १००००० क्षेत्रे हिमवदादिशलाकानां २।४।८।१६।३२ किमिति सम्पात्यापवर्तिते हिमवत्प्रभृतीनां व्यासः स्यात् । हिमवतो व्यासः २००००/१९ हैमवतक्षेत्रे ४००००/१९ महाहिमवद्गिरौ ८००००/१९ हरिक्षेत्रे १६००००/१९ निषधगिरौ ३२००००/१९ तद्द्विगुणं कृत्वा ४००००/१९ । ८००००/१९ । १६००००/१९ । ३२००००/१९ । ६४००००/१९ सर्वत्र भरतबाणप्रमाणे १००००/१९ अपनीते सति हिमवदादीनां निषधपर्यन्तं स्वस्वबाणाः स्युः ३००००/१९ । ७००००/१९ । १५००००/१९ । ३१००००/१९ । ६३००००/१९ निषधबाण एव ६३००००/१९ विदेहव्यासः ६४००००/१९ धनं ३२००००/१९ युक्तश्चेत् ९५००००/१९ विदेहार्धस्य बाणो भवति । एतान् बाणान् धृत्वा तत्तत्क्षेत्रपर्वतानां जीवाकृतिं धनुःकृतिं इषुहीनविष्कम्भमित्यादिना आनेतव्या । तत्र दक्षिणभरते तावत् समच्छेदेषु ४५२५/१९ वृत्तविष्कम्भे समच्छेदे १९०००००/१९ हीनयित्वा १८९५४७५/१९ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा १८१००/१९ हते सति ३४३०८०९७५००/३६१ जीवाकृतिः स्यात् । तस्या मूलं गृहीत्वा १८५२२४/१९ स्वहारेण भक्ते ९७४८ १२/१९ दक्षिणभरतस्य शुद्धजीवा स्यात् । बाणं ४५२५/१९ कृतिं २०४७५६२५/३६१ षड्भिर्गुणयित्वा १२२८५३७५०/३६१ एतस्मिंस्तत्र जीवाकृतौ योजिते ३४४३०९५१२५०/३६१ दक्षिणभरतस्य धनुःकृतिः स्यात् । एतन्मूलं गृहीत्वा १८५५५५/१९ स्वहारेण भक्ते दक्षिणभरतस्य धनुः स्यात् ९७६६ । १/१९ विजयार्धे तावत् समच्छेदेषु ५४७५/१९ समच्छेदविष्कम्भे १९०००००/१९ हीनयित्वा १८९४५२५/१९ एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा २१९००/१९ हते सति ४१४९००९७५००/३६१ विजयार्धजीवाकृतिः स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा २०३६९१/१९ स्वहारेण भक्ते १०७२० ११/१९ विजयार्धनगस्य जीवा स्यात् । बाणं ५४७५/१९ कृतिं २९९७५६२५/३६१ षड्भिर्गुणयित्वा १७९८५३७५०/३६१ तत्र जीवा

कृतौ योजिते [illegible] धनुकृति स्यात् तन्मूलं गहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते [illegible] विजयार्धनगस्य धनु स्यात् । उत्तरभरते समच्छेदेषु [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते सति [illegible] जीवाकृति स्यात् । अस्या मूल [illegible] स्वहारेण भक्ते लब्ध १४४७१[illegible] उत्तरभरतजीवा स्यात् । बाण [illegible] कृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] एतस्मिं जीवाकृतौ योजिते सति [illegible] धनुकृति स्यात् । अस्या मूल [illegible] स्वहारेण भक्ते १४५०८[illegible] उत्तरभरतस्य धनु स्यात् । हिमवत्पर्वते इषु [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] एतस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते सति [illegible] जीवाकृति । अस्या मूल गहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते लब्धं २४९३२ । [illegible] हिमवतो जीवा स्यात् । बाणकृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] तत्र जीवाकृतौ युक्त [illegible] धनुकृति स्यात् । तस्या मूलं गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते २५२३०[illegible] हिमवद्गिरेर्धनु स्यात् । हैमवतक्षेत्रे इषुं [illegible] विष्कम्भे [illegible] अपनीय [illegible] तस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते [illegible] जीवाकृति स्यात् । अस्या मूलं गहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ६७६७४[illegible] हैमवतक्षेत्रस्य जीवा स्यात् । बाणकृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] एतस्मिन्नत्र जीवाकृतौ युत [illegible] धनुकृति स्यात् । अस्या मूलं गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ३८७४०[illegible] हिमवतक्षेत्रस्य धनु स्यात् । महाहिमवद्गिरेरिषुं [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] तस्मिंश्चतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते तु [illegible] जीवाकृति स्यात् । अस्या मूलं गहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते [illegible] महाहिमवतो जीवा स्यात् । बाणकृतिं [illegible]

षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] एतावति जीवाकृतौ वर्जिते [illegible] धनुःकृती स्यात्। अस्या मूले गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ७३७०३ हिमवद्गिरेर्धनुः स्यात्। हरिवर्षस्य इषु [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] अवशिष्टचतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते तु [illegible] जीवाकृतिः स्यात्। अस्या मूले गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ७३९०१ हरिवर्षजीवा स्यात्। बाणकृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] तस्मिन् तत्र जीवाकृतौ वर्जिते [illegible] धनु कृति स्यात्। अस्या मूले गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ८४०१६ हरिवर्षक्षेत्रस्य धनु स्यात्॥ निषधगिरी इषु [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] अवशिष्टचतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते तु [illegible] जीवाकृति स्यात्। अस्या मूले गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ९४१५६ निषधगिरी जीवा स्यात्। बाणकृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] तत्र जीवाकृतौ वर्जिते [illegible] धनु कृति स्यात्। अस्या मूले गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते च १२४३४६ निषधगिरौ धनु स्यात्॥ विदेहार्धं इषु [illegible] विष्कम्भे [illegible] हीनयित्वा [illegible] अवशिष्टचतुर्गुणितेषुणा [illegible] हते तु [illegible] जीवाकृति स्यात्। अस्या मूल गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते १०० विदेहार्धजीवा स्यात्। बाणकृतिं [illegible] षड्भिर्गुणयित्वा [illegible] तत्र जीवाकृतौ वर्जिते [illegible] धनु कृति स्यात्। अस्या मूल गृहीत्वा [illegible] स्वहारेण भक्ते ल १५८११४ विदेहार्धधनु स्यात्॥ ७६८॥

अथ दक्षिणभरतादिक्षेत्रपर्वतानां जीवाधनुषो प्रमाणानीतांक गाथानवकेनाह —

दक्खिणभरहे जीवा अडचउसगणवय होति बारकला।
चाप छछक्कसगसयणवयसहस्स च एक्ककला॥ ७६९॥

दक्षिणभरते जीवा अष्टचतुःसप्तनव भवति द्वादशाग्रः ।
चाप षट्षट्सप्तदशनवसहस्रं च एककला ॥ ७६९ ॥

दक्खिण । दक्षिणभरते जीवा अष्टचत्वारि सप्तनवयोजनानि द्वादशकलाश्च ९७४८¹²/₁₉ भवति । तच्चाप च षट्षट्पुनरसप्तदशसहितनवसहस्राणि एककला च ९७६६¹/₁₉ स्यात् ॥ ७६९ ॥

वेयड्ढे जीवा णभदुगसगदहसहस्सेगारकला ।
तेदालसगणभेक्क पण्णरसकला य तच्चावं ॥ ७७० ॥

विजयार्धाने जीवा नभोद्विकसप्तदशसहस्रैकादशकला ।
त्रिचत्वारिंशत् सप्त नभ एक पञ्चदशकलाश्च तच्चाप ॥ ७७० ॥

वेय । विजयार्धान्ते जीवा नभोद्विकसप्तसहितदशसहस्राणि एकादशकला च स्यात् १०७२०¹¹/₁₉ तच्चाप त्रिचत्वारिंशत् सप्तनभ एक पञ्चदशकलाश्च स्यात् १०७४३¹⁵/₁₉ ॥ ७७० ॥

भरहस्सते जीवा इगिसगचउचोद्दस य पंचकला ।
चाव अडदुगपणचउरेक्क एकारसकला य ॥ ७७१ ॥

भरतस्यांते जीवा एक सप्त चतुश्चतुर्दश [illegible] पञ्चकला ।
चाप अष्टद्विकपञ्चचतुरेक एकादशकला च ॥ ७७१ ॥

भरह । भरतस्यांते जीवा एक सप्त चतुश्चतुर्दश पञ्चकलाश्च १४४७१⁵/₁₉ स्यात् । तच्चाप अष्टद्विकपञ्चचतुरेक एकादशकलाश्च स्यात् । १४५२८¹¹/₁₉ ॥ ७७१ ॥

हिमवण्णगत जीवा दुगतिगणवचउदुग कला चूणा ।
चाव णभतियदुगपणवीससहस्स च चारिकला ॥७७२॥

हिमवन्नगान्त जीवा द्विकत्रिकनवचतुर्द्वि कला चाना ।
चाप नभस्त्रिद्विपञ्चविंशतिसहस्र च चतुःकला ॥ ७७२ ॥

हिम । हिमवज्जीवा चतुर्विंशतिसहस्राणि किञ्चिदूनैकत्रिंशच्छतयोजनानि स्यात् २४९३२,१/१९ तच्चापं पञ्चविंशतिसहस्राणि द्विशतत्रिंशच्चतुःकलाश्च स्यात् २५२३०,४/१९ ॥ ७७२ ॥

हेमवदतिमजीवा सत्तमगछस्सगति ऊणमोलकला ।
धणुह णमसत्तमगअडतिण्णि विसेसहियदसयकला ॥७७३॥

हैमवतान्तिमजीवा सप्तगणसप्तत्रय ऊनषोडशकला ।
धनुः नभसप्तसप्ताष्टत्रीणि विशेषाधिकदशकला ॥ ७७३ ॥

हैम । हैमवतान्तिमजीवा सप्तत्रिंशत्सहस्रषट्शतचतुःसप्ततिः किञ्चिन्यूनषोडशकलाश्च स्यात् । ३७६७४,१६/१९ तद्धनुः नभःसप्तसप्ताष्टत्रीणि साधिकदशकलाश्च स्यात् ३८७४०,१०/१९ ॥ ७७३ ॥

महहिमयचरिमजीवा इगतिणवतिदुपपण छक्ककला ।
तच्चाव तियणयदुगसगपण्णसहस्स दसयकला ॥७७४॥

महाहिमवच्चरमजीवा एकत्रिनवत्रिद्विपञ्च षट्कला ।
तच्चापं त्रिनवद्विसप्तपञ्चाशत्सहस्र दशकला ॥ ७७४ ॥

मह । महाहिमवच्चरमजीवा एकत्रिनवतित्रिपञ्चयोजना षट्कलाश्च स्यात् ५३९३१,६/१९ तच्चापं त्रिनवद्विसप्तपञ्चाशत्सहस्रयोजनानि दशकलाश्च स्यात् ५७२९३,१०/१९ ॥ ७७४ ॥

हरिजीवा इगिणमणवतियसत्तयमिह कलावि सत्तरसा ।
चाव सोलसणमचउसीदिसहस्स च चारिकला ७७५

हरिजीवा एकनभोनवत्रिसप्तक इह कला अपि सप्तदश ।
चापं षोडशनभश्चतुरशीतिसहस्र च चतस्रः कला ॥ ७७५ ॥

हरि । हरिवर्ष जीवा एकनभोनवत्रिसप्तयोजनानि इह सप्तदशकलाश्च

स्यात् ७३९० ११/१९ तच्चापं षोडशनवचतुरशीतिसहस्रयोजनानि चतस्र कलाश्च स्यात् ॥ ८४०१६ ४/१९ ॥ ७७५ ॥

णिसहावसाणजीवा छप्पणइगिचारिणवयदोण्णिकला
धणुपुट्ठं छादालतिचउवीसेक्कं च णवयकला ॥ ७७६ ॥

निषधावसानजीवा षट्पंचैकचतुर्नवकं द्वे कले ।
धनुःपृष्ठं षट्चत्वारिंशत् त्रिचतुर्विंशत्येकं च नव कलाः ॥ ७७६ ॥

णिसहा । निषधावसानजीवा षट्पंचैकचतुर्नवयोजनानि द्विकलाश्च स्यात् ९४१५६ २/१९ धनुःपृष्ठं च षट्चत्वारिंशत् त्रिचतुर्विंशत्येकयोजनानि नवकलाश्च स्यात् १२४३४६ ९/१९ ॥ ७७६ ॥

जीवदु विदेहमज्झे लक्खा परिहिदलमेयमवरद्धे ।
माहवचंदुद्धरिया गुणधम्मपसिद्ध सव्वकला ॥ ७७७ ॥

जीवाद्वयं विदेहमध्ये लक्षं परिधिदलं एवमपरार्धे ।
माधवचन्द्रोद्धृता गुणधर्मप्रसिद्धा सर्वकलाः ॥ ७७७ ॥

जीव । विदेहमध्ये जीवा धनुरित्येतद्द्वयं यथासंख्यं लक्षयोजनानि १ ल जंबूद्वीपपरिधेः ३१६२२७ को ३ द १२८ अं १३ भा २ र्धप्रमाणं च स्यात् १५८११४ एवमपरावतारापरार्धेऽपि गुणो ज्या धर्मो धनुः तयोः प्रसिद्धा पूर्वोक्ता सर्वाः कला योजनांशाः अंकसंज्ञया माधवचंद्राख्येन १९ उद्धृताभक्ता यथे गुणेषु धर्मे च प्रसिद्धाः सर्वाः कला माधवचंद्रत्रैविद्येन भोद्धृता प्रकाशिता ॥ ७७७ ॥

अथ जीवानां धनुषां च चूलिकां पार्श्वभुजं चाह,—

पुव्ववरजीवसेसे दलिदे इह चूलियात्ति णाम हवे ।
धणुदुगसेसे दलिदे पासभुजा दक्खिणुत्तरदो ॥ ७७८ ॥

पूर्वापरजीवाशेषे दलिते इह चूलिका इति नाम भवेत् ।
धनुर्द्विकशेषे दलिते पार्श्वभुज दक्षिणोत्तरत ॥ ७७८ ॥

पुव्व । दक्षिणे भरतादौ उत्तरस्मिन्नैरावतादौ च पूर्वापरजीवयोरविशेषे हीन शेषयित्वा दलिते शेषस्य चूलिकेति नाम भवेत् । पूर्वापरधनुषोर्द्वय प्राग्वच्छेषयित्वा अर्धिते पार्श्वभुज स्यात् । एतदेव विवरयति—दक्षिणभरतजीवा ९७४८ [illegible] विजयार्धजीवयो १०७२० [illegible] रविके हीन शेषयित्वा ९७२ तदंशे [illegible] इतरांशस्य [illegible] शोधनाभावात् अंशिनि ९७२ एक गृहीत्वा ९७१ समच्छेद कृत्वा [illegible] अत्रेतरांश [illegible] मपनीय ७ स्वांशे [illegible] मेलयेत् [illegible] राशे ९७१ विषमत्वादेकमपनीय ९७० अर्धयित्वा ४८५ अंश [illegible] चार्धयित्वा [illegible] अपनीतैकमर्धितराश्यर्धत्वा-दलयित्वा [illegible] इदमर्धितांश च [illegible] परस्परहारगुणनेन समच्छेद कृत्वा [illegible] [illegible] मेलयेत् [illegible] एतावता विजयार्धचूलिका स्यात्, दक्षिणभरतचाप ९७६६ [illegible] विजयार्धचापयो १०७४३ [illegible] रन्योन्य शोधयित्वा ९७७ [illegible] प्राग्वदर्धीकृत्य ४८८ [illegible] अंशयो [illegible] प्राग्वमेलने [illegible] विजयार्धस्य पार्श्वभुज स्यात् । एवमितरत्र चूलिका पार्श्वभुज चानेतव्या ॥ ७७८ ॥

अथ भरतैरावतक्षेत्रेषु कालवर्तनक्रम प्रतिपादयति,—

भरहेरावदेसु य ओसप्पुस्सप्पिणित्ति कालदुगा ।
उस्सेधाउबलाण हाणीवड्डी य होंतित्ति ॥ ७७९ ॥

भरतेषु ऐरावतेषु च अवसर्पिण्युत्सर्पिणीति कालद्वय ।
उत्सेधायुर्बलाना हानिवृद्धी च भवत इति ॥ ७७९ ॥

भरहे । पञ्चभरतेषु पञ्चैरावतेषु चावसर्पिण्युत्सर्पिणीति कालद्वयं वर्तते । तत्रस्थजीवानामुत्सेधायुर्बलानां यथासंख्यं हानिवृद्धी भवत इति ज्ञातव्य ॥ ७७९ ॥

अथ कालद्वयभेदानां संज्ञा कथयति,—

सुसमसुसमं च सुसमं सुसमादी अतदुस्समं कमसो।
दुस्सममतिदुस्सममिदि पढमो बिदियो दु विवरीया॥७८०॥

सुषमसुषमं च सुषमं सुषमादि अनदुःषमं क्रमशः।
दुःषमं अतिदुःषमं इति प्रथमं द्वितीयस्तु विपरीतः॥ ७८०॥

सुसम। सुषमसुषमं सुषमं सुषमदुःषमं दुःषमसुषमं दुःषमं अतिदुःषमं ६ इति क्रमेण प्रथमोऽवसर्पिणीकाल षड्भेदः, द्वितीय उत्सर्पिणीकाल एतद्वैपरीत्येन षड्भेदः॥ ७८०॥

अथ प्रथमादिकालानां स्थितिप्रमाणमाह —

चदुतिदुगकोडकोडी बादालसहस्सवासहीणेक्कं।
उदधीण हीणदलं तत्तियमेत्तट्ठिदी ताण॥ ७८१॥

चतुस्त्रिद्विककोटीकोटि द्वाचत्वारिंशत्सहस्रवर्षहीनैकम्।
उदधीनां हीनदलं तावन्मात्रा स्थितिः तेषां॥ ७८१॥

चदु। तेषां षट्कालानां क्रमेण स्थितिः चतुःकोटीकोटिसागरोपमा त्रिकोटीकोटिसागरोपमा द्विकोटीकोटिसागरोपमा द्वाचत्वारिंशत्सहस्रवर्षहीनैककोटीकोटिसागरोपमा। हीनस्य ४२००० दलं उभयत्र प्रत्येकं २१००० तावन्मात्रा च ज्ञातव्या॥ ७८१॥

अथ षट्कालजीवानामायुःप्रमाणं निरूपयति;—

तत्थादि अंत आऊ तिदुगेक्कं पल्लपुव्वकोडी य।
वीसहियसयं वीसं पण्णरसा होति वाराणं॥ ७८२॥

तत्र आदौ अन्ते आयुः त्रिद्विकैकं पल्यं पूर्वकोटिः।
विंशाधिकशतं विंशः पञ्चदश भवति वराणाम्॥७८२॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ७८७ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ७८७ ॥

[illegible] —

[illegible] ।

[illegible] ॥ ७८८ ॥

[illegible] ।

[illegible] ॥ ७८८ ॥

[illegible] ॥ ७८८ ॥

[illegible] —

जाव दुगठेसु दिवसा मासमसा अंगुत्तरहसरगिरए ।
अधियरधिरगाढ कल्लाणगुणनायणदंसणगदे जांति ॥ ७८९ ॥

यावद्युगलेषु दिवसा मासमासा अनुत्तरेषु गिरे ।
अधिरधिरगाढो कल्याणगुणगौरवदर्शनमहे यान्ति ॥ ७८९ ॥

यावत् । उत्तमयुग्मेषु अनुत्तरेषु उत्तमनारीष्वपि अधिरधिरगाढो कल्याणगुणमहत्त्वे [illegible] दर्शनमात्रे च प्रथमे सम सम दिवस यांति ॥ ७८९ ॥

तद्दपर्नीणमादिममहादिसठाणमन्नणामसुदा ।
सुलहेसुवि णो तित्ती तेसिं पचक्खविसएसु ॥ ७९० ॥

तद्दपर्नीनामादिमसहननसंस्थान आर्यनामयुना ।
सुलभेषु अपि नो तृप्ति तेषां पचाक्षविषयेषु ॥ ७९० ॥

तद्रूप । तद्पतीनामादिमसंहननसंस्थाने स्याताम् वज्रवृषभनाराचसंहनन समचतुरस्रसंस्थाने इत्यर्थः । ते चार्यनामयुताः, तेषां सुरम्भेष्वपि ९दाक्ष विषयेषु न तृप्तिः ॥ ७९० ॥

चरमे खुदजमवसा णरणारि विलीय सरदमेघ वा ।
भवणतिगामी मिच्छा सोहम्मदुजाइणो सम्मा ॥७९१॥

चरमे क्षुतजृम्भवशात् नरनार्यौ विलीय शारमेघ वा ।
भवनत्रिगामिनः मिथ्या सौधर्मद्वियायिनः सम्यक् ॥७९१॥

चरमे । आयुष्यावसाने क्षुतजृम्भयोर्वशाद्यथासंख्यं नरनार्यौ शारत्काल मेघवद्विलीय तत्र मिथ्यादृष्टयो भवनत्रयगामिनः सम्यग्दृष्टय सौधर्मद्विकयायिनः स्युः ॥ ७९१ ॥

अथ कर्मभूमिप्रवेशक्रमं तत्रत्यमनूनां च स्वरूपं गाथात्रयेण प्रतिपादयति;—

पल्लट्ठम तु सिट्ठे तदिए कुलकरणरा पडिस्सुदिओ ।
सम्मदिखेमकरधर सीमकरधर विमलादिवाहणवो ७९२

पल्याष्टमे तु शिष्टे तृतीये कुलकरनरा प्रतिश्रुतिः ।
सम्मतिः क्षेमकरधर सीमकरधर विमलादिवाहन ॥७९२॥

पल्ल । तृतीयकाले पल्याष्टमभागेऽवशिष्टे कुलकरा उत्पद्यंते । ते के । प्रतिश्रुतिः सन्मतिः क्षेमकर क्षेमंधर सीमंकर सीमंधर विमलवाहन ॥ ७९२ ॥

चक्खुम्मजसस्सी अहिचंदो चंदाहओ मरुद्देओ ।
होदि पसेणजिदक्को णामी तण्णंदणो वसहो ॥ ७९३ ॥

चक्षुष्मान् यशस्वी अभिचन्द्रः चंद्राभ मरुदेव ।
भवति प्रसेनजिदाख्य नाभिस्तन्नंदनो वृषभ ॥ ७९३ ॥

पल्ला । पल्यस्यानन्तिमभागे आदिममतं प १ शेषांतं तु दशमक्त चेदर्शति —

$\frac{प १}{८००} \Big| \frac{प १}{८०००} \Big| \frac{प १}{८००००} \Big| \frac{प १}{८ ल} \Big| \frac{प १}{८० ल} \Big| \frac{प १}{८ को} \Big| \frac{प १}{८० को}$

$\frac{प १}{८०० को} \Big| \frac{प १}{८००० को} \Big| \frac{प १}{८०००० को} \Big| \frac{प १}{८ ल को} \Big| \frac{प १}{८० ल को}$

एतेषां समच्छेदेन मेलनं कृत्वा प १११११११११११११, अत्र ० ..

धमितावहण $\frac{प १ १}{७२ ल को}$ नवभि समच्छेदं कृत्वा $\frac{प १११११११११११११}{७२००००००००}$

प्रक्षिप्य प १ । ११ अपवर्त्य प १ प्राक्तनकणे अपनीते $\frac{प १}{७२} \Big| \frac{प १}{७२ ल को}$

पल्यस्य किंचिन्न्यूनद्वादशभागः स्यात् प १ एतदेव करणसूत्रेणानयति।

अतएव $\frac{प १}{९०}$ गुण १७ गुणिय $\frac{प १०}{८०}$ आदि $\frac{प १}{७२ ल को}$ समच्छेदेन प १ | ११ विहीण प १११११११११११११११ रूऊणुत्तरभजिय प १११११११११११११ अत्रैव तावहण $\frac{प १}{७२ ११}$ संयोज्य प १ अपवर्त्य प १ प्राक् प्रक्षिप्तकणे न्यून कृते किंचिन्न्यून पल्यद्वादशभागः स्यात् प १ सर्वेषामायुष्याणां प १ मतराणां च प १ अष्टभि समच्छेदं कृत्वा प १ संयोज्य प १ नवभिरपवर्तिते किंचिन्न्यूनपल्याष्टमांशः स्यात् प १ ॥ ७९७ ॥

अथ मनुभिः क्रियमाणशिक्षां तेषामवर्णं चाह,—

हा हामा हामाधिक्कारा पणपंच पण सियामलया ।
चदरुम्मदुग पसेणा चदाहो धवल सेस कणयणिहा ७९८

हा हामा हामाधिकारा पंच पच पच दयामली ।
चक्खुम्मद्विक प्रसेनचद्राभी चरनी सेसा कनकनिभा ॥ ७९८ ॥

हा हा। प्रथमपंचमनव अपराधिनो हाकारेण दण्डयति, तत पंच मनव हामाकारेण दण्डयति, तदुपरिमपंचमनव हामाधिकारेण दण्डयति। चक्खुष्मान् यशस्वीति द्वौ श्यामली प्रसेनचद्राभी चरमौ, शेषा सर्वे कनकनिभा ॥ ७९८ ॥

अथ तत्काले तैः क्रियमाणकृत्यं गाथाचतुष्टयेनाह,—

इणससितारासावदविमय दडादिसीमचिण्हकदिं ।
तुरगादिवाहण सिसुमुहदसणणिब्भय वेंति ॥ ७९९ ॥

इनशशितारासावदविमय दंडादिसीमाचिह्नकृतिं ।
तुरगादिवाहन शिशुमुखदर्शननिर्भयं ब्रुवंति ॥ ७९९ ॥

इण। प्रथमो मनुः प्रजानामिनशशिदर्शनाज्जातभयं निवारयति, द्वितीयस्तारादर्शनभयं, तृतीयः क्रूरमृगाद्भयं तर्जनेन, चतुर्थस्तद्भयं पुनर्दण्डादिना निवारयति, पंचमोल्पफलदायिनि कल्पवृक्षे कलहे दृष्टा सीमां करोति तथापि कलहे जाते षष्ठः सीमाचिह्नं करोति, सप्तमो गमनं तुरगादिवाहनं करोति अष्टमः शिशुमुखदर्शनाभियं ब्रवीति ॥ ७९९ ॥

आसीवादादिं ससिपहुदिहिं केलिं च कदिचिदिणओत्ति
पुत्तेहिं चिरजीवण सेदुवहित्तादि तरणविहिं ॥८००॥

आशीर्वादादिं शशिप्रभृतिभिः केलिं च कतिचिद्दिनात्यं ।
पुत्रैः चिरं जीवनं सेतुवहित्रादिभिः तरणविधिं ॥ ८०० ॥

आसी। नवमः शिशूनामाशीर्वादादिकं शिक्षयति, दशमः कतिचिद्दिनपर्यंतं शशिप्रभृतिभिः केलिं च शिक्षयति, एकादशः पुत्रैश्चिरंजीवनमयं निवारयति द्वादशः सेतुवहित्रादिभिस्तरणविधिं शिक्षयति ॥ ८०० ॥

सिक्खदि जराउजिदि णाभिविणासिदथायतडिदादिं ।
चरिमो फलअकुदोमहिमुत्ति कम्मावणी तत्तो ॥८०१॥

शिक्षयति जरायुजान् नाभिविनाश इद्धनापतडिन्नादि ।
चरम फलाकृतौषधिमुक्तिं कर्मावनिस्तत ॥ ८०१ ॥

सिक्खद । त्रयोदशो जरायुजादि शिक्षयति, चरमो नाभिजादि शिक्षयति इद्धनापतडिन्नादिदर्शनभय निवारयति फलाकृतौषधिमुक्तिं च शिक्षयति, तत पर कर्मभूमिवर्तते ॥ ८०१ ॥

पुरगामपट्टणादी लोहियसत्थं च लोयववहारो ।
धम्मो वि दयामूलो विणिम्मियो आदिबम्हेण ॥८०२॥

पुरग्रामपट्टनादि लौकिकशास्त्र च लोकव्यवहार ।
धर्मोपि दयामूल विनिर्मित आदिब्रह्मणा ॥ ८०२ ॥

पुर । पुरग्रामपत्तनादिर्लौकिकशास्त्र च लोकव्यवहारो दयामूलो धर्मोपि आदिब्रह्मणा विनिर्मित ॥ ८०२ ॥

अथ चतुर्थकालसमुत्पन्नशलाकापुरुषान्निरूपयति,—

चउवीसबारतियण तित्थयरा छत्तिखंडभरहवई ।
तुरिए काले होंति हु तेवट्ठिसलागपुरिसा ते ॥ ८०३ ॥

चतुर्विंशति द्वादश त्रिघन तीर्थकरा षट्त्रिखण्डभरतपतय ।
तुर्ये काले भवति हि त्रिषष्टिशलाकापुरुषास्ते ॥ ८०३ ॥

चउवीस । चतुर्विंशतितीर्थकरा द्वादश षट्खण्डभरतपतय सप्तविंशतित्रिखण्डभरतपतय इत्येते त्रिषष्टि ६३ शलाकापुरुषाश्चतुर्थकाले भवति ॥ ८०३ ॥

अथ तीर्थकरशरीरोत्सेधमाह,—

धणु तणुतुंगो तित्थे पचसय पण्णा दसपणाणकम ।
अट्टसु पचसु अट्टसु पासदुगे णवयसत्तकरा ॥ ८०४ ॥

धनूंषि तनुतुंग तीर्थे पञ्चशत पञ्चाशद्दशपंचोनक्रम ।
अष्टसु पञ्चसु अष्टसु पार्श्वद्विकयो नव सप्तकरा ॥ ८०४ ॥

धणु । प्रथमतीर्थकरे तनुतेज पंचशत ५०० धनूंषि, तत उपर्यष्टसु तीर्थकरेषु पंचाशत्पंचाशन्न्यून ४५०।४००।३५०।३००।२५०।२००।१५०।१०० धनूंषि । तत पचसु तीर्थकरेषु दशदशोनधनूंषि ९०।८०।७०।६०।५० ततोऽष्टसु तीर्थकरेषु पंचपंचोनधनूंषि तनुतुंग स्यात् ४५।४०।३५।३०।२५।२०।१५।१० पार्श्वजिनो वर्द्धमानजिन इति द्वयो तनूत्सेधो नव ९ सप्त ७ हस्तौ भवत ॥ ८०४ ॥

अथ तीर्थकरायुष्य गाथाद्वयेनाह,—

तित्थाऊ चुलसीदीबिहत्तरीसट्ठि पणसु दसहीणं ।
थिगि पुव्वलक्खमेत्तो चुलसीदि बिहत्तरी सट्ठी ॥८०५॥

तीर्थायु चतुरशीतिद्वासप्ततिषष्टि पंचसु दशहीन ।
द्व्येक पूर्वलक्षमात्र चतुरशीति द्वासप्तति षष्टि ॥ ८०५ ॥

तित्था । तीर्थकराणां क्रमेणायु चतुरशीतिलक्षपूर्वाणि ८४ द्वासप्ततिलक्षपूर्वाणि ७२ षष्टिलक्षपूर्वाणि ६० । इत उपरि पंचसु तीर्थकरेषु पूर्वस्माद्दश दश हीनलक्षपूर्वाणि ५० लपू । ४० लपू । ३० लपू । २० लपू १० लपू । ततो द्विलक्षपूर्व २ मेकलक्षपूर्वं च स्यात् । इत उपरि चतुरशीतिलक्षाणि ८४ द्वासप्ततिलक्षाणि ७२ षष्टिलक्षाणि ६० ल ॥ ८०५ ॥

तीसदसएक्कलक्खसा पणणवदीचदुरसीदिपणवण्णा ।
तीस दसिगिसहस्स सय बावत्तरिसमा कमसो ॥८०६॥

त्रिंशद्दशैकलक्षाणि पंचनवतिचतुरशीतिपंचपंचाशत् ।
त्रिंशत् दशैकसहस्रं शतं द्वासप्ततिमिमा क्रमशः ॥ ८०६ ॥

तीस । त्रिंशल्लक्षाणि ३० दशलक्षाणि १० एकलक्षाणि । [redacted] उपरि पंचनवतिसहस्राणि ९५००० चतुरशीतिसहस्राणि ८४००० पंचपंचाशत् सहस्राणि ५५००० त्रिंशत्सहस्राणि ३०००० दशसहस्राणि १०००० एकसहस्राणि १००० शत १०० द्वासप्तति ७२ एतानि क्रमशो वर्षाणि [redacted] ॥ ८०६ ॥

इदानीं तीर्थकराणामंतराणि गाथासप्तकेनाह —

उवहीण पण्णकोडी सतिवासडमासपक्खया पढम ।
अंतरमेत्तो तीसं दस णव कोडी य लक्खगुणा ॥८०७॥

उदधीनां पंचाशत्कोटिः सत्रिवर्षाष्टमासपक्षक प्रथमं ।
अंतरमितः त्रिंशत् दश नव कोटिश्च लक्षगुणा ॥ ८०७ ॥

उव । प्रथममंतरं पंचाशत्कोटिलक्षसागरोपमाणि ५० को ल सा त्रिवर्षा ३ अष्ट मासो ८ एकपक्ष १५ सहितानि, [redacted] उपरि क्रमेण त्रिंशत्कोटिलक्षसागरोपमाणि ३० दशकोटिलक्षसागरोपमाणि १० नवकोटिलक्षसागरोपमाणि ९ को ल सा ॥ ८०७ ॥

दसदसमजिदा पचसु तो कोडी सायराण सदहीणा ।
छव्वीससहस्ससमा छावट्ठीलक्खएणावि ॥ ८०८ ॥

दश दश मक्तानि पंचसु ततः कोटिः सागराणां शतहीना ।
षड्विंशसहस्रसमा षट्षष्टिलक्षकेनापि ॥ ८०८ ॥

दस । तत उपरि पंचस्वंतरेषु प्रमाणानि प्राक्तननवकोटिलक्षसागरोपमाण्येव दश दश मक्तानि ९००० को सा ९००० को सा ९०० को

सा १० को सा १ को सा तत उपरि शत १०० सागरोपमैः षड्विंशतिसहस्रोत्तर षड्विंशतिसहस्रोत्तर षट्पञ्चाशत्वर्षैः हीनान्येककोटि सागरोपमाणि अंतरं ज्ञातव्यं ९९९९९०० ॥ ८०८ ॥

चउवण्णतीसणवचउजलहितिय पल्लतिण्णिपादूण ।
पल्लस्स दल पादो सहस्सकोडीसमाहीणो ॥ ८०९ ॥

चतु पंचाशत् त्रिंशन्नवचतुर्जलधित्रय पल्यत्रयपादोन ।
पल्यस्य दलं पादः सहस्रकोटिसमाहीन ॥ ८०९ ॥

चउ । तत उपरि चतु पंचाशा ५४ स्सागरोपमाणि त्रिंशत्सागरोपमाणि नव ९ सागरोपमाणि चत्वारि ४ सागरोपमाणि पल्यत्रिपादोनानि त्रीणि सागरोपमाणि ॥ ३-३४ पल्यस्याध पदे सहस्रकोटीवर्षहीन पल्यचतुर्थांश ३/४-१००० को अंतर स्यात् ॥ ८०९ ॥

वस्सा कोडिसहस्सा चउवण्णछपचलक्खवस्साणि ।
तेसीदिसहस्समदो सगसयपण्णाससंजुत्तं ॥ ८१० ॥

वर्षाणि कोटिसहस्राणि चतुष्पंचाशत् षट् पंचलक्षवर्षाणि ।
त्र्यशीतिसहस्रमतः सप्तशतपंचाशत्संयुक्त ॥ ८१० ॥

वस्सा । तत उपरि सहस्रकोटिवर्षाणि १००० को चतुष्पंचाशल्लक्ष वर्षाणि ५४ ल षट्लक्षवर्षाणि ६ पंचलक्षवर्षाणि ५ सप्तशतपंचाशत्सहितानि त्र्यशीतिसहस्राण्यत उपरि अंतरं ज्ञातव्य ॥ ८१० ॥

सदलबिसद समातिय पक्खट्ठमासूणमतिम तत्तु ।
मोक्खतर सगाउगहीण तमिण जिणतरय ॥ ८११ ॥

सदलद्विशत समात्रय पक्षाष्टमासोनमंतिम तत्तु ।
मोक्षांतर स्वकायुष्कहीन तदिद जिनातरं ॥ ८११ ॥

[illegible]

[illegible]

महिय तुरिय काम [illegible] ।
वमन्नो पीसो भिन्नो पुण्णं [illegible] ॥ ८१३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ८१३ ॥

[illegible]

पलतुगियादि चय पहनराउत्थण पादुपरकाल ।
ण हि सद्धम्मा मुविधीदु मतिअन मगतरग ॥ ८१४ ॥

पल्यचतुर्थांशे भय पल्यगत चतुर्थांशे पादपरकाले ।
न हि सद्धर्मं सुविधिन शान्त्यते समान्तरे ॥ ८१४ ॥

पल्ल । पल्यचतुर्थांश आदि पू तावानेव भय एकपल्यमंतं तत पर पल्यचतुर्थांशोन यावत्पल्यपादावसानकाले, प [illegible] एतेषु सुविधित पुष्पदंतादारभ्य शांतिनाथावसानेषु सप्तसु अंतरेषु वक्तश्रोतृचारित्रन् नामभावात् सद्धर्मो नास्ति ॥ ८१४ ॥

अथ चक्रिणो नामान्याह,—

चक्की भरहो सगरो मघव सणकुमार संतिकुंथुजिणा ।
अरजिण सुभोममहपउमा हरिसेणजयब्रह्मदत्तक्खा ॥

चक्रिण भरत सगर मघवा सनत्कुमार शांतिकुंथुजिनौ ।
अरजिन सुभौममहापद्मौ हरिषेणजयब्रह्मदत्ताख्या ॥ ८१५ ॥

चक्की । भरत सगरो मघवान् सनत्कुमार शांतिजिन कुंथुजिन अरजिन सुभौमो महापद्मो हरिषेणो जयो ब्रह्मदत्ताश्च । एते द्वादश १२ चक्रिण ॥ ८१५ ॥

एतेषां वर्तनाकाल गाथाद्वयेनाह,—

भरहदु वसहदुकाले मघवदु धम्मदुगअंतरे जादा ।
तिजिणा सुभोमचक्की अरमल्लीणंतरे होदि ॥ ८१६ ॥

भरतद्वय वृषभद्वयकाले मघवद्वौ धर्मद्वयान्तरे जातौ ।
त्रिजिना सुभौमचक्री अरमल्ल्यन्तरे भवति ॥ ८१६ ॥

भरह । भरतसगरौ द्वौ वृषभाजितयो काले जातौ मघवसनत्कुमारौ धर्मशान्तिजिनयोरन्तरे जातौ तत पर शान्तिकुंथ्वरनामानस्त्रयो जिना अत्र स्वयमेव [illegible] जिना । [illegible] अरमल्लिजिनयोरन्तरे भवति ॥ ८[illegible] ॥

मल्लिदुमज्झे णवमा मुणिसुव्वयणमिजिणंतरे दसमा ।
णमिणेमिजिणंतरगो जयक्को चम्हो णमिदुग अरगा ॥८१७॥

मल्लिद्वयमध्ये नवमा मुनिसुव्रतनमिजिनान्तरे दशम ।
नमिनेमिजिनान्तरे जयाख्या ब्रह्मो नमिद्वयान्तरग ॥ ८१७ ॥

मल्लि । मल्लिमुनिसुव्रतयोर्मध्ये नवमा महापद्माख्या जात, मुनिसुव्रतनमिजिनयोरंतरे दशमो हरिषेणो जात, नमिनेमिजिनयोरंतरे जयाख्यो जात नेमिपार्श्वजिनयोरंतरे ब्रह्मदत्ताख्यो जात ॥ ८१७ ॥

अथ चक्रवर्तिनां शरीरस्य यथाक्रमेण तदायुषो वर्णयतस्तावन्माह;—

सव्वे सुवण्णवण्णा तद्देहुदओ धणूणि पंचसयं ।
पण्णासूण सदल बादालिगिदालयं तालं ॥ ८१८ ॥

सर्वे सुवर्णवर्णा तद्देहोदया धनुषां पंचशतं ।
पंचाशदूनं सदल द्वाचत्वारिंशदेकचत्वारिंशत् चत्वारिंशत् ॥८१८॥

सव्वे । सर्वे चक्रिणः सुवर्णवर्णाः तेषां देहोत्सेधः क्रमेण धनुषां पंचशतं ५०० पंचाशदून तदेव ४५० दल $\frac{1}{2}$ सहिता द्वाचत्वारिंशत् ४२½ दलरहितैकचत्वारिंशत् ४१½ चत्वारिंशच्च ४० ॥ ८१८ ॥

पणतीस तीस अडदुगवीस पण्णरसगाउ चुलसीदि ।
बावत्तरिपुव्वाणं पणतिगियासाणमिह लक्खा ॥८१९॥

पंचत्रिंशत् त्रिंशदष्ट द्वि सविंशति पंचदशकमायु चतुरशीति ।
द्वासप्ततिपूर्वाणां पंचत्रिकैकवर्षाणामिह लक्षाणि ॥ ८१९ ॥

पण । पंचत्रिंशत् ३५ त्रिंशत् ३० अष्टाविंशति २८ द्वाविंशति २२ विंशति २० पंचदश १५ सप्त धनुषि भवति । इतः पर तेषामायुर्यथासंख्य चतुरशीतिपूर्वलक्षवर्षाणि ८४ पूल द्वासप्तति पूर्वलक्षवर्षाणि ७२ पंचलक्षवर्षाणि ५ ल त्रिलक्षवर्षाणि ३ इल एकलक्षवर्षाणि १ ल ॥८१९॥

मघच्छरा सहस्सा पणणउदी चउरसीदि सट्ठी य।
तीस दसयं तिदयं सत्तसया चक्कहरस्स ॥ ८२० ॥

सवत्सरा सहस्रा पंचनवति चतुरशीति षष्टिश्च।
त्रिंशत् दशकं त्रितयं सप्तशतानि चक्रधरस्य ॥ ८२० ॥

संव । पंचनवतिसहस्रवर्षाणि ९५००० चतुरशीतिसहस्रवर्षाणि ८४००० षष्टिसहस्रवर्षाणि ६०००० त्रिंशत्सहस्रवर्षाणि ३०००० दशसहस्रवर्षाणि १०००० त्रिसहस्रवर्षाणि चक्रधरस्य सप्तशतवर्षाणि ७००॥८२०॥

अथ तेषां नवनिधिसंज्ञामाह —

कालमहकालमाणवपिंगलणेसप्पपउमपांडु तहो।
संखो णाणारयण णवणिहिओ देंति फलमेदं ॥ ८२१ ॥

कालमहाकालमाणवक पिंगल नैसर्पपद्मपांडुस्तत।
शंख नानारत्न नवनिधयः ददति फलमेतत् ॥ ८२१ ॥

काल । कालमहाकालौ माणवक पिंगलो नैसर्प पद्म पांडुस्तत शंखो नानारत्नाख्य इति नवनिधयः एतद्वक्ष्यमाणं फलं ददति ॥ ८२१ ॥

अथ नवनिधिभिर्दीयमानफलमाह,—

उडुजोग्गकुसुमदामप्पहुदिं भाजणयमाउहाभरणं।
गेह वत्थं धण्णं तूरं बहुरयणमणुकमसो ॥ ८२२ ॥

ऋतुयोग्यकुसुमदामप्रभृति भाजनायुधाभरणं।
गेहं वस्त्रं धान्यं तूर्यं बहुरत्नमनुक्रमशः ॥ ८२२ ॥

उडु । ते निधयोऽनुक्रमेण ऋतुयोग्यकुसुमदामप्रभृतिभाजनमायुधमाभरणं गेहं वस्त्रं धान्यं तूर्यं बहुरत्नं च ददते ॥ ८२२ ॥

[illegible]

गमिणिगिहपदहि पुरहो [illegible] हवंति [illegible] ।
[illegible] ॥ ८२३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ८२३ ॥

[illegible] ॥ ८२३ ॥

अथ [illegible],—

मघवं सणकुमारा सणकुमार सुभोम पम्हा य ।
[illegible] ॥ ८२४ ॥

मघवान् सनत्कुमारः सनत्कुमार सुभौम [illegible] ।
[illegible] ॥ ८२४ ॥

मघव । [illegible] सनत्कुमार [illegible] सुभौमो [illegible] ॥ ८२४ ॥

[illegible] नामान्याह —

तिविट्ठदुविट्ठसयंभू पुरिसुत्तमपुरिससिंहपुरिसादी ।
पुंडरियदत्त णारायण किण्हा अद्धचक्कहरा ॥ ८२५ ॥

त्रिपृष्ठद्विपृष्ठस्वयंभू पुरुषोत्तम पुरुषसिंह पुरुषादि ।
पुंडरीकदत्त नारायण कृष्ण अर्धचक्रधरा ॥ ८२५ ॥

तिविट्ठ । त्रिपृष्ठ द्विपृष्ठ स्वयंभू पुरुषोत्तम पुरुषसिंह पुरुषपुंडरीक पुरुषदत्तो नारायण कृष्णश्चेति नवार्धचक्रधराः स्युः ॥ प्रसंगेन बलवासुदेव

[illegible]प्रमाणमाह—" अस्ति श्रीमो [illegible] [illegible] " ॥ [illegible] ॥ " ८२५ ॥

अथ तेषां वासुदेवानां [illegible] ,—

सेयाइपणसु हरिपण छट्ठपदुगविरह मल्लिदुगमज्झे ।
दत्तो अट्ठम सुव्वयदुगविरहे णमिकालजो किण्हो ८२६

श्रेयांसादिपञ्चसु हरिपञ्च षष्ठ अरद्विकविरहे मल्लिद्विकमध्ये ।
दत्त अष्टम सुव्रतद्विकविरहे नेमिकाले कृष्ण ॥ ८२६ ॥

यथा । श्रेयांसादिषु पञ्चसु जिनेषु त्रिपृष्ठाद्याः पञ्च भवन्ति । षष्ठः पुरुषपुण्डरीकोऽरमल्लिनाथयोरन्तरे भवति, दत्तो मल्लिमुनिसुव्रतयोर्मध्ये भवति, अष्टमो नारायणो मुनिसुव्रतनमिजिनयोर्विरहकाले स्यात्, कृष्णस्तु नेमिनाथकाले उत्पन्नः ॥ ८२६ ॥

अथ बल०,प्रतिवासुदेवानां नामानि गाथाद्वयेनाह,—

बलदेवा विजयायलसुधम्मसुप्पहसुदंसणा णन्दी ।
तो णंदिमित्त रामा पउमा उवरिं तु पडिसत्तू ॥ ८२७ ॥

बलदेवा विजयाचलसुधर्मसुप्रभसुदर्शना नन्दी ।
ततो नन्दिमित्र राम पद्म उपरि तु प्रतिशत्रव ॥ ८२७ ॥

बल० । विजयोऽचल सुधर्म सुप्रभ सुदर्शनो नन्दी ततो नन्दिमित्रो राम पद्म इत्येते नव बलदेवाः स्युः । इत उपरि तेषां प्रतिशत्रवः कथ्यन्ते ॥ ८२७ ॥

अस्सग्गीआ तारय मेरयय णिसुंभ कइढहत महू ।
बलि पहरण रावणया खचरा भूचर जरासंधो ॥ ८२८ ॥

अश्वग्रीव तारक मेरकश्च निशुम्भ कैटभाख्य मधु ।
बलि प्रहरण रावण खचरा भूचरा जरासंध ॥ ८२८ ॥

अस्स । अश्वग्रीवस्तारको मेरकश्च निशुम्भो मधुकैटभो बलि प्रहरणो रावणश्चेति सचरा भूचरो जरासंधः । इत्येते नव प्रतिवासुदेवाः ॥८२८॥

अथ बलदेवादित्रयाणामुत्सेधमाह,—

देहुदओ चापाण सीदी तिसु दसयहीण पणदाल ।
णवदुगवीस सोल दस बलकेसव ससत्तूण ॥ ८२९ ॥

देहोदय चापाना अशीति त्रिषु दशहीन पंचचत्वारिंशत् ।
नवद्विकविंशति षोडश दश बलकेशवाना सशत्रूणा ॥८२९॥

देहु । सशत्रूणां बलकेशवानां शरीरोत्सेधो यथासंख्यं अशीति ८० चापानि, ततस्त्रिषु दशदशहीनानि ७०।६०।५० ततः पंचचत्वारिंशत् ४५ नवविंशति २९ द्वाविंशति २२ षोडश १६ दश १० धनूंषि भवति ॥ ८२९ ॥

अथ वासुदेवप्रतिवासुदेवानामायुष्यमाह,—

सम चुलसीदि बहत्तरि सट्ठी तीस दस लक्ख पणसट्ठी
बत्तीस बारेक सहस्समाउस्समद्धचकीण ॥ ८३० ॥

समा चतुरशीति द्वासप्तति षष्ठि त्रिंशत् दश लक्षाणि पंचषष्ठि ।
द्वात्रिंशत् द्वादशैक सहस्र आयुष्यमर्धचक्रिणाम् ॥ ८३० ॥

सम । अर्धचक्रिणा वासुदेवानामायुष्य चतुरशीतिलक्षवर्षाणि ८४ ल द्वासप्ततिलक्षवर्षाणि ७२ षष्ठिलक्षवर्षाणि ६० त्रिंशल्लक्षवर्षाणि ३० दश लक्षवर्षाणि १० पंचषष्टिसहस्र ६५००० वर्षाणि द्वात्रिंशत्सहस्रवर्षाणि ३२००० द्वादशसहस्रवर्षाणि १२००० एकसहस्रवर्षाणि १००० भवति ॥ ८३० ॥

इतो बलानामायुष्यमाह,—

सगसीदि दुसु दसूण सगतीस सत्तरससमा लक्खा ।
सगसट्ठीतीस सत्तर सहस्स बारसयमाउ बले ॥ ८३१ ॥

[illegible] —

मंमि मज्झमि कड्डा महकड्डो कालओ महाकाले ।
ता पुप्फगा जिणमुहा अहामुहा णायरा हॊ ॥ ८१४

[illegible] ।
[illegible] ॥ ८१४ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ ८१४ ॥

[illegible] पस्सवहा वासुदेवमहाकाले ।
अण्णे जिणवरहिं य हिणाइणमण णस्संति ॥ ८१५ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ८१५ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

स्ततो गगनत्रय, ततश्चक्री तत स्व ततश्चक्री ततो नमोद्विक ततश्चक्री ततः गगन ततश्चक्रधर ततः शून्यद्वयमित्येव स्थापनीय ॥ ८४४ ॥

दुसगयणपचकेसवछस्सुण्णा पउमणाभणमविण्हू ।
गयणति केसव सुण्णदु मुरारि सुण्णत्तिय कमसो ॥

दशगगन पचकेशवा षट्शून्यानि पद्मनाभनभोविष्णु ।
गगनत्रय केशव शून्यद्वय मुरारि शून्यत्रय क्रमश ॥ ८४५ ॥

दुस । तृतीयपक्तौ तु दशशून्यानि तत पुरस्तात् पचकेशवा तत षट्शून्यानि तत केशवस्ततो नभस्ततो विष्णुस्ततो गगनत्रय ततः केशवस्तत शून्यद्वय ततो मुरारिस्तत शून्यत्रय इत्येव क्रमेण स्थापनीय ॥८४५॥

रुद्दुग छस्सुण्णा सत्त हरा गयणजुगलमीसाणो ।
पण्णर णमाणि तत्तो सच्चइतणओ महावीरे ॥ ८४६ ॥

रुद्रद्विक षट्शून्यानि सप्तहरा गगनयुगलमीशान ।
पचदशनमासि तत सत्यकीतनय महावीरे ॥ ८४६ ॥

रुद्द । चतुर्थपक्तौ पुना रुद्रौ द्वौ तत षट् शून्यानि तत सप्तरुद्रास्ततो गगनयुगल तत ईशानस्तत पचदशनभासि तत सत्यकतनय श्रीमहावीरजिनकाले स्यात् । इ येव क्रमेण सस्थापनीय ॥ ८४६ ॥

अथ तीर्थंकरशरीरवर्णादिक तद्दश च गाथात्रयेणाह,—

पउमप्पहवसुपुज्जा रत्ता धवला हु चदपहसुविही ।
णीला सुपासपासा णेमीमुणिसुव्वया किण्हा ॥ ८४७ ॥

पद्मप्रभवासुपूज्यौ रक्तौ धवलौ हि चद्रप्रभसुविधी ।
नीलौ सुपार्श्वपार्श्वौ नेमिमुनिसुव्रतौ कृष्णौ ॥ ८४७ ॥

पउम । पद्मप्रभवासुपूज्यौ रक्तवर्णौ चद्रप्रभपुष्पदतौ धवलवर्णौ सुपार्श्वपार्श्वजिनौ नीलवर्णौ नेमिमुनिसुव्रतौ कृष्णवर्णौ ॥ ८४७ ॥

सेसा सोलस हेमा वसुपुज्जो मल्लिणेमिपासजिणा ।
वीरो कुमारसवणा महवीरो णाहकुलतिलओ ॥ ८४८ ॥

शेषाः षोडश हेमाः वासुपूज्यो मल्लिनेमिपार्श्वजिनाः ।
वीरः कुमारश्रमणा महावीरो नाथकुलतिलकः ॥ ८४८ ॥

सेसा । शेषाः षोडशतीर्थकरा हेमवर्णाः वासुपूज्यो मल्लिर्नेमिः पार्श्वजिनो वीरजिन इति पञ्च कुमारश्रमणाः महावीरो नाथकुलतिलकः ॥ ८४८ ॥

पासो दु उग्गवंसो हरिवंसो सुव्वओ वि णेमीसो ।
धम्मजिणो कुंथु अरा कुरुजा इक्खाउजा सेसा ॥ ८४९ ॥

पार्श्वस्तु उग्रवंशः हरिवंशः सुव्रतोऽपि नेमीशः ।
धर्मजिनः कुन्थुः अरः कुरुजा इक्ष्वाकुजाः शेषाः ॥ ८४९ ॥

पासो । पार्श्वजिनस्तूग्रवंशो मुनिसुव्रतो नेमीश्वरश्च हरिवंशः धर्मकुन्थ्वरजिनाः कुरुवंशजाः शेषाः इक्ष्वाकुवंशजाः ॥ ८४९ ॥

इदानीं शककल्किनोरुत्पत्तिमाह,—

पणछस्सयवस्सं पणमासजुदं गमिय वीरणिव्वुइदो ।
सगराजो तो कक्की चदुणवतियमहियसगमासं ॥ ८५० ॥

पञ्चषट्शतवर्षं पञ्चमासयुतं गत्वा वीरनिर्वृतेः ।
शकराजः ततः कल्की चतुर्नवतित्रिकमधिकसप्तमासम् ॥ ८५० ॥

पण । श्रीवीरनाथनिर्वृतेः सकाशात् पञ्चोत्तरषट्शतवर्षाणि ६ ५ पञ्चमासयुतानि गत्वा पश्चात् विक्रमाङ्कशकराजो जायते । तत उपरि चतुर्णवत्युत्तरत्रिशत वर्षाणि सप्तमासाधिकानि गत्वा पश्चात् कल्की जायते ॥ ८५० ॥

इदानीं कल्किनः कृत्यं गाथाद्वयेनाह,—

सो उम्मग्गाहिमुहो चउम्मुहो सदरिवासपरमाऊ ।
चालीस रज्जओ जिदभूमी पुच्छइ समंतिगणं ॥ ८५१ ॥

स उन्मार्गाभिमुख चतुर्मुख सप्ततिवर्षपरमायुष्य ।
चत्वारिंशत् राज्य जितभूमि पृच्छति स्वमन्त्रिगण ॥ ८५१॥

सो । स कल्की उन्मार्गाभिमुखश्चतुर्मुखसंज्ञस्य सप्ततिवर्षपरमायुष्यश्चत्वारिंशद्वर्ष ४० राज्यो जितभूमि सन् स्वमन्त्रिगण पृच्छति ॥ ८५१ ॥

अम्हाण के अवसा णिग्गथा अत्थि केरिसायारा ।
णिद्धणवत्था भिक्खाभोजी जहसत्थमिदिवयणे ८५२

अस्माक के अवशा निर्ग्रन्था सति कीदृशाकारा ।
निर्धनवस्त्रा भिक्षाभोजिन यथाशास्त्रमिति वचने ॥ ८५२ ॥

अम्हा । अस्माक के अवशा इति ? मन्त्रिण कथयति–निर्ग्रन्था सति इति । पुन पृच्छति ते कीदृशाकारा इति ? निर्धनवस्त्रा यथाशास्त्र भिक्षा भोजिन । इति मन्त्रिण प्रतिवचन श्रुत्वा ॥ ८ २ ॥

तप्पाणिउडे णियडिद पढम पिंड तु सुक्कमिदि गज्झ ।
इदि णियमे सचिवकदे चत्ताहारा गया मुणिणो ॥८५३

त [illegible] प्रथम [illegible] शुल्कमिति ग्राह्य ।
इति नियमे [illegible] मनय ॥ ८५३ ॥

तप्पाणि । [illegible] शुल्कमिति [illegible]
[illegible] ८

त [illegible] ण णिहणभि रत्ताउहणि असुरयइ ।
सो [illegible] दुक्खाणाइकजलणाभि ॥ ८५४ ॥

[illegible] असुरपति ।
[illegible] ॥ ८ ४ ॥

त। तमपराधं सोढुमक्षमोऽसुरपतिश्चमरेन्द्रो वज्रायुधेन तं राजानं निहन्ति [illegible] मृत्वा रत्नप्रभाया दुःखमहोकजलराशिं भुङ्क्ते ॥ ८५४ ॥

तब्भयदो तस्स सुदो अजिदंजयसण्णिदो सुरारिं तं।
सरणं गच्छइ चेलयसण्णाए सह समहिलाए ॥ ८५५ ॥

तद्भयतः तस्य सुतः अजितंजयसंज्ञितः सुरारिं तं।
शरणं गच्छति चेलकासंज्ञया सह स्वमहिलया ॥ ८५५ ॥

तब्भय। तस्मात्सुरपतिभयात्तस्य राज्ञः सुतोऽजितंजयसंज्ञितः चेलका-संज्ञया स्वमहिलया सहितः सुरारिशरणं गच्छति ॥ ८५५ ॥

सम्मद्दंसणरयणं हिययाभरणं च कुणदि सो सिग्घं।
पच्चक्खं दट्ठूणिह सुरकयजिणधम्ममाहप्पं ॥ ८५६ ॥

सम्यग्दर्शनरत्नं हृदयाभरणं च करोति स शीघ्रं।
प्रत्यक्षं दृष्ट्वा इह सुरकृतजिनधर्ममाहात्म्यं ॥ ८५६ ॥

सम्म। स पुनः सुरकृतजिनधर्ममाहात्म्यं प्रत्यक्षं दृष्ट्वा शीघ्रं सम्यग्दर्शनरत्नं हृदयाभरणं [illegible] ॥ ८[illegible] ॥

अ[illegible] —

इदि पडिसहस्सवस्सं वीसं कक्कीणदिक्कमे चरिमो।
जलमथणो भाविस्सदि कक्की सम्मग्गमत्थणओ ॥ ८५७ ॥

[illegible] ॥ ८[illegible] ॥

[illegible]

इह इन्दरायसिस्सो वीरंगज साहु चरिमसव्वसिरी।
अज्जा अग्गिल सावय वरसाविय पंगुसेणा वि ॥ ८५८ ॥

इह इन्द्रराजशिष्यो वीराङ्गजः साधुश्चरमः सर्वश्री ।
आर्या अग्निदत्तः श्रावकः वरश्राविका पङ्गुसेनापि ॥ ८५८ ॥

इह । तस्मिन् काले इन्द्रराजाचार्यशिष्यो वीराङ्गदश्चरमः साधु आर्यका सर्वश्री श्रावकोऽग्निलो वरश्राविका पंगुसेनापि ॥ ८५८ ॥

पचमचरिमे पक्खट्ठमासतिवासोवसेसए तेण ।
मुणिपढमपिंडगहणे सण्णसण करिय दिवसतियं ॥८५९

पञ्चमचरमे पक्षाष्टमासत्रिवर्षे अवशेषे तेन ।
मुनिप्रथमपिंडग्रहणे सन्न्यसन कृत्वा दिवसत्रयं ॥ ८५९ ॥

पचम । ते चत्वारः पञ्चमकालचरमे एकपक्षे अष्टमासे त्रिवर्षे अवशेषे सति तेन राज्ञा मुनिप्रथमपिंडग्रहणे कृते सति दिवसत्रयं संन्यसन कृत्वा ॥ ८५९ ॥

सोहम्मे जायते कत्तियअमवास सादि पुव्वण्हे ।
इगिजलहिठिदी मुणिणो सेसतिए साहिय पल्लं॥८६०॥

सौधर्मे जायते कार्तिकामावस्या स्वातौ पूर्वाह्णे ।
एकजलधिस्थितयो मुनयः शेषत्रय साधिकं पल्यं ॥ ८६० ॥

सोहम्मे । तत्र मुनयः कार्तिकामावस्यां स्वातिनक्षत्रे पूर्वाह्णे एकसागरोपमायुषः सौधर्मे जायते शेषास्त्रयस्तत्रैव साधिकपल्यायुषो जायते ॥८६०॥

तव्वासरस्स आदीमज्झते धम्मरायअग्गीण ।
णासो तत्तो मणुसा णग्गा मच्छादिआहारा ॥ ८६१ ॥

तद्वासरस्य आदिमध्यान्ते धर्मराजाग्नीना ।
नाशः ततो मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

तव्वासर । तद्वासरस्यादौ मध्ये अन्ते च यथाक्रमं धर्मस्य राज्ञोऽग्नेश्च नाशः । तत परं मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

अथ धर्मादीनां विनाशकारणमाह,—

पोग्गलअइरुक्खादो जलणे धम्मे णिरासएण हदे ।
असुरवइणा णरिंदे सयलो लोओ हवे अधो ॥ ८६२ ॥

पुद्गलातिरौक्ष्यात् ज्वलने धर्म निराश्रयेण हते ।
असुरपतिना नरेंद्रे सकलो लोको भवेत् अध ॥ ८६२ ॥

पोग्गल । पुद्गलानामतिरौक्ष्यात् ज्वलने नष्टे निराश्रयेण धर्मे हते असुरपतिना नरेंद्रे च हते सति पश्चात् सकलो लोकोऽधो भवेत् ॥ ८६२ ॥

अथ तत्रस्थजीवानां गत्यंतरगमनागमनस्वरूपमाह,—

एत्थ मुदा णिरयदुगं णिरयतिरक्खादु जणणमेत्थ हवे ।
थोवजलदाइ मेहा भू णिस्सारा णरा तिव्वा ॥ ८६३ ॥

अत्र मृता निरयद्वय नरकातिर्यग्भ्या जननमत्र भवेत् ।
स्तोकजलदायिनो मेघा भू निस्सारा नरास्तीव्रा ॥ ८६३ ॥

एत्थ । अत्र मृता नरकद्वयं गच्छंति नान्यत्र, नरकतिर्यग्गतिभ्यामागता नामेवात्र जननं भवेत् नान्येषां । अत्र मेघाः स्तोकजलदायिनो भू निःसारा नरास्तीव्राः ॥ ८६३ ॥

इदानीमतिदुःषमचरमसमयवर्तनमाह गाथाचतुष्टयेनाह,—

संवत्तयणामणिलो गिरितरुभूपहुदि चुण्णणं करिय ।
भमदि दिसंत जीवा मरंति मुच्छंति छट्ठते ॥ ८६४ ॥

संवर्तकनामानिल गिरितरुभूप्रभृतीनां चूर्णनं कृत्वा ।
भ्रमति दिगन्तं जीवा म्रियन्ते मूर्छंति षष्ठान्ते ॥ ८६४ ॥

संवत्तय । संवर्तकनामानिलः [illegible] गिरितरुभूप्रभृतीनां चूर्णनं कृत्वा दिशांतं भ्रमति । [illegible]

इह इन्द्रराजशिष्यो वीराङ्गदः साधुश्रमः सर्वश्रीः ।
आर्या अग्निल श्रावकः वरश्राविका पङ्गुसेनापि ॥ ८५८ ॥

इह। तस्मिन् काले इन्द्रराजाचार्यशिष्यो वीराङ्गदश्रमणः साधु आर्यका सर्वश्रीः श्रावकोऽग्निलो वरश्राविका पङ्गुसेनापि ॥ ८५८ ॥

पंचमचरिमे पक्खट्ठमासतिवासोवसेसए तेण।
मुणिपढमपिंडगहणे सण्णसणं करिय दिवसतियं॥८५९

पंचमचरमे पक्षाष्टमासत्रिवर्ष अवशेषे तेन ।
मुनिप्रथमपिण्डग्रहणे सन्यसनं कृत्वा त्रिदिवसम् ॥ ८५९ ॥

पंचम। तेन कल्किना पंचमकालचरमे पक्षाष्ट अष्टमास त्रिवर्ष अवशेषे सति तेन राज्ञा मुनिप्रथमपिण्डग्रहणे कृते मुनि त्रिदिवसं सन्यसनं कृत्वा ॥ ८५९ ॥

सोहम्मे जायंते कत्तियअमवास सादि पुव्वण्हे।
इगिजलहिठिदी मुणिणो सेसतिए साहियं पल्लं॥८६०॥

सौधर्मे जायन्ते कार्तिकामावस्या स्वाती पूर्वाह्णे ।
एकजलधिस्थितयो मुनयः शेषत्रये साधिकं पल्यम् ॥ ८६० ॥

सोहम्मे। तत्र मुनयः कार्तिकामावस्यां स्वातिनक्षत्रे पूर्वाह्णे एकसागरोपमायुषः सौधर्मे जायन्ते शेषत्रयमप्यत्र साधिकपल्यायुषो जायते ॥८६०॥

तव्वासरस्स आदीमज्झंते धम्मरायअग्गीणं।
णासो तत्तो मणुसा णग्गा मच्छादिआहारा॥८६१॥

तद्वासरस्य आदिमध्यान्ते धर्मराजाग्नीनां ।
नाशः ततो मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

तव्वासर। तद्वासरस्यादौ मध्ये अन्ते च यथाक्रमं धर्मस्य राज्ञोऽग्नेश्च नाशः। ततः परं मनुष्या नग्ना मत्स्याद्याहाराः ॥ ८६१ ॥

उत्सर्पिण्यां प्रथमे पुष्करक्षीरघृतामृतरसान् मेघाः ।
सप्ताहं वर्षन्ति च नग्न मृदाद्याहाराः ॥ ८६८ ॥

उस्स । उत्सर्पिण्यां प्रथमकाले मेघाः उदकक्षीरघृतामृतरसान् सप्त सप्ताहं वर्षन्ति । तस्मिन्काले जाता नग्ना मृत्तिकाद्याहाराः ॥ ८६८ ॥

उण्हं छंडदि भूमी छविं सणिद्धत्तमोसहिं धरदि ।
वल्लिलदागुम्मतरू वड्ढंदि जलादिवरसेहिं ॥ ८६९ ॥

उष्णं त्यजति भूमिः छविं सस्निग्धत्वमौषधिं धरति ।
वल्लीलतागुल्मतरवो वर्धन्ते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

उण्हं । जलादिवर्षैर्भूमिरुष्णं त्यजति छविं सस्निग्धत्वं धान्याद्यौषधीश्च धरति । वल्ल्यादयो वर्धन्ते तत्र भूमौ याद् मुक्त्वा प्रसरन्ती वल्ली शुभाशुभेन प्रसारिता लता कदाचिदपि स्थूलस्कन्धतामप्राप्नुवन्तो गुल्माः स्थूलस्कन्धयोग्या वृक्षाः एते वर्धन्ते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

णदितीरगुहादिठिया भूसीयलगंधगुणसमाहूया ।
णिग्गमिय तहा जीवा सव्व भूमि भरंति कमं ॥८७०॥

नदीतीरगुहा[illegible] [illegible]गन्धगुणसमा[illegible] ।
निर्ग[illegible] [illegible] मर्व [illegible] क्रमेण ॥

णदि [illegible]

[illegible]

इत्थाम[illegible] [illegible]

उस्सप्पिणीयविदिये सहस्ससमसम्म कुलधरा कणय ।
कणयप्पहकणयद्धयपुंगव तह णलिण पउम महपउमा ॥

खगगिरिगगदुवेदी खुद्दबिलादिं विसति ।
णंति दया सचरसुरा मणुस्सजुगलादिबहुजीवे ॥८

खगगिरिगङ्गाद्वयवेदीं क्षुद्रबिलादि विंशति आसन्ना ।
नयन्ति दया खचरासुरा मनुष्ययुगलादिबहुजीवान् ॥ ८६

खग । विजयार्धगंगासिंधुना वेदीं तत्क्षुद्रबिलादिकं च प्राणिनो विंशति सदया सचरा सुराश्च ... नयति च ॥ ८०५ ॥

छट्ठमचरिमे होंति मरुदादी सत्तसत्त दिवसवही ।
अदिसीदखारविसपरुसग्गीरजधूमवरिसाओ ॥८६६॥

षष्ठचरमे भवति मरुदाद्य सप्तसप्त दिवसावधि ।
अतिशीतक्षारविषपरुषाग्निरजोधूमवर्षा ॥ ८६६ ॥

छट्ठम । षष्ठकालचरमे मरुदाद्य सप्त सप्त दिवसावधि ... ते के ? मरुदतिशीतक्षारविषपरुषाग्निरजोधूमवृष्टय ॥ ८६६ ॥

तेहितो सेसजणा णस्संति विसग्गिवरिसदड्ढमही ।
इगिजोयणमेत्तमधो चुण्णीकिज्जदि हु कालवसा

तेभ्य शेषजना नश्यन्ति विषाग्निवर्षादग्धमही ।
एकयोजनमात्रमधः चूर्णीक्रियते हि कालवशात् ॥ ८६७ ॥

तेहिं । तेभ्यो वर्षेभ्यो नशेषजना नश्यंति विषाग्निवर्षदग्धमही ... नमात्रमधः कालवशात् चूर्णीभवति ॥ ८६७ ॥

इदानीमुत्सर्पिणीप्रवेशक्रमं गाथात्रयेणाह,—

उस्सप्पिणीयपढमे पुक्खरखीरघदमिदरसा मेघा ।
सत्ताहं वरसंति य णग्गा मणुवादि आहारा ॥ ८६८ ॥

उत्सर्पिणीप्रथमे पुष्करक्षीरघृतामृतरसान् मेघाः ।
सप्ताहं वर्षन्ति च नग्ना मनाग्याहाराः ॥ ८६८ ॥

उस्स । उत्सर्पिणीप्रथमकाले मेघा उदकक्षीरघृतामृतरसान् सप्त सप्ताहं वर्षन्ति । तत्कालस्था जीवा नग्ना मृत्तिकायाहाराः ॥ ८६८ ॥

उण्हं छडदि भूमी छविं सणिद्धत्तमोसहिं धरदि ।
वल्लिलदागुम्मतरू वड्ढंदि जलादिवरसेहिं ॥ ८६९ ॥

उष्णं त्यजति भूमिः छविं सस्निग्धत्वमौषधिं धरति ।
वल्लिलतागुल्मतरवो वर्धन्ते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

उण्ह । जलादिवर्षैर्भूमिरुष्णं त्यजति छविं सस्निग्धत्वं चा वापौषधिं च धरति । वल्ल्यादयो वर्धन्ते तत्र भूमौ पादं मुक्त्वा प्रसरन्ती वल्ली वृक्षाश्रयेण प्रसरन्ती लता कुब्जाकृतिः स्थूलस्कंधतामप्राप्नुवन्तो गुल्माः स्थूलस्कंधयोग्या वृक्षा एते वर्धन्ते जलादिवर्षैः ॥ ८६९ ॥

णदितीरगुहादिठिया भूसीयलगंधगुणसमाहूया ।
णिग्गमिय तदो जीवा सव्वं भूमिं भरंति कमे ॥८७०॥

नदीतीरगुहादिस्थिताः भूशीतलगन्धगुणसमाहूताः ।
निर्गत्य ततो जीवाः सर्वां भूमिं भरन्ति क्रमेण ॥ ८७० ॥

णदि । नदीतीरगुहादिस्थिता जीवाः भूशीतलगन्धगुणसमाहूताः सन्तः सर्वां ततो निर्गत्य क्रमेण भूमिं भरन्ति ॥ ८७० ॥

इदानीमुत्सर्पिण्या द्वितीयकालादिवर्तनक्रममाह —

उस्सप्पिणीयबिदिए सहस्ससेसेसु कुलयरा कणयं ।
कणयप्पहरायद्धयपुंगव तह णलिण पउम महपउमा ॥

उत्सापर्णीद्वितीये सहस्रशेषेषु कुलकरा कनक ।
कनकप्रमराजध्वजपुंगवा तथा नलिना पद्मा महापद्म ॥ ८

उस्स । उत्सर्पिणीद्वितीयकाले सहस्रत्रय अवशिष्टे सति भवति । त तु कनक कनकप्रम कनकराज कनकध्वज स्तथा नलिनो नलिनप्रमो नलिनराजो नलिनध्वजो नलिनपुगव पद्मप्रम पद्मरा पद्मध्वज पद्मपुंगवो महापद्म इति षोडश स्युः ॥ ८७१ ॥

अथ तेषां कृत्य तृतीयकालस्यत्रिषष्टिशलाकापुरुषाश्च

तस्सोलसमणुहि कुलायाराणलपक्कपहुदिया होंति ।
तेवट्ठिणरा तादिए सेणियचर पढमतित्थयरो ॥

तत्षोडशमनुभि कुलाचारानलपक्वप्रभृतयो भवति ।
त्रिषष्टिनराम्तृतीये श्रेणिकचर प्रथमतीर्थकर ॥ ८७२ ॥

तस्सोल० । ते षोडशमनुभि कुलाचारानलपक्वप्रभृतयो तृतीय काले पनत्रिषष्टिशलाका पुरुषा भवति । तत्र श्रेणिकचर यकर स्यात ॥ ८ ॥

महपउमो सुरदेवो सुपासणामो सयपहो तुरियो ।
मनुप्पभदे देवादीपुत्तो होहि कुलपुत्तो ॥ ८७३ ॥

महापद्म सुरदेव सुपार्श्वनामा स्वयप्रभ तथ ।
सर्वात्मभूतो देवपुत्र भवति कुलपुत्र ॥ ८७३ ॥

महपउमो सुरदेव सुपासणामो स्वयप्रभस्तुर्य सर्वा त्मभूत देवपुत्रो

तित्थयरदेव पाडिल जयकित्ती मुणिसुव्वदादिमुववदओ ।
अरणिप्पावकसाया विउलो किण्हचरणिम्मलओ ॥ ८७

चक्रि । आदौ चक्रिण कथ्यते—भरतो दीर्घदंतो मुक्तदंत गूढदंतश्च श्रीषेण श्रीभूति श्रीकांति पद्मो महापद्म ९ ॥ ८७७ ॥

तो चित्तविमलवाहण अरिट्ठसेणो बलो तदो चंदो ।
महचंद चंदहर हरिचंदा सीहादिचंद वरचंदा ॥ ८७८ ॥

तत चित्रविमलवाहनौ अरिष्टसेन बलः ततः चंद्रः ।
महाचंद्र चंद्रधर हरिचंद्र सिंहादिचंद्रो वरचंद्र ॥ ८७८ ॥

तो । ततश्चित्रवाहनो विमलवाहनो अरिष्टसेन इति द्वादश चक्रिण । ततो बलदेवा कथ्यते—चंद्रो महाचंद्रश्चंद्रधरो हरिचंद्र सिंहचंद्रो वर चंद्र ॥ ८७८ ॥

तो पुण्णचंदसुहचंदा सिरिचंदो य केसवा णंदी ।
त पुव्वमित्तसेणा णंदी मूदी यचलणामा ॥ ८७९ ॥

तत पूर्णचंद्र शुभचंद्र श्रीचंद्र च केशवा नंदी ।
तत्पूर्वमित्रसेनौ नंदिभूतिश्चाचलनामा ॥ ८७९ ॥

तो पुण्ण । तत पूर्णचंद्र [illegible] शुभचंद्र श्रीचंद्रश्चेति नवबलदेवा । इत [illegible] कथ्यते—नंदी नंदिमित्रो नंदिषेणो नंदिभूतिश्चाचलनामा ॥८७९॥

मह अइबला तिविट्ठा दुविट्ठ पंडिमसुणो य सिरिकंठो ।
हरिणील अस्सग्गीमहिकंठा अस्सहयमाग्गीवा ॥ ८८० ॥

[illegible] प्रतिशत्रव च श्रीकंठ ।
[illegible] अश्वग्रीवाश्च ॥ ८८० ॥

मह । [illegible] नव वासुदेवा । इतस्त [illegible] शिखिक [illegible] नव प्रतिवासुदेवा ॥ ८८० ॥

तत्र पंचमषष्ठकालौ न प्रवर्तते । उत्सर्पिण्यां तु तृतीयकालस्यादित आरभ्य तस्यैवान्तपर्यंत वृद्धिरेव स्यात् । तत्र चतुर्थपंचमषष्ठकाला न प्रवर्तंते ॥८८३॥

पढमो देवे चरिमो णिरए तिरिए णरेवि छक्काला ।
तदियो कुणरे दुस्समसरिसो चरिमुवहिदीवद्धे ॥८८४॥

प्रथम देवे चरम निरये तिरश्चि नरेपि षट्काला ।
तृतीय कुनरे दुःषमसदृश चरमोदधिद्वीपार्धे ॥ ८८४ ॥

पढमो । देवगतौ प्रथमकालो वर्तते, नरके चरमकालो वर्तते, तिर्यग्गतौ मनुष्यगतौ च षट्काला वर्तंते, कुमनुष्यभोगभूमौ तृतीयकालो वर्तते, स्वयंभूरमणद्वीपार्धे तत्समुद्रे च दुःषमसदृश कालो वर्तते ॥ ८८४ ॥

एवं जम्बूद्वीपवर्णनं परिसमाप्य लवणाब्धिलवणसमुद्रमध्यस्थयोर्मध्यवर्ति प्राकारस्वरूपनिरूपणव्याजेन शेषद्वीपसमुद्रावस्थितान् प्राकारान् गाथाद्वयेन निरूपयति,—

चउगोउरसजुत्ता भूमिमुहे बार चारि अडुदया ।
सयलरयणप्पया ते वेकोसवगाढया भूमि ॥ ८८५ ॥

चतुर्गोपुरसंयुक्ताः भूमिमुखे द्वादश चत्वारः अष्टोदयाः ।
सकलरत्नात्मकास्ते द्विक्रोशावगाढा भूमौ ॥ ८८६ ॥

चउ । चतुर्गोपुरसंयुक्ताः [illegible] द्वादशयोजन [illegible] मुखे चतुर्योजनव्यासाः [illegible] अष्टयोजनोदयाः [illegible] [illegible] नात्मकास्ते भूमि द्विक्रोशावगाढा [illegible]

वज्जमयमूलभागा वेलुरियकयाइरम्मसिहरजुदा ।
दीवोवहिदाणमंतरालादो होति सम्वत्थ ॥ ८८६ ॥

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
[illegible] [illegible] [illegible] ॥ ८८६ ॥

वज्ज। वज्रमयमूलभागा वैडूर्यकृताग्रिमशिखरयुता प्राकारा वेदिका इत्यर्थः द्वीपान्तसमुद्रान्तनामके सर्वत्र भवति ॥ ८८६ ॥

अथ तेषां प्राकाराणामुपरि स्थितवेदिकां निरूपयति –

पायाराणं उवरिं पुह मज्झे पउमवेदिया हेमी।
बेकोसपणसयधणुतुंगा वित्थारया कमसो ॥ ८८७ ॥

प्राकाराणामुपरि पृथक् मध्ये पद्मवेदिका हैमी।
द्विकोशपञ्चशतधनुस्तुङ्गविस्तारा क्रमशः ॥ ८८७ ॥

पायाराणं। तेषां प्राकाराणामुपरि पृथक् पृथक् मध्ये द्विकोशोत्तुङ्गा पंचशतधनुर्व्यासा हैमी पद्मवेदिकास्ति ॥ ८८७ ॥

अथ वेदिकान्तर्बहिः स्थितवनादिकं गाथाचतुष्केण निवेदयति,—

तिस्से अंतो बाहिं हेमसिलातलजुद वण रम्म।
वावी पासादोवि य चित्ता अत्थंति तहिं वाणा ॥८८८॥

तस्या अन्तर्बहिः हेमशिलातलयुत वन रम्य।
वाप्य प्रासादा अपि च चित्रा आसते तत्र वाना ॥ ८८८ ॥

तिस्से। तस्याः पद्मवेदिकाया अन्तर्बहिः [illegible] वनमस्ति तत्र चित्रा वाप्यः प्रासादाश्च सन्ति [illegible]

वरमज्झजहण्णाणं वावीणं चाव [illegible] ॥
पण्णासूण कमसो गाढा सगवाससदसभागा ॥ ८८९ ॥

वरमध्यजघन्यानां वापीनां चापा [illegible] ।
पञ्चाशदून क्रमशो गाध [illegible] ॥ [illegible] ।

पित्वा ४५ तेन भक्त्वा शेषे ३/५ पञ्चभिरपवर्तिते सति २२२२३ इयमेकदिनस्य जलवातहानिवृद्धिप्रमाणं स्यात्। एवं लवणसमुद्रशिखायामितरतालद्वये च क्रमेण मध्यमशिखयोर्हानिवृद्धिक्रमो ज्ञातव्यः ॥ ८९९ ॥

एवं हानिवृद्धियुक्तस्य लवणसमुद्रस्य मुखव्यासमाह;—

पुण्णदिणे अमवासे सोलकारससहस्स जलउदओ ।
वास मुहभूमीए दससयसहस्सा य वेलक्खा ॥ ९०० ॥

पूर्णदिने अमावास्यायां षोडशैकादशसहस्रं जलोदयः ।
व्यासः मुखभूम्योः दशसहस्रं च द्विलक्षं ॥ ९०० ॥

पुण्ण । पूर्णिमादिने अमावास्यायां च यथासंख्यं षोडशसहस्र १६००० मेकादशसहस्रं च ११००० लवणे जलोदयः स्यात् तस्य षोडशसहस्रोदये मुखव्यासो दशसहस्र १०००० षोडशसहस्रोदयस्य १६००० एतावतो १६००० पंचसहस्रोदयस्य ५००० किमिति सपादयापवर्त्य गुणयित्वा [illegible] अपवर्त्य भक्ते सा ५० ३७१ अस्मिन् मुखव्यासे १०००० युक्ते [illegible] इदमेकादशसहस्रो ११० ० दय मुखव्यासः स्यात्। मुख्या [illegible] ॥

[illegible] तिर्यग्गतमाह,—

मुखव्यासा [illegible] माहप्पण संगुणियं ।
[illegible] अंतरयं ॥ ९०१ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ९०१ ॥

मुख [illegible] भूम [illegible] ८८०
[illegible]

पादचन्द्रदोस्तिर्यगंतरं स्यात् ॥ अमुमर्थं विवरयति—तन्मध्य ? मुखे १०००० भूमौ २ ल शोधयित्वा १९०००० अर्धीकृत्य ९५००० यथा देशावयोजनोदयस्य १६००० एतावद्धानौ ९५००० एक योजनोदयस्य किमिति त्रैराशापवर्तिते ६/१९ एकयोजनोदयहानि स्यात् । एक १ योजनोदयस्य एतावद्धानिश्चेत् ६/१९ एतावत ८०० किमिति सपास्य ... । ८८० षोडशाभिरपवर्तये ... । ५५ गुणयित्वा ५२२५ अत्र समुद्रवारमेत्र ३३०... अपनीय ४८९५ अनेन गृहीत्वा रविबिंबेन ... समच्छेदं कृत्वा ... अत्र बिंबे अपनीते ... चंद्रार्कयोस्तिर्यगंतरं स्यात् । तस्मात् एतावद्धतौ ... एकयोजनोदये एतावद्धतौ ३३०..., किमिति संपास्य चार क्षेत्रे ३३० रविबिंबेन समच्छेदीकृत्य योन्य मेलयित्वा ... एतद्धारस्य ९५ हारेण च १६ गुणयित्वा ... अनेन ... ५५ हाय ... चंद्रप्रणिधिजलपे जलोदय स्यात् । एतच्चोदय ८८० अपनीते ८२४ शेष ... चंद्रार्णवोर्ध्वांतरं स्यात् । संप्रति रवेस्तिर्यगंतरादिकमानीयते । एकयोजनादयस्य १ तदादेतावद्धतिश्चेत् ... एतावत ८०० किमिति सपास्य षोडशभिरपवर्तय ... । ५० गुणयित्वा ४७५० अत्र समुद्र चारं ३३०... अपनीते ४४१९... सति सूर्यार्णवतिर्यगंतरं स्यात् । चंद्रार्णवोर्ध्वांतरे ८२४ हो ... अशीति ८० योजने अपनीते ७४४ । ... सूर्यार्णवोर्ध्वांतरं स्यात् । अथ प्रसंगेन लवणसमुद्रस्थविसूर्यप्रणिधौ जलोदयं साध्यते । रविबिंबस्य व्यास ... द्विगुणीकृत्य ... तत्समच्छेदीकृते लवणव्यासे ... अपनयेत् । ... इदं सर्वांतराले स्यात् । द्वयोरंतरयोरेतावति क्षेत्र ... एकांतरस्य किमिति सपास्य द्वाभ्यामपवर्त्य ... भक्ते ९९९९९ भा ... इदं लवणसमुद्रीयसूर्ययोरंतरं स्यात् । अस्मिन्नर्धित ४९९९९ हो ... इदं लवणसमुद्रीयसूर्यस्याभ्यंतरं स्यात् । एतत्र समच्छेदीकृत्य स्वांशेन मेलयित्वा ... पश्चादेतावद्दायाम एकयोजनादयश्चेत एतावदायाम

$\frac{३०४११७५}{११}$ किमिति सपात्य हारस्य हारेण संगुण्य $\frac{४८७१११२१}{५७१५}$ मध्ये ८४७० शो $\frac{५७१६}{५७१५}$ सतीदं लवणसमुद्रीयमूर्ध्वप्रणिधौ जगोदयं स्यात् ॥ ९०१ ॥

इदानीं पातालानामन्तरालं निरूपयति,—

मज्झिमपरिधिचउत्थं विवरमुहं तंपि मज्झमुहमद्धं ।
सायगुणपणघणहीणं तं सयछव्वीसभाजिदे विरहं ॥९०२॥

मध्यमपरिधिचतुर्थं विवरमुखं तदपि मध्यमुखार्धं ।
शतगुणपञ्चघनहीनं तत् शतषड्विंशभाजिते विरहं ॥ ९०२ ॥

मज्झिम । लवणसमुद्रस्य मध्यव्यासस्य ३ ल स्थूलपरिधौ ९ ल चतुर्भिर्भक्ते सति दिग्गतपातालानां मुखान्मुखपर्यन्तक्षेत्रं स्यात् २२५००० इदं विगतमध्यं १ ल क्षेत्रं दिग्गतपातालयोर्मध्यान्तरं स्यात् १२५०००इदं विगतमुखं १०००० अत्र तयोः पातालयोर्मुखयोरन्तरं स्यात् २१५००० एतदेव विदिग्गतपातालमुख १००० हीनं २१४००० मध्येऽत्र विदि गतपातालस्याभयपार्श्वान्तरं स्यात् १७००० एतस्मिन् पुनः शतगुणि तपञ्चघने १२५०० हीने कृते १४५०० एतस्मिन् षड्विंशशताधिकेन १२६ भक्ते इत्येतानि दिग्विदिग्गतपातालानां मध्यान्तराणि स्यात् ७५० ॥ ९०२ ॥

[illegible]

[illegible] बाहिर सिहरं ।
[illegible] लवणं ॥ ९०३ ॥

[illegible]

[illegible] ॥ ९०३ ॥

रिमजलोदययोर्यागे जलप्रमितत्तद्वीपोदय जलादुपरि ते द्वीपा समेद्विध एकयोजनोदया तदेकयोजनमपि जलगतोदये मिलिते सर्वोदय स्यात् । लब्ध ९० द्वो ९५/२ । ९० द्वो ९५/२ । ९९ द्वो ९९/२ । १०८ द्वो ९९/२ एवमुक्तविधान सर्व कौस्तुभादिष्वपि द्रष्टव्यम् ॥ ९१५ ॥

इदानीं तेषु भोगभूमिषु उत्पन्नानां मनुष्याणामाकृतिं तत्स्थान गाथाद्वकेनाह।–

एगुरुगा लंगलिगा वेसणगा भासगा य पुव्वादी ।
सक्कुलिकण्णा कण्णप्पावरणा लंबकण्ण ससकण्णा ९१६

एकोरुका लाङ्गलिका वैषाणिका अभाषका च पूर्वादिषु ।
शष्कुलिकर्णा कर्णप्रावरणा लम्बकर्णा शशकर्णा ॥ ९१६ ॥

एगुरु । एकोरुका लाङ्गलिका पुच्छवत इत्यर्थ वैषाणिका शृंगिण इत्यर्थ अभाषका एते यथासख्य पूर्वादिदिक्षु तिष्ठति । शष्कुलिकर्णा कर्णप्रावरणा लम्बकर्णा शशकर्णा एते विदिक्षु तिष्ठति ॥ ९१६ ॥

सिंहस्ससाणमहिसवराहमुहा वग्घघूयकपिवदणा ।
झसकालमेसगोमुहमेघमुहा विज्जुदप्पणिभवदणा ९१७

सिंहाश्वश्वमहिषवराहमुखा व्याघ्रघूककपिवदना ।
झषकालमेषगोमुखमेघमुखा विद्युद्दर्पणेभवदना ॥ ९१७ ॥

सिंह । सिंहमुखा अश्वमुखा श्वानकमुखा महिषमुखा व्याघ्रमुखा घूकवदना कपिवदना इत्यष्टौ ८ झषमुखा कालमुखा मेषमुखा गोमुखा विद्युद्वदना दर्पणवदना इभवदना इत्यष्टौ ८ ॥ ९१७ ॥

[illegible] सक्कुलिकण्णादी सिंहवदणणरपमुहा ।
[illegible] अंतरे णेया ॥ ९१८ ॥

रिमजलोदययोर्योगे जलममित्तत्तद्द्वीपोदय जलादुपरि ते द्वीपा सर्वेदिक्षु एकयोजनोदया तदेकयोजनमपि जलगतोदये मिलिते सर्वोदय स्यात्। लब्ध ९० शे $\frac{१}{९६}$ । ९० शे $\frac{१}{९६}$ । ९९ शे $\frac{८}{१६}$ । १०८ शे $\frac{४८}{९६}$ एवमुक्त-विधान सर्वं कौस्तुमादिष्वपि द्रष्टव्यम् ॥ ९१५ ॥

इदानीं तेषु भोगभूमिषु उत्पन्नानां मनुष्याणामाकृतिं तत्स्थान गाथार्धं चक्रेनाह;—

एगुरुगा लंगलिगा वेसणगा भासगा य पुव्वादी ।
सक्कुलिकण्णा कण्णप्पावरणा लंबकण्ण ससकण्णा९१६

एकोरुका लाङ्गलिका वैषाणिका अभाषका च पूर्वादिषु ।
शाष्कुलिकर्णा कर्णप्रावरणा लम्बकर्णा शशकर्णा ॥ ९१६ ॥

एगुरु । एकोरुका लाङ्गलिका पुच्छवत इत्यर्थ वैषाणिका शृङ्गिण इत्यर्थ अभाषणा एते यथासंख्य पूर्वादिदिक्षु तिष्ठति । शष्कुलिकर्णा कर्णप्रावरणा लम्बकर्णा शशकर्णा एत विदिक्षु तिष्ठन्ति ॥ ९१६ ॥

सिंहस्समाणमहिसवराहमहा वग्घघूयकपिवदणा ।
झसकालमसगामुहमघमुहा विज्जुदप्पणिभवदणा ९१७

सिंहाश्ववदनामहिषवराहमुखा व्याघ्रघूककपिवदना ।
झषकालमेषगामुखमघमुखा विद्युद्दर्पणभवदना ॥ ९१७ ॥

सिंह । सिंहमुखा अश्वमुखा शुनकमुखा महिषमुखा व्याघ्रमुखा घूकवदन कपिवदना इत्यष्ट ८ झषमुखा कालमुखा मेषमुखा गोमुखा मघमुख वज्रवदना दर्पणवदना भवदन इत्यष्टौ ८ ॥ ९१७ ॥

अग्गिदिसादी सक्कुलिकण्णादी सिंहवदणपहुदिमुहा ।
णगुरुगमकालिमुहदिपहुदीणि अंतर पगार ॥ ९१८ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible]

सत्यां [illegible] च पंडुरओ ।
[illegible] ॥

[illegible]

[illegible] पुण्णा पुण्णापदा [illegible] ।
[illegible] ॥

[illegible]

[illegible] ।
[illegible] विदिया ॥

माणिकचंद-दिगम्बरजैनग्रंथमालासमिति ।

(ग्रन्थप्रकाशिनी सभाके सभ्य ।)



१ सर नाइट सेठ स्वरूपचन्द हुकमचन्द ।

२ राय बहादुर ,, तिलोकचन्द कल्याणमल ।

३ आकारजी कस्तुरचन्द ।

४ [illegible] ।

५ [illegible] ।

६ [illegible] ।

७ [illegible] ।

८ [illegible] ।

[illegible] ।

९ [illegible]

[illegible]